राधास्वामी दयाल की दया

राधास्वामी सहाय ।

सत्संग के उपदेश

भाग दूसरा

जिसको

प्रेमी परमार्थियों के हितार्थ

प्रेमी भाई ब्रजवासी लाल साहब, बी०ए०, एल्एल्० बी०,

एडवोकेट, हाई कोर्ट, ने

दयालबाग आगरा से प्रकाशित किया ।
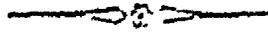
राधास्वामी सम्वत् १११

प्रथम बार]   सन् १९२८ ई०   [२००० पुस्तकें

पिछले साल "सत्संग के उपदेश" नाम की पुस्तक का पहला भाग प्रकाशित हुआ था। अब उस पुस्तक का दूसरा भाग प्रकाशित किया जाता है।

इस पुस्तक में वे वचन दर्ज हैं जो हुजूर साहब जी महाराज ने आम सत्सङ्ग में फ़रमाये और प्रेमप्रचारक की दूसरी व तीसरी जिल्द में वक़्तन् फ़वक़्तन् प्रकाशित हुए। चूँकि प्रेम-प्रचारक की भाषा उर्दू थी इसलिये इन वचनों में प्रायः फ़ारसी व अरबी शब्दों का इस्तेमाल किया गया था लेकिन अब इन भाषाओं के कठिन शब्दों को निकाल कर हिन्दी भाषा के प्रचलित शब्द इस्तेमाल किये गये हैं ताकि हिन्दी जानने वाले भाइयों को वचनों का अर्थ समझने में आसानी रहे।

इन वचनों के अन्दर न सिर्फ़ सन्तमत का मुख़्तलिफ़ पहलुओं से निर्णय किया गया है बल्कि ऐसे बहुत से एतराज़ों के जवाब भी दिये गये हैं जो सच्चे मुतलाशियों के हृदय में परमार्थी तहक़ीक़ात करते वक़्त पैदा होते हैं इसलिये उम्मीद की जाती है कि यह भाग भी पहले भाग की तरह नये सत्सङ्गी भाइयों व नीज़ शौक़ीन मुतलाशियों के लिये निहायत मुफ़ीद साबित होगा।

—प्रकाशक।

राधास्वामी सहाय।

सूचीपत्र

सत्सङ्ग के उपदेश।

भाग दूसरा।

राधास्वामी दयाल की दया

राधास्वामी सहाय

सत्सङ्ग के उपदेश

भाग दूसरा

वचन (१)

सत्सङ्ग की शिक्षा के लिये अधिकारी कौन है ?

देखने में आता है कि दुनिया में कहीं तो काँटेदार झाड़ियाँ उगती हैं जिनमें न फूल निकलते हैं न फल लगते हैं, जिनसे न किसी को साया मिलता है और न ही किसी क़िस्म का आराम पहुँचता है। ये झाड़ियाँ सिर्फ़ इस क़ाबिल होती हैं कि इनको काट कर भाड़ में झोंक दिया जावे और मामूली ईंधन का काम लिया जावे लेकिन बर-ख़िलाफ़ इसके कहीं पर फलदार वृक्ष पैदा होते हैं जिनसे वक़्त मुनासिब पर इन्सान को साया और ठंडक मिलती है, जिनके फूलों की सुगन्धि से इर्द गिर्द का तमाम वायुमण्डल महक जाता है, जिनके फल खाकर बीसों इन्सान अपना पेट भरते हैं और फलों के रस का आनन्द लेते हैं, जिनकी शाख़ों पर बैठ कर परिन्दे चहकते हैं और ज़िन्दगी का लुत्फ़ उठाते हैं और जिनको ख़ुश्क हो जाने पर काट कर लोग शहतीर,

कड़ियाँ वग़ैरह बनाते हैं और बचे हुए कचरे से उम्दा ईंधन का काम लेते हैं; ग़रज़ेकि उनकी तमाम ज़िन्दगी दूसरों को सुख चैन पहुँचाने में सर्फ़ होती है और उनके जिस्म के हर एक जुज़ से दूसरों को नफ़ा व आराम पहुँचता है। वाज़ह हो कि इस क़िस्म का फ़र्क़ सिर्फ़ वनस्पतियों ही के अन्दर नहीं पाया जाता बल्कि जानदारों के अन्दर भी देखा जाता है। चुनाँचे एक जानिब तो शेर, भेड़िये वग़ैरह दरिन्दे हैं जो सिवाय ग़रीब व मिस्कीन जानवरों को चीरने फाड़ने के और कोई काम नहीं करते और दूसरी जानिब गाय, बकरी वग़ैरह ग़रीब जानवर हैं जो मुट्ठी भर घास खाकर हमारे लिये दूध, घी, मक्खन वग़ैरह अशिया मुहय्या करते हैं और जिनके जिस्म का हर हिस्सा इन्सान के लिये लाभदायक होता है। इसी तरह इन्सानों के अन्दर भी बाज़ तो ख़ूँख़्वार, बेरहम और शरारती होते हैं और बाज़ कोमलचित्त और दयावान् पुरुष होते हैं जो रात दिन मेहनत मुशक़्क़त करके चार पैसे कमाते हैं और अपनी कमाई में से काफ़ी हिस्सा दूसरों की ज़रूरियात पूरा करने और दूसरों को सुख पहुँचाने में सर्फ़ करते हैं। ऐसे सज्जनों के प्रताप से हर शहर व क़स्बे के अन्दर जाबजा कुएँ, तालाब, मन्दिर, मसजिद, गुरुद्वारे, धर्मशालाएँ, लंगर, सदाव्रत, स्कूल, कॉलिज, यतीमख़ाने, गोशालाएँ वग़ैरह फ़ैज़े आम के असबाब देखने में आते हैं। इन्हीं सज्जन पुरुषों में से चन्द ऐसे प्रेमी जन निकलते हैं जो घण्टे आध घण्टे एकान्त स्थान में बैठ कर अपने परम पिता सत्य कर्तार की भजन-बन्दगी करते हैं। कोई माला फेर कर जप करता है, कोई मन ही मन में किसी मन्त्र या पवित्र वाणी का पाठ करता है, कोई मानसी ध्यान लगाता है और कोई मज़हबी ग्रन्थों का विचार या गान

करता है। ऐसे सज्जन पुरुषों की मदद करने और उनको सीधा रास्ता बतलाने के लिये संसार में वक़्तन् फ़वक़्तन् साध सन्त तशरीफ़ लाते हैं और जो ख़ुशी इनको ऐसे पुरुषों से मिल कर होती है उसका कोई हद व हिसाब नहीं है और जैसी दया महापुरुष इन सज्जनों पर फ़रमाते हैं उसका भी बयान में लाना नामुमकिन है। वाज़ह हो कि सन्तों के उपदेश और शिक्षा की क़दर और सन्तों की उच्च गति की परख पहिचान ऐसे ही सज्जनों की समझ में आती है। और यह कोई नई बात नहीं है क्योंकि फूल की क़दर बुलबुल ही कर सकती है न कि मामूली चिड़िया और ज्योति की क़दर परवाना ही कर सकता है न कि मामूली मक्खियाँ।

वचन (२)

सत्सङ्ग की तरक़्क़ी हुज़ूर राधास्वामी दयाल की दया पर निर्भर है।

हमें याद रखना चाहिये कि ज्यों ज्यों सत्सङ्ग की तरक़्क़ी होगी त्यों त्यों सत्सङ्ग के प्रेमियों व नीज़ दुश्मनों की तादाद में इज़ाफ़ा होता रहेगा और दुश्मन हमें कई सूरतों से नुक़्सान व ज़ोफ़ पहुँचाने की फ़िक्र व कोशिश करेंगे लेकिन सबसे ज़बरदस्त घात हमारे लिये वह होगी जिससे हम अपने आदर्शों से गिरकर दुनियादारों के से ढंग इख़्तियार करने लगें। वाज़ह हो कि हमें झूठी बदनामी या नेकनामी की मुतलक़ परवा नहीं करनी चाहिये और न ही किसी शख़्स या जमाअत की मदद इमदाद की परवा करनी चाहिये। हमें ख़्याल इस बात का होना चाहिये

कि काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, ईर्षा, विरोध वग़ैरह अंगों का हमारी तबिअत पर ग़लबा न होने पावे और हम सच्चे भक्तों की तरह दीनता व मज़बूती के साथ अपने जुम्ला ज़रूरी फ़रायज़ अदा करते रहें। चन्द रोज़ हुए अमृतसर के एक अख़बार ने हमें मश्वरा दिया कि मज़हब की तरक़्क़ी गवर्नमेन्ट की मुख़ालिफ़त से हुआ करती है और सुबूत में उसने आर्य्यसमाज की मिसाल पेश की। हमें इस मोअज़्ज़िज़ अख़बार की राय के साथ इत्तिफ़ाक़ नहीं है और न ही हम यक़ीन करते हैं कि आर्य्यसमाज ने तरक़्क़ी गवर्नमेन्ट की मुख़ालिफ़त से हासिल की है। हमारी राय में आर्य्यसमाज की तरक़्क़ी का राज़ इस जमाअत के बानी व प्रेमियों की पाक रहनी गहनी व कुरबानियाँ हैं। तवारीख़ भी यही बतलाती है कि हमेशा से अवाम पर मिसाल का भारी असर पड़ता रहा है। यह दुरुस्त है कि किसी राजा या बादशाह के कोई मज़हब इख़्तियार कर लेने पर उसके पैरवों की तादाद में नुमायाँ इज़ाफ़ा होगया लेकिन क्या महज़ पैरवों की तादाद में इज़ाफ़े से मज़हब की तरक़्क़ी होती है? कम अज़ कम हमें इस क़िस्म की तरक़्क़ी मंजूर नहीं है। हमारी यही ख़्वाहिश है कि सत्सङ्गमण्डली के अन्दर चाहे थोड़े लोग शरीक हों लेकिन ऐसे हों जो सच्चे मालिक के दर्शन व दीदार के तालिब हों, जो सुरत-शब्द-योग करने के लिये मुस्तैद हों, जिनके दिल में संसार व संसार के राज पाट व भोग विलास की हविस न हो और जो सच्चे मालिक की सेवा के निमित्त अपना तन मन धन कुरबान करने के लिये तैयार हों। ज़ाहिर है कि अवाम के अन्दर या ज़्यादा तादाद

में लोगों के अन्दर इस क़िस्म के ख़्यालात व जज़्बात न किसी राजा की मुख़ालिफ़त से और न किसी बादशाह की शमूलियत से पैदा हो सकते हैं। हमारा यह भी ख़्याल है कि हरचन्द किताबों का पढ़ना व लेक्चरों व उपदेशों का सुनना इन्सान के लिये मुफ़ीद हैं लेकिन कोरे पढ़ने व सुनने से भी मन के अन्दर मज़कूरावाला ख़्यालात व जज़्बात का क़ायम हो जाना नामुमकिन है। ये बातें ख़ुद मन के अन्दर उपजने से क़यामपज़ीर होती हैं और बाहर से दाख़िल किये जाने पर इनका मन के अन्दर अर्से तक ठहराव मुमकिन नहीं इसलिये किसी सत्सङ्गी भाई को ज़रा भी यह कोशिश न करनी चाहिये कि फ़लाँ अमीर कबीर या ओहदेदार को समझा बुझा कर सत्सङ्ग में दाख़िल करावे या ख़ुद किसी क़िस्म की पोलिटिकल तहरीक में शामिल होकर और लाफ़ज़नी व ज़बाँदराज़ी अपना शेवा बनाकर सत्सङ्ग की शोहरत व तरक़्क़ी का बायस बने। हमारे लिये यही मुनासिब है कि हर सत्सङ्गी अपनी रहनी गहनी दुरुस्त रक्खे और सच्चे कुल मालिक की दया व मेहर का मुन्तज़िर रहे। अगर हमारी जमाअत महज़ मन व बुद्धि से काम लेकर चाल चल रही है तो यक़ीनन् हमें बतौर एक मज़हबी जमाअत के एक दिन भी ज़िन्दा रहने का हक़ हासिल नहीं है और जितना भी जल्द हमारी जमाअत शिकस्त हो जाय बेहतर है लेकिन अगर हम लोग राधास्वामी दयाल के महज़ औज़ार बन कर काम कर रहे हैं, और राधास्वामी नाम सच्चे कुल मालिक का नाम है जो सब जगत् का सच्चा पिता है और चेतन शक्ति का भण्डार है, तो न कोई शख़्स हमारी तरक़्क़ी को रोक सकता है और न ही

कोई जमाअत या गिरोह हमारा असली नुक़सान कर सकता है। अलबत्ता अगर हम खुद अपने आदर्शों से गिर जायँ और सच्चे कुल मालिक से मुँह फेर लें और बावजूद बार बार आगाह किये जाने के अपनी जहालतों से बाज़ न आयें तो मजबूरन् कुल मालिक हमें नज़र अन्दाज़ करके दूसरों से अपनी पवित्र सेवा लेने लगेगा।

बचन (३)

आप किस मत के अनुयायी हैं ?

यह सच है कि दूसरे भाइयों ने बारहा आपसे यह सवाल दर्याफ़्त किया और ऐसे मौक़ों पर आपने फ़िलफ़ौर किसी मत या मज़हब का नाम बतला कर साइल की तशफ़्फ़ी कर दी मगर ग़ालिबन् आपने खुद कभी अपने मन से यह सवाल पूछ कर जवाब हासिल न किया होगा। वाज़ह हो कि किसी मत का पैरो कहलाने का मुस्तहक़ होने के लिये ज़रूरी है कि आप उसकी तालीम और उसूलों पर अमली तरीक़ से कारबन्द हों। यह दुरुस्त है कि हर इन्सान के लिये मुमकिन नहीं है कि हमेशा व हर हालत में वह अपनेतईं किसी ख़ास रास्ते पर चला सके व ख़ास उसूलों व तालीम का पाबन्द रह सके मगर किसी मत का पैरो कहलाने के लिये लाज़िमी है कि वह ज़्यादातर मौक़ों पर अपनी तबियत क़ाबू में रखते हुए उस मत के उसूलों पर कारबन्द रहे और जब कभी मन के कमज़ोरी दिखलाने पर या बरदाश्त से बाहर सूरतों के नमूदार होने पर वह उसूलों से गिर जाय तो कमज़ोरी या ग़लती के महसूस होते ही सच्चे दिल से

झुरे व पछतावे। यह मुमकिन है कि हर मौक़े पर उसको अपनी ग़लती व कमज़ोरी का इल्म न हो और जब तब इनका ज्ञान होने पर भी वह किसी वजह से शर्मिन्दा व पशेमान न हो लेकिन सच्चे प्रेमी जन के लिये ज़रूरी है कि ग़लती व ठोकर खाजाने के मौक़ों पर अक्सर अपनी ग़लती व कमज़ोरी से बाख़बर हो और उसका इल्म होने पर झुरे व पछतावे। हमारी राय में इन शर्तों की पाबन्दी न करता हुआ कोई शख़्स अपनेतई किसी मत का पैरो कहने का मुस्तहक़ नहीं है और अगर कोई सीनाज़ोरी करके अपने हक़ से बाहर क़दम रखता है तो न सिर्फ़ एक नावाजिब हरकत करता है बल्कि जिस मत से वह अपना तअल्लुक़ ज़ाहिर करता है उसे बदनाम करता है। मसलन् ऐसे बहुत से लोग मिलेंगे जो एक ईश्वर, परमात्मा या खुदा में एतक़ाद ज़ाहिर करते हैं और उस ईश्वर को सर्वव्यापक मानते हैं और आत्मा की हस्ती में विश्वास रखते हुए उसको इन्सानी वजूद का असली जौहर तसलीम करते हैं और खास पवित्र ग्रन्थ या प्राचीन बुज़ुर्गों में श्रद्धा ज़ाहिर करते हैं और इनकी बुज़ुर्गी व महिमा का पक्ष लेकर दूसरे मतों की पवित्र पुस्तकों और बुज़ुर्गों की दिन रात नुक्ताचीनी करते हैं लेकिन ख़ुद न अपने पवित्र ग्रन्थों के समझने की क़ाबिलियत, न अपने बुज़ुर्गों की सी रहनी गहनी इख़्तियार करने का शौक़ रखते हैं और न ईश्वर व आत्मा के साक्षात्कार करने के लिये कोई कोशिश व यत्न करते हैं बल्कि अगर कोई इनके दायरे से बाहर का यत्न बतलाने वाला शख़्स मिल जावे तो उसकी बात समझना तो दरकिनार, सुनने के लिये भी तयार नहीं हैं। वे ऐसे शख़्स की मौजूदगी से यही नतीजा निकालते हैं कि बस, हमारा मज़हब झूठा होगया और

जिन बुज़ुर्गों में उन्हें एतक़ाद है उनका दर्जा नीचा होगया। ग़ौर करना चाहिये कि ऐसे लोग जिस मत या बुज़ुर्गों या पवित्र ग्रन्थों का नाम लेते हैं व ज़ाहिरा पक्ष करते हैं, किस बुनियाद पर वे उनके पैरो क़रार दिये जा सकते हैं। मगर हमारा काम दूसरे लोगों की ग़लतियाँ दिखलाना नहीं है। हमारा काम अपने हमख़्याल भाइयों को मन की ग़लत चाल से आगाह करना है। हमारी राय में ईश्वर व आत्मा की हस्ती में विश्वास और प्राचीन बुज़ुर्गों व ग्रन्थों में श्रद्धा रखना उसी शख़्स के लिये जायज़ व मुफ़ीद है जो इन ग्रन्थों के अर्थ समझने वाले पुरुषों की ख़िदमत में हाज़िर रहकर उस साधन यानी अमली काररवाई से वाक़फ़ियत हासिल करे जिनका इन पवित्र ग्रन्थों में ज़िक्र है और जिनपर प्राचीन बुज़ुर्गों ने अमल करके उच्च गति हासिल की और जीते जी आत्मदर्शन व परमात्मदर्शन की झलक पाकर अपने मनुष्यजन्म को सफल किया।

सवाल होता है कि क्या जीव को इस क़िस्म के दर्शन प्राप्त हो सकते हैं ? जवाब यह है कि ज़रूर बिल ज़रूर हो सकते हैं और अगर दुनिया में कोई भी आस्तिक मत सच्चा है और किसी भी ऐसे मत के बुज़ुर्ग या बुज़ुर्गान् के कलाम ज़ाती तजरुबे की बुनियाद पर क़ायम हैं तो हमारा जवाब तसदीक़ का मोहताज नहीं रहता। मगर वाज़ह हो कि इन दर्शनों की प्राप्ति के लिये पवित्र ग्रन्थों का पढ़ना, समझना, लेक्चरों व उपदेशों का सुनना व मनन करना प्राचीन बुज़ुर्गों में श्रद्धा व एतक़ाद रखना एक हद तक तो मुफ़ीद व ज़रूरी है लेकिन काफ़ी नहीं है। इसके लिये ऐसे अन्तरी साधन यानी अन्दरूनी अमल की ज़रूरत है कि जिससे आपकी चश्मे बातिन यानी दिव्य चक्षु जागे। यह काम इन चर्मेन्द्रियों और विद्या

बुद्धि की बातों से सरअंजाम नहीं पा सकता। थोड़ा तबियत पर ज़ोर देकर और मन को समझा कर किसी आलिमें बाअमल की शरण इख़्तियार करो और अगर आपको यह दौलत पहले से मुयस्सर है तो श्रद्धा के साथ उनकी हिदायात पर अमल करो और उनको अपना सच्चा शुभचिन्तक समझ कर उनके साथ सच्ची मुहब्बत क़ायम करो और प्रेम व प्रीति से उनकी बतलाई हुई अभ्यास की युक्ति की कमाई करो। यही आपका मज़हब होना चाहिये। इसी रास्ते पर चलकर आप एक दिन अपनी दिली आरज़ू पूरी कर सकते हैं वरना फ़िज़ूल बहस मुबाहसों व लड़ाई झगड़ों में आपकी प्यारी उम्र ज़ाया हो जायगी और दुनिया से कूच करते वक़्त सिवाय दुश्मनी, कीना व हसद के और कोई सामान हमराह लेजाने के लिये जमा न होगें। क्या सचमुच इन्हीं चीज़ों की फ़राहमी के लिये मनुष्यशरीर धारण किया था? और क्या इन्हीं की तलाश में मज़हब की शरण ली थी? आज अपने मन से ज़रूर पूछो और उसको जवाब देने के लिये मजबूर करो कि तुम किस मत के पैरो हो? अगर अपनी ग़लती महसूस हो तो मत घबराओ। अब भी सँभल जाने के लिये बहुत वक़्त है। इस पर सवाल होता है कि आलिमे बाअमल को कहाँ ढूंढें? जवाब यह है कि अव्वल अपने आस पास ही तलाश करो यानी जिस संग व सोहबत में शरीक होते हो या जिस मज़हब में आपको एतक़ाद है अव्वल उसी के अन्दर तलाश करो। अगर वहाँ न मिलें तो जिस संग या सोहबत में या मज़हबी जमाअत में मिल जाने का गुमान हो वहाँ तलाश करो और अगर वहाँ भी नाकामयाब रहो तो राधास्वामीसत्सङ्ग का दरवाज़ा खुला है, उस जानिब क़दम बढ़ाओ।

मगर फिर सवाल होता है कि किस मुक़ाम के राधास्वामी सत्सङ्ग में तलाश की जावे ? इसका जवाब ऊपर आगया है यानी अव्वल अपने आस पास के सत्सङ्ग में, फिर जिस सत्सङ्ग में अभिलाषा पूर्ण होने की उम्मीद हो और बाद में बाक़ी मुक़ामात में जाकर । ऐसा करने में जिज्ञासु को किसी क़दर तकलीफ़ तो होगी मगर क्या किया जाय, दूसरा कोई इलाज ही नहीं है । बग़ैर मशक़्क़त व तकलीफ़ के कोई भी बड़ा काम सरअंजाम नहीं पाता है। सच्चे मालिक के दर्शन और जीव के कल्याण की प्राप्ति की यही क़ीमत मुक़र्रर है। जिज्ञासु को चाहिये कि इसके अदा करने में तअम्मुल न करे ।

बचन (४)

भक्ति-माहात्म्य ।

हुज़ूर स्वामीजी महाराज ने अपने एक शब्द में भक्ति का माहात्म्य हस्ब ज़ैल फ़रमाया है:-(देखो सारबचन नज़्म, बचन १२, शब्द पहिला)

"ऐ भाई! अब भक्तिमाहात्म्य श्रवण करो जैसा कि सब सन्तों ने ज़ाहिर फ़रमाया है। भक्तिमार्ग ही गुरुमत है, इसके अलावा जितने मत हैं असत्य बातों में उलझ रहे हैं। भक्ति से ख़ाली होने की वजह से सबके सब बिल्कुल थोथे हैं । वे बशक्ल उस छिलके के हैं जिसके अन्दर कोई मग़ज़ या गूदा नहीं हैं इसलिये तुम्हें चाहिये कि चतुराई छोड़कर भक्तिमार्ग दृढ़ता के साथ इख़्तियार करो। भक्ति, इश्क़ व प्रेम ये तीनों हममानी लफ़्ज़ हैं। इनमें हक़ीक़तन् कोई फ़र्क़ नहीं। भक्ति का तरीक़ ही गुरुमत है। इसके

अलावा जितनी बातें हैं मन की ईजादें हैं। आत्मा व परमात्मा दोनों प्रेम-रूप हैं और सत्यपुरुष का रूप भी प्रेम ही है। भक्ति और भगवन्त यानी प्रेम और प्रीतम भी एक ही हैं और सतगुरु जो तुम्हें भक्तिरीति का उपदेश फ़रमाते हैं वह भी प्रेमरूप ही हैं। इनके ज़ाहरी हाड़,मांस, चाम के शरीर के अन्दर प्रेम ही की शक्ति विराजमान है। ऐ अज़ीज़! तेरा असली रूप भी प्रेम ही है और तेरे सिवाय जितने भी जीव हैं उन सबका भी वही रूप है। अलबत्ता इसमें एक फ़र्क़ बतलाने के लायक़ है यानी यह कि कहीं पर तो वह प्रेम बूंद यानी क़तरे के बराबर है और कहीं पर लहर या धार की हैसियत रखता है। मसलन् जीव के अन्दर सुरत प्रेम की बूंद है और ब्रह्म के अन्दर प्रेम की लहर है। कहीं पर वह सिन्धु यानी समुद्र की शक्ल में है (जैसे सन्तों के अन्दर) और कहीं पर सोत पोत यानी भण्डार की सूरत में (जैसे कुल मालिक में)। इस फ़र्क़ की वजह से कहीं (यानी जीव के अन्दर) इच्छा यानी नफ़सानी ख्वाहिशात का ज़ोर है और कहीं (यानी ब्रह्म में) माया का ग़लबा है। एक मुक़ाम पर (यानी सत्यलोक में) माया निहायत ख़फ़ीफ़ है और वहाँ प्रेम का वजूद सिन्धरूप होने से शुद्ध हो गई है मगर सोत पोत यानी निज भण्डार में माया का नाम व निशान भी नहीं है और वहाँ भरपूर प्रेम ही प्रेम है। इस प्रेम के भण्डार का वारपार नहीं। न इसका आदि है,न अन्त है। यह बेहद और बेहिसाब है। इस भंडार में सिवाय सन्तों के दूसरा कोई नहीं पहुँच सकता। सतगुरु सन्त ही यहाँ आसन जमाते हैं। प्रेम या भक्ति की ऐसी महिमा है। जो प्रेम के मार्ग पर चलते हैं उनको यह उच्च गति प्राप्त होती है। तुम्हें चाहिये कि इस अमृत के भण्डार को हासिल करो। इसके लिये मुनासिब है कि अव्वल गुरु महाराज की सच्चे दिल से

भक्ति करो और बाद में सुरत-शब्द-योग का साधन सीख कर नाम यानी अनहद शब्द की पहिचान करो और फिर बार बार आरती करके यानी दृष्टि जोड़ कर गुरु महाराज की दया व प्रसन्नता प्राप्त करो और उनसे प्रेम की दौलत हासिल करो। राधास्वामी दयाल फ़रमाते हैं कि जब इस तरीक़े पर अमल करोगे तब तुम्हें भक्ति या सच्चे प्रेम की बख़्शिश हासिल होगी। मतलब यह है कि हरचन्द इन्सान के लिये यह मुमकिन नहीं है कि ग़ायब का ध्यान करके और अपने तौर पर हाथ पावँ चलाकर इस रास्ते को तय कर ले लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि अपने तौर पर हाथ पावँ चलाना या सच्चे कुल मालिक का खोज करना कोई बुरी बात है। मन्शा यह है कि जबकि आत्मा, परमात्मा, सत्य पुरुष और कुल मालिक सबके सब प्रेमरूप हैं तो आत्मा के कुल मालिक के साथ वस्ल हासिल करने का तरीक़ा भी प्रेम ही हो सकता है क्योंकि वहाँ पर यानी कुल मालिक के धाम में सिवाय प्रेम के और कुछ नहीं है और न ही किसी और चीज़ का वहाँ दख़ल हो सकता है। तुम्हारी सुरत या आत्मा चूँकि प्रेमरूप है, वह अलबत्ता वहाँ दख़ल हासिल कर सकती है लेकिन इसके लिये तुम्हें प्रेम या भक्ति-मार्ग पर चलना होगा। अगर कोई शख़्स अपनी जानिब से यानी जिस क़दर रोशनी व तजरुबा उसको हासिल है उसका मुनासिब व निष्पक्ष इस्तेमाल करता हुआ चलता है तो सच्चा कुल मालिक देर अबेर दया फ़रमा-कर उसको ज़रूर सच्चे सतगुरु से मिला देगा और तब वह शख़्स निहायत ख़ुशी के साथ उनकी हिदायात पर अमल करता हुआ एक दिन अपनी दिली मुराद हासिल कर लेगा। ग़रज़ेकि सिवाय भक्तिमार्ग के सच्चे कुल मालिक के हुज़ूर में बारयाब होने के लिये दूसरा कोई रास्ता नहीं है।

वचन (५)

सत्य असत्य निर्णय की रीति।

बाज़ असहाब, जो किसी न किसी मज़हबी जमाअत से तअल्लुक़ रखते हैं, ज़ोर के साथ यह कहते सुनाई देते हैं कि सत्य व असत्य यानी सच व झूठ का निर्णय करना उनका परम धर्म है। अगर वाक़ई कोई शख़्स इस उसूल पर अमल करता है तो वह निहायत ही मुबारक इन्सान है और उसके प्रताप से अनेक जीवों को भारी लाभ पहुँच सकता है लेकिन मुश्किल यह है कि इनमें अक्सर ऐसे लोग देखे जाते हैं जो अपने-तईं अक़्लेकुल (सर्वज्ञ) और दूसरे मज़ाहिब के पैरवान को अक़्लेजुज़ व नादान समझते हैं और जब किसी दूसरे मज़हब के बुज़ुर्ग की महिमा व बड़ाई इनके कान में पहुँचती है तो एकदम इनका खून उबलने लगता है और हरचन्द मुँह से तो यही कहते हैं कि हम सत्य असत्य का निर्णय किया चाहते हैं मगर असली मन्शा उनकी दूसरे के ख़्यालात व उसूलात का खून करके अपनी बड़ाई दिखलाना होता है। वाज़ह हो कि सत्य असत्य का निर्णय सिर्फ़ दो ही सूरतों से हो सकता है:—एक तो यह कि आप किसी अपने से बढ़कर क़ाबिल व तजरुबेकार शख़्स के पास जिज्ञासु बनकर जावें और जो ख़्यालात अपने दिल में क़ायम किये हैं उनको बशर्ते इजाज़त उनकी ख़िदमत में पेश करें और सलाह माँगें और जो जवाब मिले उसपर बख़ूबी विचार करें और विचार के बाद जो शङ्काएँ पैदा हों उनको सलीक़े के साथ गोशगुज़ार करें और इस तरह जब तक सब शङ्काएँ रफ़ा न हो जायँ या जब तक वे बुज़ुर्ग सवाल करने

से मना न फ़रमावें या जवाब देने से इन्कार न करें सवाल व जवाब का सिलसिला बराबर जारी रक्खें । मौलानाए रूम फ़रमाते हैं:—

'हर चे गोई शक्को इस्तफ़सार गो ।
बाशहंशाहाँ तू मसकींवार गो ।'

अगर किसी शख़्स की निस्बत आपको पुख़्ता यक़ीन है कि वह क़तई ग़लत रास्ते पर चल रहा है तो आपका उसके पास जिज्ञासु बनकर जाना महज़ लाहासिल है । आपको हर्गिज़ ऐसे शख़्सों के पास बतौर जिज्ञासु जाना नहीं चाहिये ।

दूसरी सूरत यह है कि कोई शख़्स आपको बुज़ुर्ग समझ कर अपने शकूक रफ़ा करने की ग़रज़ से आपके पास आता है और सत्य असत्य का निर्णय करने के लिये आप की मदद का तलबगार होता है तो इस सूरत में आपके लिये मुनासिब है कि अव्वल यह देख लें कि आया आने वाला जिज्ञासु बनकर आया है या अपनी लियाक़त व मशी-ख़त दिखलाना चाहता है । पहली हालत में जहाँ तक आप से मुमकिन हो अपना वक़्त व तवज्जुह देकर जिज्ञासु की मदद करें लेकिन दूसरी हालत में आपको बात चीत करने से इन्कार कर देना मुनासिब है । मगर तमाशा यह है कि बहुत से असहाब इन सब बातों को नज़रअन्दाज़ करके दूसरों के साथ ज़बरदस्ती शास्त्रार्थ में जुट जाते हैं और नतीजा यह होता है कि घण्टों बल्कि दिनों के बहस मुबाहसे के बाद मुआमला जहाँ का तहाँ ही रहता है और फ़रीक़ैन के दिल में नाहक़ रंजिश पैदा हो जाती है । सच तो यह है कि इस वृत्ति के असहाब न तो अपने दिल में सत्य असत्य के निर्णय की ख़्वाहिश ही रखते हैं और न ही उनको निर्णय का

ढंग आता है और शास्त्रार्थ के वक़्त के अलावा उनको न अपने मज़हब के आदर्शों से कोई वास्ता और न मज़हब की तालीम से कोई सरोकार रहता है। अपना दिल खुश करने के लिये अलबत्ता वक़्तन् फ़वक़्तन् वे यह कहा करते हैं कि हमारे बरसेर आम निर्णय करने से बहुत से लोगों को भारी नफ़ा पहुँचता है। वाज़ह हो कि यह कथन भी उनका दुरुस्त नहीं है। दूसरों के लिये सत्य असत्य का निर्णय वह करे जिसने अव्वल अपने लिये निर्णय करके सत्य को भली प्रकार ग्रहण कर लिया है और जबकि कोई शख़्स खुद अँधेरे में है तो वह दलील व हुज्जत की मदद से दूसरों को रास्ता कैसे दिखला सकता है ?

बचन (६)

वासनाओं के ज़ोर से बचाव कैसे हो ?

'सुखसिन्ध की सैर का स्वाद तब पाइ है चाह का चौतरा भूल जावे।
बीज के माहिं ज्यों वृक्षविस्तार यों चाह के माहिं सब रोग आवे ।।
दृढ़ बैराग में होय आरूढ़ मन चाह के चौतरे आग दीजे।
कहैं कब्बीर यों होय निर्वासना तत्त सों रत्त होय काज कीजे ।।'

इस शब्द में कबीर साहब उपदेश करते हैं कि सुख के सागर की सैर का लुत्फ़ इन्सान को तब मिल सकता है जब वह चाह यानी वासना के चबूतरे पर बैठना छोड़ दे। जैसे बीज के अन्दर पेड़ का वजूद सूक्ष्म रूप से क़ायम रहता है ऐसे ही चाह के अन्दर सूक्ष्म रूप से सब फ़िसादों का मसाला मौजूद रहता है। मन के अन्दर दृढ़ बैराग्य करके और मज़बूती

से काम लेकर चाह के चबूतरे को जला दो और इस तरीक़ से निर्वासना यानी अचाह होकर और आत्मतत्त्व में रत होकर अपना काम बनाओ।

इसमें शक नहीं कि हर शख़्स की दिली आरज़ू यही है कि सच्चे व परम आनन्द के समुद्र में ग़ोता लगावे और जुमला तकलीफ़ात व आफ़ात से हमेशा के लिये रिहाई हासिल करे लेकिन यह गति हासिल करने के लिये सन्तमत की तालीम के बमूजिब अव्वल इन्सान को कोशिश करके अपने दिल से सांसारिक वासनाओं की मैल दूर करनी होगी। इसपर सवाल होता है कि वासनाएँ दिल से कैसे दूर हों ? वासनाएँ दृढ़ वैराग्य के ज़रिये दिल से दूर हो सकती हैं मगर दृढ़ वैराग्य कैसे पैदा हो ? इसके कई ज़रिये हैं—मसलन् अव्वल तो दुनिया के सामान से गहरा दुख पाकर या दूसरों को सख़्त तकलीफ़ में मुब्तिला देख कर इन्सान के दिल में वैराग्य पैदा होजाता है; दोयम् महापुरुषों के वचन वानी सुन कर दिल के अन्दर संसार की जानिब नफ़रत पैदा होजाती है; सोयम् पिछले जन्मों के संस्कारों के प्रकट होने पर या हाल के जन्म में कोई ग़ैरमामूली शुभ कर्म बनने से सच्चे मालिक की कृपा होजाने पर जब किसी के अन्दर सुमति जाग जाती है तो उसको सहज में दुनिया से वैराग्य होजाता है और चहारम् श्रद्धा व उमंग के साथ कुछ दिनों अन्तरी साधन करने पर ऊँचे घाट के रस व आनन्द के तजरुबात हासिल होने से इन्सान को आप से आप दुनिया के रस व भोगविलास फीके मालूम होने लगते हैं। मगर वाज़ह हो कि जब तक किसी जीव के सच्चे मालिक की कृपा शामिल हाल न होगी उस वक़्त तक उसके मन के अन्दर लगातार दृढ़ वैराग्य

क़ायम नहीं रह सकता क्योंकि न सिर्फ़ दुनिया के भोगविलास इन्सान की तवज्जुह को ज़ोर व शोर के साथ अपनी जानिब खींचते रहते हैं बल्कि सृष्टि के अन्दर काम करने वाली रचनात्मक धार भी, जिसका रुख़ बाहर व नीचे की जानिब है, रात दिन सब जीवों को जड़ पदार्थों की जानिब धकेलती रहती है इसलिये जीव बेचारा लाचार है, करे तो क्या करे। यही वजह है कि बहुत से ऋषियों, मुनियों व प्रेमी भक्तों की निस्बत पढ़ने व सुनने में आता है कि फ़ुलाँ मौक़े पर फ़ुलाँ शख़्स माया के फेर में आगया। ये अलफ़ाज़ पढ़कर मुतलाशी के दिल में अपने मुस्तक़िल-मिज़ाज रहने और मंज़िले मक़सूद पर पहुँचने की निस्बत भारी शुबहात पैदा हो सकते हैं लेकिन इसको चाहिये कि इन बातों से घबराये नहीं। पिछले ज़माने में जो बुज़ुर्ग ठोकर खाकर गिरे वे हमेशा के लिये नहीं गिरे और जब वे दोबारा सँभले तो आयन्दा गिरने न पाए। रास्ता चलते हुए जो शख़्स ज़ाती कमज़ोरियों की वजह से गिर जाता है उसके ज़िम्मे कोई दोष नहीं है। जो किसी वजह से घर के अन्दर चुपचाप बैठा रहता है और मार्ग चलने के लिये कोशिश नहीं करता है उसी के ज़िम्मे दोष रहता है। अगर किसी शख़्स को भाग्य से सच्चे साध सन्त मिल जायँ और उनपर किसी क़दर सच्ची प्रतीति आजाय और जैसे आम इन्सान अपने बच्चे, भाई या माँ बाप के साथ सच्ची मोहब्बत करते हैं ऐसे ही उनके साथ मोहब्बत करने लगे तो उसका सहज में गुज़ारा हो सकता है। ऐसा करने से अव्वल तो उसके लिये गिरने के मौक़े ही कम होंगे और दोयम् ज्यों ही वह गिरेगा वे दयाल कृपा करके फ़ौरन् उसकी सँभाल फ़रमावेंगे। गिरने के लिये ज़्यादा मौक़े इसलिये न रहेंगे कि सच्चे साध सन्तों

के साथ प्रीति क़ायम होने पर इन्सान की तवज्जुह आप से आप बार बार उनके पवित्र चरणों की जानिब मुख़ातिब हुआ करती है जिसके प्रताप से हर क़िस्म की दुनियवी कदूरत उसके दिल से दूर होकर अन्तर में घाट बदल जाता है। घाट के बदलते ही उसको असली जागृति प्राप्त हो जाती है और जागृति हासिल होने पर वह नीचे नहीं गिर पाता।

बचन (७)

सन्तमत परमार्थ की दौलत हासिल करने का सुगम मार्ग है।

मनुष्य का स्वभाव है कि हर एक काम कम से कम मशक़्क़त के साथ और कम से कम वक़्त के अन्दर किया चाहता है। मनुष्य के इसी स्वभाव के प्रताप से तरह तरह की सवारियाँ ईजाद हुई और क़िस्म क़िस्म के सामान तैयार हुए। मिसाल के तौर पर देखो बैलगाड़ी क्या चीज़ है? बैलगाड़ी एक ऐसा इन्तिज़ाम है कि जिसकी मार्फ़त इन्सान कई मन वज़न बआसानी एक जगह से दूसरी जगह पहुँचा सकता है। जबतक बैल-गाड़ी ईजाद न हुई थी तबतक इन्सान को तमाम बोझ अपने कन्धे, सिर या पीठ पर उठाना पड़ता था और जिस्मानी ताक़त महदूद होने की वजह से इसके लिये बीस पचीस मन बोझ का किसी फ़ासले पर पहुँचाना काफ़ी तरद्दुद का काम था और उसके लिये काफ़ी वक़्त दरकार था मगर इन्सान ने रफ़्ता रफ़्ता बैलगाड़ी, घोड़ागाड़ी, रेलगाड़ी वग़ैरह ईजाद करके अपनी मुश्किल को निहायत आसान कर लिया। चूँकि मालिक ने इन्सान को ऐसा दिमाग़ बख़्शा है कि वह जानवरों और क़ुदरत की ताक़तों को

क़ाबू में लाकर उनसे मुनासिब फ़ायदा उठा सके इसलिये इन्सान का आला औज़ार ईजाद करके अपनेतईं फ़िज़ूल मशक़्क़त से बचाना और किसी काम पर बेमतलब वक़्त ज़ाया न करना निहायत जायज़ व क़ाबिले तारीफ़ अमल है। मगर देखने में आता है कि बाज़ इन्सान मेहनत व मुशक़्क़त से बचने के लिये नामुनासिब हरकात के भी मुरतकिब होते हैं और नाजायज़ ज़रिये इस्तेमाल करके बआसानी जल्द से जल्द किसी नतीजे पर पहुँचना चाहते हैं। मसलन् बाज़ काश्तकार अपने काम में मुशक़्क़त ज़्यादा और नफ़ा कम देख कर चोरी या रहज़नी शुरू कर देते हैं और अक्सर दूकानदार जल्द अमीर बनने के लिये सट्टा या जुआ खेलने लगते हैं और बाज़ लोग मेहनत से बचने व आराम से ज़िन्दगी बसर करने के लिये गदागरी का पेशा इख़्तियार कर लेते हैं। इसमें शक नहीं कि ये कारवाइयाँ करते वक़्त इन मूर्खों के दिल में ग़रज़ तो वही होती है कि जिसके प्रताप से दुनिया के अन्दर अनवाअ व इक़साम की ईजादात का ज़हूर हुआ लेकिन इसके पूरा करने के लिये जो ज़रिये ये इस्तेमाल करते हैं वे इख़लाक़ व सोसायटी के क़वायद की रू से नाजायज़ व नामुनासिब क़रार दिये गये हैं क्योंकि उनसे ख़ुद इनको और कुल सोसायटी को बिलआख़िर नुक़सान पहुँचता है।

वाज़ह हो कि अक्सर इन्सान परमार्थ के मामले में भी इस क़िस्म की कजफ़हमी से काम लेते हैं। मसलन् बाज़ लोग एतक़ाद रखते हैं कि फ़ुलाँ दरिया में स्नान करने या फ़ुलाँ मुतबर्रिक मुक़ाम की ज़ियारत करने से उनके सब पाप दूर हो जाते हैं और बिलउमूम देखने में आया कि इन आसान नुसख़ों में यक़ीन रखने वाले असहाब निहायत आज़ादी व बेरहमी के

साथ नामुनासिब काररवाइयाँ करते हैं क्योंकि उनके दिल से पाप की सज़ा का ख़ौफ़ बिल्कुल जाता रहता है। उनका मन उन्हें शह देता रहता है कि डरते क्यों हो, सौ दो सौ रुपये ख़र्च करने से सब पाप दूर होसकते हैं, बेतकल्लुफ़ बढ़े चलो और ज़िन्दगी का लुत्फ़ उठाओ। ऐसे ही बाज़ असहाब ज़ाहिरी त्याग वैराग्य या दान पुण्य की मार्फ़त परमार्थ की कठिन मंज़िल तय करने का ख़्याल रखते हैं और बाज़ लोग महज़ पुस्तकों के पढ़ने पढ़ाने व सुनने सुनाने की मदद से परमार्थ का फल हासिल करने की उम्मीदें बाँधते हैं। ज़ाहिर है कि हरचन्द ये सब काररवाइयाँ अपने तौर पर नाजायज़ व नामुनासिब नहीं हैं लेकिन यह मानना कि इनकी मार्फ़त सच्चे परमार्थ की दौलत नसीब हो सकती है, क़तई नाजायज़ व नामुनासिब है और वाज़ह हो कि जैसे नावाक़िफ़ कजफ़हमों ने परमार्थ के मुतअल्लिक़ मशक़्क़त से बचने और जल्दी व आसानी के साथ अमर व अविनाशी आनन्द की प्राप्ति के लिये ये ग़लत तरकीबें ईजाद की हैं ऐसे ही दानाओं व रास्तफ़हमों ने परमार्थ की दौलत के हुसूल के लिये बहुतसी जायज़ व मुनासिब तरकीबें भी निकाली हैं। मसलन् पिछले ज़माने में योगसाधन के लिये हर किसी को प्राणायाम करना पड़ता था और जंगलों व पहाड़ों में जाकर और महापुरुषों की सेवा करके ब्रह्मविद्या हासिल की जाती थी मगर इस ज़माने में जीवों को आम तौर पर कमज़ोर व दुखी देखकर और जंगलों व पहाड़ों की तकालीफ़ बरदाश्त करने के नाक़ाबिल मुलाहिज़ा फ़रमाकर सन्तों ने गृहस्थाश्रम में रहना व सहजयोग की तालीम देना मंज़ूर फ़रमाया और बजाय श्वासों की मार्फ़त चित्तवृत्ति रोकने के यह सिखलाया कि तवज्जुह अन्तर में जोड़ने से श्वास व चित्तवृत्ति दोनों

बस में आजाते हैं। नतीजा यह है कि हर शख़्स गृहस्थाश्रम के अन्दर रहता हुआ सुबह व शाम वक़्त निकाल कर इस अभ्यास की कमाई कर सकता है बशर्तेकि वह खान पान व व्यवहार के मुतअल्लिक़ चन्द ज़रूरी शरायत की पाबन्दी करता रहे। ऐसे ही सैकड़ों बरस तप करने व देह को कष्ट देने के बजाय हुक्म दिया कि सच्चे सतगुरु के चरणों में सच्ची प्रीति लगाओ और उनकी कृपादृष्टि हासिल करके सहज में मन की निर्मलता हासिल करो और श्रद्धा व प्रतीति के साथ साधन करते हुए एक दिन अपनी मंज़िले मक़सूद पर पहुँच जाओ।

वचन (८)

एक ख़्वाब से सबक़।

बाज़ औक़ात इन्सान को निहायत दिलचस्प और अजीब व ग़रीब ख़्वाब नज़र आते हैं जिनका असर देखने वाले के दिल पर दिनों तक रहता है और जिनसे अक्सर निहायत मुफ़ीद मतलब सबक़ भी हासिल होता है चुनाँचे हम ज़ैल में एक प्रेमी भाई का ख़्वाब दर्ज करते हैं:—

एक रात का ज़िक्र है कि ४ बजे सुबह के क़रीब मेरी आँख लग गई। देखता क्या हूँ कि एक बड़ा भयानक जंगल है जिसमें न कोई हरा पेड़ है और न चरिंद व परिंद हैं। चारों तरफ़ उदासी छाई हुई है और ज़ोर की हवा चलने से तमाम जंगल साँयँ साँयँ कर रहा है। अपनेतई जंगल में तनहा महसूस करके मैं सोचने लगा—यह क्या हुआ? मैं इस वीरान में कैसे आगया? मेरे दिल में तो कभी इस तरफ़ आने का ख़्याल तक न उठा

होगा । इसी तरह सोचते सोचते मैं आगे बढ़ता चला, हत्ताकि कुछ फ़ासिले पर एक ख़ुश्क़ नदी दिखलाई दी । मैंने नदी का रुख़ किया और चूँकि जिस्म हद से ज़्यादा थक गया था इसलिये मैं नदी के किनारे पहुँचकर और एक बड़े पत्थर का आसरा लेकर बैठ गया और मन में कहने लगा-यह क्या माजरा है,मैं कैसा बे सरो सामान हूँ, इस जंगल में मेरा कौन मददगार है, न हिफ़ाज़त के लिये मेरे पास कोई हथियार है और न खाने पीने के लिये कोई सामान है । अगर आवाज़ दूँ तो सुनने के लिये परिन्द तक नहीं और अगर चुप बैठ रहूँ तो देखने के लिये जानवर तक नहीं । क्या मैं अनाथ हूं ? क्या सच मुच मेरा कोई मददगार नहीं है ? ऐ बदन ! तू ऐसा कमज़ोर है कि कुछ भी करने के लायक़ नहीं, ऐ दिमाग़ ! तू ऐसा नाक़ाबिल है कि तुझे कुछ सूझता तक नहीं । ग़रज़कि इस तरह के निरासता व कमज़ोरी के ख़्यालात दिमाग़ में गूँज रहे थे कि आँखें बन्द हो गई और ख़्याल हुआ कि नाहक़ परेशान होते हो;अपने परम पिता को याद करो वह ज़रूर जवाब देंगे । यह ख़्याल आया ही था कि किसी ने आवाज़ दी-"पेड़ के नीचे कौन बैठा है ?" आवाज़ सुनकर मैंने स्वप्न की हालत में आँखें खोल लीं और देखा कि एक सफ़ेदरीश बुज़ुर्ग मेरे सामने खड़े हैं जिनकी आँखों में ख़ास क़िस्म की चमक है लेकिन सूरत बहुत कुछ ख़श्मनाक है । बुज़ुर्ग को देखकर मैं सपने में ही उठ बैठा और अदब से बोला साहब ! मैं हूँ ।

बुज़ुर्ग-मेरे बाग़ में क्यों आए ?

मैं-आराम करने के लिये ।

बुज़ुर्ग-किसी से इजाज़त ली ?

मैं—यहाँ कोई हो भी, इजाज़त किससे लेता अलावाबरीं मैं कोई अपने इरादे से यहाँ नहीं आया और तअज्जुब है कि आप इस वीरान को बाग़ कहते हैं ?

बुज़ुर्ग—इतने परेशान क्यों हो ?

मैं—परेशानियों की वजह से ।

बुज़ुर्ग—कुछ खो गया है ?

मैं—खोया तो कुछ नहीं है ।

बुज़ुर्ग—फिर परेशानियाँ किस लिये ?

मैं—इस लिये कि मैं राधास्वामी दयाल की और उनके बच्चों की खिदमत किया चाहता हूँ लेकिन कामयाबी की कोई सूरत नज़र नहीं आती ।

बुज़ुर्ग—इसमें तुम्हारा क्या क़ुसूर ?

मैं—क़ुसूर हो, न हो लेकिन कोई काम तो न हुआ ।

बुज़ुर्ग—काम हो, न हो लेकिन सेवा तो हो गई ।

मैं—सेवा क्या हो गई, न दुनिया के दुखों में इफ़ाक़ा है और न सुखों में इज़ाफ़ा ।

बुज़ुर्ग—क्या मुश्किलें दरपेश हैं ?

मैं—यह लम्बी कथा है इसको सुनकर क्या करेंगे ?

बुज़ुर्ग—आख़िर सुनें तो ।

मैं—देखिये, ग़ैरहिन्दू तो हमें हिन्दू समझ कर परहेज़ करते हैं और हिन्दुओं में सनातनधर्मी हमें तीर्थों और मूर्तियों वग़ैरह में श्रद्धावान् न देख कर हमसे अलहदा रहते हैं और आर्य्य समाजी हमें नास्तिक व मर्दुमपरस्त कह कर बदनाम करते हैं और सिक्ख हमें ग्रन्थसाहब

को गुरू न मानने की वजह से सख़्त सुस्त कहते हैं। शराब व गोश्त का दुनिया में दौर चल रहा है, न कोई सच्चे परमार्थ की तहक़ीक़ात का गहरा शौक़ रखता है और न कोई अन्तरी साधन सीख कर कमाई करने का ख़्वाहिशमन्द है। प्रेमी जनों के आराम के लिये कुछ इन्तिज़ामात दयालबाग़ में किये गये लेकिन उनकी तरक़्क़ी बिला काफ़ी रुपये के कैसे हो? सत्सङ्ग के दायरे के बाहर से मदद लेना मना है। ग़ैरमुल्की तिजारत ने हिन्दुस्तानी कारख़ानों की नाक में दम कर रक्खा है। हमारा एक मुख़्तसिर सा कॉलिज है औरों के दस दस कॉलिज हैं, यूनीवर्सिटियाँ हैं। हमें कौन पूछे? फिर कैसे काम चले? कैसे तरक़्क़ी हो? सत्सङ्गी बेचारे आम तौर पर ग़रीब हैं फिर भी हैसियत से बढ़कर सेवा करते हैं लेकिन ज़रूरियात बेशुमार व रोज़अफ़ज़ू हैं। हम कैसे लोगों को समझावें कि सुरत-शब्द-योग से और राधास्वामी दयाल की चरणशरण से जीव का सहज में कल्याण हो सकता है? हम कैसे अवाम को यक़ीन दिलावें कि सत्सङ्ग की चाल इख़्तियार करने से दुनिया के तमाम झगड़े दूर हो सकते हैं? दुनिया में मनमुखता का राज्य है। गुरुमुखता को पागलपन, मर्दुम-परस्ती व ख़ुदग़रज़ी कहा जाता है। फ़र्माइये—कैसे काम चले?

बुज़ुर्ग—बस इतने में ही घबरा गये।

मैं—घबराने की कोई बात नहीं लेकिन मुश्किलात के हल करने की फ़िक्र तो इन्सान का फ़र्ज़ है।

बुज़ुर्ग—फ़िक्र करके कोई इलाज सोचा?

मैं—सिर्फ़ एक इलाज समझ में आता है यानी अगर राधास्वामी दयाल

ख़ास मदद फ़रमावें तभी काम चल सकता है वरना कोई सूरत कामयाबी की नहीं।

बुज़ुर्ग–क्या तुम जानते हो कि सपने में बहुत सी मुश्किलात के जवाबात मिल जाते हैं?

मैं–जी हाँ, मैं जानता हूँ।

बुज़ुर्ग–अच्छा, अब तुम सो जाओ, तुमको सपने में जवाब मिलेगा। मैं जाता हूँ।

वह बुज़ुर्ग चले गये और मैं ज़मीन पर लेट गया। दो ही मिनट के बाद नींद आगई। देखता क्या हूँ (यह सपने के अन्दर सपना है) कि वही जंगल बियाबान है और मैं अकेला निराशता की हालत में फिर रहा हूँ। जंगल में न कोई हरा पेड़ है, न कोई चरिन्द है, न परिन्द और चारों तरफ़ उदासी छाई हुई है। अचानक क्या देखता हूँ कि कोई दो गज़ के फ़ासले पर ज़मीन फोड़कर एक पौदे ने कुल्ला निकाला है और तीन निहायत ख़ूबसूरत नन्हे नन्हे पत्ते चमक रहे हैं। मैं पौदे के क़रीब पहुँचा ही था कि पीछे से ज़ोर से आवाज़ आई—"जवाब ले लो"। अचानक आवाज़ से मेरी नींद टूट गई और मैं सचमुच उठ बैठा। उठकर मैंने सपने के आख़िरी हिस्से पर ग़ौर करके नतीजा निकाला कि वाक़ई जवाब मिल गया है। यह संसार जंगल बियाबान है। इसमें सत्सङ्गरूपी कल्पवृक्ष ने अभी कुल्ला फोड़ा है। जंगल के दूसरे पेड़ों से अभी इसका मुक़ाबिला करना नादुरुस्त है। इस वृक्ष के लगाने वाले ख़ुद राधास्वामी दयाल हैं,

वह खुद इसकी रक्षा व परवरिश फ़रमावेंगे, इन्सान की सोच व फ़िक्र लाहासिल है । तुम अपना फ़र्ज़ सच्चे दिल से अदा करते चलो और हुजूरी दया के मुन्तज़िर व उम्मीदवार रहो । एक दिन यह नाज़ुक पौदा ज़रूर क़दावर पेड़ बन जावेगा ।

बचन (९)

पुस्तकों की पूजा से असली परमार्थी लाभ नहीं हो सकता ।

तमाम दुनिया पुस्तकों के पूजन में लगी है और जितनी ताज़ीम इन पुस्तकों के रचने वालों की भी न की जाती थी उससे बढ़कर पुस्तकों की कीजाती है मगर अफ़सोस है कि पुस्तकों के असली अर्थों की जानिब बहुत कम लोगों की तवज्जुह जाती है । इसके कई कारण हैं; मसलन् अव्वल तो हर किसी के अन्दर इतनी क़ाबिलियत नहीं कि प्राचीन महापुरुषों के परमार्थ के ऊँचे आदर्शों को समझ सकें; दोयम् अर्सा दराज़ गुज़र जाने से इन पुस्तकों के मज़ामीन पर इतना ज़ंग चढ़ गया है कि असली शिक्षा का पता लगाना निहायत कठिन हो गया है; सोयम् इस दौरान में मूर्ख श्रद्धावानों व नीज़ दुश्मनों ने इनके अन्दर इतनी मिलौनी करदी है कि बढ़ से बढ़ के समझदार मनुष्यों के लिये भी एक सफ़े के मज़मून को दूसरे सफ़े के मज़मून से मिलाना मुश्किल है और इन सब बातों का नतीजा यह है कि आम तौर पर लोग मुतबर्रिक पुस्तकों की पूजा व परस्तिश करके या उनका पाठ करके अपने दिल को तस्कीन दे लेते हैं कि परमार्थ के मुतअल्लिक़ एक भारी फ़र्ज़ अदा हो

गया। चुनाँचे बहुत से ब्राह्मण अभी तक यही विश्वास रखते हैं कि सच्चे ब्राह्मण का काम महज़ मंत्रों का उच्चारण करना है, उनके अर्थ समझने की कोशिश करना ब्राह्मण के लिये पाप है। ऐसे ही मुसल्मानों में हाफ़िज़ और सिक्खों में अखण्डपाठी यही विश्वास रखते हैं। अब औरों की देखा देखी अमरीका के ईसाई साहबान को भी इंजीले मुक़द्दस के अखण्ड पाठ के शौक़ ने गुद गुदाया है और पाठ करने वालों की एक ऐसी जमाअत पैदा हो गई है जो ७२ घण्टे के अन्दर शुरू से अख़ीर तक कुल इंजील का पाठ कर लेते हैं और हज़ारों आदमी, जहाँ पर पाठ किया जाता है, जमा रहते हैं और हर घंटे के बाद ख़बर शाया की जाती है कि कहाँ तक पाठ पहुँच गया है और लाखों आदमी इन ख़बरों को पढ़कर शान्ति व ख़ुशी हासिल करते हैं। यह दुरुस्त है कि किसी भी पवित्र ग्रन्थ का किसी तरह पाठ करना बुरी बात नहीं है लेकिन यह कहना भी निहायत दुरुस्त है कि प्राचीन महापुरुषों ने मुतबर्रिक पुस्तकें महज़ इस तरह पाठ के लिये नहीं रची थीं। उन बुज़ुर्गों का इन पुस्तकों के रचने से असल मक़सद यह था कि परमार्थ के मुतअल्लिक़ जो ख़्यालात व जज़बात उन बुज़ुर्गों के दिल में मौजूद थे वे आयन्दा नसलों के दिल में पैदा होते रहें ताकि प्रेमी जन मुनासिब साधन करके उन बुज़ुर्गों की सी उच्च गति को प्राप्त हों। इसी वजह से सतसङ्ग में ज़ोर इस बात पर दिया जाता है कि हुज़ूरी बानी में से चाहे एक शब्द पढ़ा जावे लेकिन उसके मतलब को ग्रहण किया जावे ताकि मुनासिब ख़्यालात दिल में क़ायम होने से प्रेमीजन मुनासिब करनी व रहनी गहनी इख़्तियार कर सकें। हम ज़ैल में एक शब्द के मानी दर्ज करते हैं जिनके एक मर्तबा

ज़हननशीन हो जाने पर मन की हालत में नुमायाँ तब्दीली वाक़े होगी । (देखो प्रेमबिलास शब्द नम्बर १२०)

"गुरु महाराज की असल शिक्षा आज मेरी समझमें आई। मुझे यह समझ में आया है कि निज घर यानी मेरी मंज़िलें मक़सूद बहुत दूर दराज़ फ़ासले पर वाक़े हैं और दर्मियानी रास्ता निहायत कठिन यानी दुश्वार-गुज़ार है और मेरे अन्दर ऐसा बल नहीं है कि मैं उस कठिन रास्ते पर चल कर इस लम्बी मुसाफ़त को तै कर सकूँ। नीज़ मुझे यह समझ में आया है कि इस सफ़र को सरअंजाम देने के लिये गुरू महाराजके चरणों में सच्ची प्रीति की अज़हद ज़रूरत है। उसके बग़ैर यह कार्य्य सिद्ध नहीं हो सकता क्योंकि इस कठिन सफ़र में सिवाय प्रीति के कौन कमर बँधा सकता है। अलावाबरीं मुझे यह समझ में आया है कि हमको चाहिये कि गुरु महा-राज के वचनों को चित्त देकर सुनें और उनकी फ़र्माई हुई हिदायतों को अपने दिल में जगह दें क्योंकि गुरु महाराज छाँट कर हमारे नफ़े की बात फ़र्माते हैं। उनका हुक्म है कि करनी यानी सुमिरन, ध्यान, भजन, सेवा व सत्सङ्ग से कभी मुँह नहीं फेरना चाहिये और जहाँ तक अपने से बन सके ज़रूर ज़रूर इनकी कमाई करनी मुनासिब है क्योंकि बग़ैर करनी किये रास्ते पर चलने के लिये हमारे अन्दर आत्मबल पैदा नहीं हो सकता और बग़ैर आत्मबल के मंज़िले मक़सूद पर पहुँचाने वाले रास्ते पर क़दम बढ़ाना नामुमकिन है और बिला रास्ते पर क़दम बढ़ाये निज घर यानी मंज़िले मक़सूद दूर फ़ासले पर रहेगी और हमारा क़याम इसी काल व कर्म के देश में रहेगा जिसका नतीजा यह होगा कि हमें काल

व कर्म के हाथों अनेक उत्पात सहने पड़ेंगे। चौथी बात जो मेरी समझ में आई है वह यह है कि सौभाग्य से मेरी सुरत अब सुहागिन हो गई है क्योंकि उसको सच्चे सतगुरु (जो उसके पति हैं) प्राप्त हो गये हैं। अब मैं होशियारी के साथ रोज़ाना करनी करूँगा ताकि परमार्थ के रास्ते पर मेरा क़दम दिन रात बढ़ता चले। मैं धीरे धीरे अपने घट में क़दम बढ़ाऊँगा और सहसदल कमल, त्रिकुटी और सुन्न स्थान, रास्ते की मंज़िलें तय करके भँवरगुफा से होता हुआ और बीन का शब्द उच्चारण करता हुआ सतपुर यानी सत्यलोक में रसाई हासिल करूँगा और फिर अलख और अगम लोक से गुज़रकर राधास्वामी दयाल सच्चे सतगुरु की ख़ास दया व मेहर से निज घर में, जोकि मेरी सुरत का असली निवासस्थान है और जिसको सन्तमत में राधास्वामीधाम कहते हैं, क़याम हासिल करूँगा।

वचन (१०)

सतगुरु वक़्त की हर हालत में ज़रूरत है।

कुछ लोग राधास्वामीमत में शरीक होने से इसलिये झिझकते हैं कि एक गुरु धारण कर लेने पर दूसरे गुरु की शरण लेना पाप है। इनका ख़्याल है कि जैसे हर स्त्री के लिये पतिव्रत धारण करना ज़रूरी है ऐसे ही हर भक्तिमार्ग पर चलने वाले के लिये एक ही गुरू की शरण में रहना लाज़मी है और आश्चर्य्य यह है कि अच्छे लिखे पढ़े लोग इस भ्रम में पड़े हैं। वजह यह है कि बहुत से भाई गुरु की निस्बत महज़ अन्धविश्वास रखते हैं। उनका एतक़ाद है कि महज़

किसी साधू, फ़क़ीर या प्रसिद्ध ब्राह्मण को गुरु धारण कर के गुरुदक्षिणा अदा कर देने से उनका परमार्थी फ़र्ज़ अदा हो जाता है और वे गुरु की शरण लेने से जो फ़ायदा जीव को पहुँच सकता है उसके मुस्तहक़ हो जाते हैं। वाज़ह हो कि ये सब ख़्यालात क़तई ग़लत हैं और भक्तिमार्ग को बदनाम करते हैं। गुरु के मानी अन्धेरे में प्रकाश करने वाला है इसलिये गुरुपदवी उसी महापुरुष की हो सकती है जो खुद नूरानी हो और चूँकि सच्चे परमार्थ का मुद्दआ हुसूले मुक्ति या सच्चे मालिक का साक्षात्कार है इसलिये परमार्थ में उसी पुरुष को सच्चा गुरु कहेंगे जो जीव को अपनी रोशनी में चला कर सच्चे मालिक के हुज़ूर में पहुँचा दे। अब अगर किसी शख़्स ने साधारण साधू या ब्राह्मण को गुरु मान लिया है तो उसका यह अमल महज़ बेकार है क्यों कि वह बेचारा मन इन्द्रियों के बस खुद अन्धकार में है—वह अपने शिष्य को कैसे चाँदना दिखला सकता है। और चूँकि वह गुरुपदवी का अधिकारी नहीं है इसलिये उसके साथ किसी का रिश्ता क़ायम होना ऐसा ही है जैसे किसी स्त्री का विवाह लकड़ी के टुकड़े के साथ कर दिया जाय। शादी के वक़्त दूल्हा के बदन पर कपड़े मौजूद रहते हैं और कपड़े भी दूल्हा के जिस्म के संग भाँवर लेते हैं लेकिन यह कोई नहीं कहता कि दुलहिन की शादी कपड़ों के साथ भी हो गई है क्योंकि कपड़े बेजान चीज़ हैं इसी तरह अगर किसी शख़्स ने ऐसे पुरुष को, जो गुरुपदवी का अधिकारी नहीं है, नादानी से गुरु धारण करलिया तो बाद में सच्चे गुरु के मिलने पर उनकी शरण लेने से उसके पतिव्रत धर्म में कोई फ़र्क़ न आयेगा। यह दुरुस्त है कि अगर किसी को सच्चे व पूरे गुरू

मिल जायँ फिर उसे इधर उधर किसी दूसरे पुरुष में गुरुभाव नहीं लाना चाहिये और यह भी दुरुस्त है कि जबतक किसी को पूरे गुरु न मिलें तबतक किसी को अपना गुरु नहीं बनाना चाहिये मगर यह भी दुरुस्त है कि अगर किसी को पहले अधूरे गुरु मिलें और बाद में पूरे गुरु से भेंट होने का इत्तिफ़ाक़ हुआ तो उसे चाहिये कि अधूरे गुरु की टेक छोड़ कर फ़ौरन् पूरे गुरु की शरण इख़्तियार करले। और नीज़ अगर किसी को पूरे गुरु मिले लेकिन वह गुप्त हो गये और इसका अभी काम पूरा नहीं हुआ यानी जिस मुद्दआ के हुसूल के लिये उनकी चरणशरण ली थी वह बरामद नहीं हुआ तो इसके लिये भी लाज़मी है कि आयन्दा पूरे गुरु मिलने पर फ़ौरन् चरणशरण इख़्तियार कर ले और अपने साबिक़ व मौजूदा गुरु में कोई फ़र्क न समझे क्योंकि उन महापुरुषों में सिर्फ़ देह यानी बेरूनी जामा का फ़र्क है, असल जौहर व गति दोनों की एक है। बाज़ टेकी जीव हठ करके सतगुरु के बनाए हुए सतगुरु में भाव लाने से बाज़ रहते हैं और पिछले गुरु के स्वरूप में ही निश्चय रखते हुए अपना अभ्यास करते रहते हैं। ऐसा करने से उनका कोई परमार्थी नुक़सान तो नहीं होता मगर मौजूदा ज़िन्दगी परमार्थी नुक़्तए निगाह से बरबाद जाती है क्योंकि अन्तरी परमार्थी तरक़्क़ी हासिल नहीं होती। सन्तमत का यह एक निहायत अहम उसूल है कि बिला सतगुरु वक़्त की शरण इख़्तियार किये किसी को अन्तरी रूहानी तरक़्क़ी प्राप्त नहीं हो सकती इसलिये हर सन्तमतानुयायी के लिये अक़्लमन्दी इसी में है कि टेक पच्छ छोड़ कर सतगुरु वक़्त की शरण इख़्तियार करे। अलबत्ता यह ज़रूरी है कि किसी की शरण लेने से पहले बखूबी इतमी-नान कर ले कि वह पुरुष वाक़ई सच्चे गुरु हैं या नहीं।

बचन (११)

ज़िन्दा महापुरुषों की क़दर न करना मूर्खता है।

दुनिया का हाल निहायत अजीब व ग़रीब है। करोड़ों इन्सान राम, कृष्ण, मुहम्मद, मसीह, नानक व कबीर में सच्चा विश्वास रखते हैं और उनके नाम पर तन, मन, धन कुर्बान करने को तैयार हैं लेकिन अगर उनसे उनकी वाक़फ़ियत के दायरे से बाहर किसी ज़िन्दा महापुरुष की निस्बत ज़िक्र किया जावे तो उन्हें सख़्त नागवार होता है। राम, कृष्ण वग़ैरह के मुतअल्लिक़ जो हज़ारों लोकमतविरुद्ध बातें बयान की जाती हैं उन सबको वे निहायत आसानी से मंज़ूर कर लेते हैं लेकिन इस ज़िन्दा महापुरुष की निस्बत कोई माक़ूल बात भी बतलाई जाय तो उनके दिल में सैकड़ों शुबहात पैदा होते हैं और तरह तरह के सवालात सूझते हैं और लुत्फ़ यह है कि जिस ज़माने में राम, कृष्ण वग़ैरह इस पृथ्वी पर मौजूद थे उस वक़्त लोगों के मन में उनकी निस्बत भी वैसे ही शकूक प्रकट होते थे। इसकी क्या वजह है? इसकी वजह मूर्खता, पक्षपात, अहंकार और अभाग्यता है यानी न तो ऐसे लोगों को यह इल्म है कि राम, कृष्ण, मुहम्मद, मसीह वग़ैरह में क्या असली बड़ाई थी और न उनको यह पता है कि वे बुज़ुर्ग इस दुनिया में किस क़ायदे की पाबन्दी से तशरीफ़ लाये। उनको क़तई कोई शौक़ परमार्थी तहक़ीक़ात का नहीं है। उनका काम महज़ बुज़ुर्गों के नाम से है। उनको अपनी वाक़फ़ियत और हमादानी का ऐसा अहंकार है कि दूसरे की बात, जो ज़रा भी उनके हस्बे ख़्याल न हो, सुनना व समझना

कड़वे ज़हर का प्याला पीना है। मनुष्यशरीर पाकर बुज़ुर्गों व महापुरुषों में श्रद्धा रखते हुए और उनकी तालीम के आस पास मँडलाते हुए ये जीव असली दौलत से बेबहरा रहते हैं। गौर का मुक़ाम है कि किसी इन्सान के लिये इससे बढ़कर और क्या अभाग्यता हो सकती है?

थियोसाफ़िकल सोसाइटी पुकार पुकार कर कहती है कि कोई बड़ा अवतार आने वाला है, तमाम दुनिया को चाहिये कि उसके स्वागत के लिये तैयार होजाय, लेकिन सोसायटी के एक से ज़्यादा मेम्बरान् हेडक्वार्टर में राधास्वामी दयाल की तशरीफ़आवरी की इत्तिला भेजते हैं और चाहते हैं कि ज़रा इस जानिब भी तवज्जुह मबज़ूल हो क्योंकि यहाँ की हर एक बात सुडौल और हैरतअङ्गेज़ मालूम होती है मगर जवाब खुश्क मिलता है। भला किसी को क्या पड़ी है कि ऐसे महापुरुष की निस्बत कोई तहक़ीक़ात करे जिसके लिये दिल में पक्ष मौजूद नहीं है। मगर वाज़ह हो कि सच्चे अवतार किसी फ़र्द या जमाअत की इमदाद के मुहताज नहीं होते। वह जिसके हुक्म से या जिस मौज में तशरीफ़ लाते हैं उसका एलान कारकुनाने क़ुदरत को अज़खुद हो जाता है और क़ुदरत की सब ताक़तें मिलकर उसके मिशन की तकमील के लिये हमातन कोशिश करती हैं। अगर कुछ इन्सान उसकी जानिब से लापरवा रहें या उसकी मुख़ालिफ़त भी करें तो उनके इस अमल से उसकी मौज में रत्ती भर फ़र्क़ नहीं आता। ऊँचे मंडल की रूहानी ताक़त तुच्छ इन्सान की सहायता की क्या परवा करती है? उसके अन्दर अपना मिशन पूरा करने की पूरी समर्थता रहती है। यह हो सकता है कि वह किसी मसलहत से किसी बढ़ई या गडरिये या अहीर या जुलाहे के घर में जन्म या

परवरिश पाकर ज़ाहिरा बेकसी की सूरत इख़्तियार कर ले लेकिन इससे उसकी अन्दरूनी समर्थता में रत्ती भर फ़र्क़ नहीं आता और न ही कारकु-नाने क़ुदरत उसके ख़िलाफ़ सरताबी करते हैं।

बचन (१२)

मज़हब के साथ अमली तअल्लुक़ होना चाहिये।

दुनिया में जितने मत इस ज़माने में जारी हैं इतने कभी नहीं हुए। उनकी शुमार की जानिब निगाह पड़ने से बाज़ पुरुषों को ख़्याल होता है कि अब पिछले ज़माने से परमार्थ के तलबगारान् की तादाद बहुत बढ़ गई है और आज कल मज़हबी जोश ख़ूब ज़ोरों पर है मगर हक़ीक़त यह है कि जैसी लापरवाई व अश्रद्धा परमार्थ की जानिब आज कल प्रकट होरही है ऐसी कभी नहीं हुई। यह सच है कि कसीरतादाद लोग मज़हब का नाम मुँह से लेते हुए मज़हबी बारीकियों के मुतअल्लिक़ बात चीत करते हैं लेकिन परमार्थी तहक़ीक़ात का शौक़ बहुत ही कम लोगों के दिलों में नज़र आता है। किसी मज़हब का पैरौ कहलाना उसी शख़्स को शायाँ है जो उस मज़हब की तालीम पर अमली तौर से कारबन्द हो क्योंकि जैसे मुख़्तलिफ़ मिठाइयों व दवाइयों के नाम मुँह से लेने पर न किसी का पेट भर सकता है और न रोग दूर हो सकता है ऐसे ही किसी मज़हब की तालीम को ज़बान पर लाने से किसी को असली परमार्थी फ़ायदा हासिल नहीं हो सकता। वाज़ह हो कि इस क़िस्म की बातों का ज़िक्र सिर्फ़ इस ग़रज़ से किया जाता है कि मन की कमज़ोरियाँ

पेश करके अवाम के लिये मुफ़ीद मतलब सबक़ निकाला जावे। चुनाँचे इसी ग़रज़ से यहाँ पर मुख़्तलिफ़ लोगों की मिसालों को निगाह में रखकर यह दिखलायेंगे कि ज़ाहिरा अपने मज़हब से प्रेम रखते हुए दरअसल मन निहायत हलका तअल्लुक़ मज़हब के साथ रखता है और बाद में यह दिखलायेंगे कि हर सत्सङ्गी का राधास्वामीमत के साथ किस तरह का तअल्लुक़ होना चाहिये।

बाज़ अशख़ास जिस मज़हब से अपना तअल्लुक़ ज़ाहिर करते हैं उसकी पुस्तकों का अक्सर मुताला करते हैं और नीज़ उस मज़हब की तालीम के मुतअल्लिक़ अक्सर ज़िक्र करते हैं और उस मज़हब के बानी व दीगर बुज़ुर्गों की महिमा व बड़ाई के राग अलापते हैं लेकिन अमली तौर पर उस मज़हब की किसी भी तालीम पर कारबन्द नहीं। उन्होंने दरअसल मज़हब को एक खिलौना बना रक्खा है जिसके साथ मन-माने खेल खेल कर अपनी तबिअत खुश की जाती है।

बाज़ असहाब किसी इष्टदेवता की पूजा व भक्ति करते हैं और दिन में लाख सवा लाख मर्तबा उसके मंत्र का जप करते हैं मगर ये सब कारग्वाइयाँ किसी न किसी मतलबबरारी की ग़रज़ से की जाती हैं। दरअसल ये लोग मज़हब से नौकर का काम लेते हैं।

बाज़ असहाब खान्दानी रस्म व रिवाज के मुताबिक़ मुख़्तलिफ़ मज़हबी रसूम काफ़ी श्रद्धा व प्रेम के साथ अदा करते हैं और चूँकि घर में आमदनी व औलाद काफ़ी हैं और इज़्ज़त भी काफ़ी व वाफ़ी हासिल है इसलिये विश्वास रखते हैं कि ये सब निआमतें खान्दान की मज़हबी रसूम अदा करने से प्राप्त हुई हैं और आशा बाँधते हैं कि रसूम की अदायगी का सिलसिला

जारी रखने से ये सब निआमतें उम्र भर हासिल रहेंगी व बढ़ती रहेंगी। ये लोग मज़हब को माता के तुल्य ख़्याल करते हैं और जैसे बच्चा अपनी माँ से अदब आदाब बजा लाकर रुपया पैसा व खिलौने हासिल करता है ऐसे ही ये भी मज़हब से दुनियवी आराम व आसायश के सामान मिलने की आशा रखते हैं।

बाज़ लोग अपने मज़हब की तालीम व फ़लसफ़े में ग़ोता लगा कर अपनी मालूमात बढ़ाते हैं और बुज़ुर्गों के निर्णय विचार पर ग़ौर करके इन्सानी ज़िन्दगी के फ़रायज़, आत्मा व परमात्मा की हस्ती, जन्म मरण व मोक्ष के मसायल के मुतअल्लिक़ ख़्यालात क़ायम करते हैं। ये लोग मज़हब से एक लायक़ उस्ताद या फ़िलासफ़र का काम लेते हैं।

मालूम होवे कि एक सच्चे सन्तमतानुयायी के नुक़्तए निगाह से ये सब ख़्यालात निहायत ओछे हैं। सन्तमतानुयायी के लिये मुनासिब है कि परवाने की तरह सच्चे मालिक के दर्शन का आशिक़ हो यानी जैसे परवाना सिर्फ़ ज्योति का दर्शन पाकर मगन होता है ऐसे ही सच्चे सन्तमतानुयायी के लिये सच्चे मालिक के दर्शन के सिवाय और कोई चीज़ हर्षदायक न हो। ज़ाहिर है कि किसी शख़्स के दिल व दिमाग़ के अन्दर परवाने के ये गुण महज़ किताबों के पढ़ने या लेक्चरों के सुनने से पैदा नहीं हो सकते, इसके लिये सच्चे सतसङ्ग और सच्चे विवेक की ज़रूरत है। सच्चा सतसङ्ग और सच्चा विवेक सत्पुरुषों के पवित्र चरणों में हाज़िरी देने ही से प्राप्त हो सकता है और सत्पुरुषों का सङ्ग सच्चे मालिक की कृपा से प्राप्त होता है और सच्चे मालिक की कृपा बार बार सच्ची व गहरी पुकार करने या सत्पुरुषों की दयादृष्टि के पड़ने या मुहताज व मुसीबतज़दा अशख़ास की बेग़रज़ सेवा व ख़िदमत करने से हासिल होती है। गहरी पुकार प्रार्थना करने,

सत्पुरुषों की दृष्टि लेने व ग़रीब मुहताजों की सेवा करने का शौक़ सात्त्विकी भोजन खाने व सात्त्विकी रहनी रहने से प्राप्त होता है और आख़िरुल्ज़िक्र बातों के लिये मौक़ा उत्तम कुल में जन्म और उत्तम संस्कारों के प्रताप से मिलता है और उत्तम संस्कार बुद्धि के निर्मल होने से बन पड़ते हैं।

इस पर कहा जा सकता है कि इस हिसाब से मालिक के लिये सच्चा इश्क़ या प्रेम पैदा करना या दूसरे लफ़्ज़ों में सन्तमत का सच्चे तौर पर अनुयायी बनना तो एक निहायत मुश्किल व तूलतवील मुआमला क़रार पाता है। वाक़ई ज़ाहिरन् मुआमला ऐसा ही है लेकिन निर्मल बुद्धि वाले अशख़ास के लिये चन्दाँ दिक़्क़त नहीं है क्योंकि अगर कोई निर्मल बुद्धि वाला पुरुष दिल कड़ा करके सच्चे साध सन्त की चरणशरण इख़्तियार कर ले तो उसको उत्तम संस्कार, सात्त्विकी रहनी, गहरी प्रार्थना करने का शौक़ व शऊर और सच्चे मालिक की कृपा सहज में प्राप्त हो सकती है और वह जल्द ही सच्ची भक्ति की मंज़िल पर पहुँच सकता है।

वचन (१३)

निष्काम कर्म किसे कहते हैं ?

निष्काम कर्म की संसार में बड़ी तारीफ़ है। भगवद्गीता और हिन्दूधर्म के बहुत से दीगर शास्त्रों में निष्काम कर्म करने पर निहायत ज़ोर दिया गया है और यह कहा है कि निष्काम कर्म करने से सहज में जीव को मोक्ष मिल जाता है मगर लोग इसका अपना अपना मतलब लगाते

हैं। मसलन् आम तौर पर यह समझा जाता है कि अपने भोग व आराम का ख़्याल दिल में न रखते हुए दूसरों को सुख पहुँचाने के लिये कोई काम करना निष्काम कर्म है। बाज़ लोग यह कहते हैं कि इस लोक या परलोक के सुख व भोग की उम्मीद दिल में न बाँध कर अपने धर्म का पालन या फ़रायज़ का अदा करना निष्काम कर्म है। बाज़ों का ख़्याल है कि खान्दान के रस्म व रिवाज का बिला सोचे विचारे जारी रखना निष्काम कर्म है। लेकिन बाज़ यह कहते हैं कि इन्सान से निष्काम कर्म बन पड़ना क़तई नामुमकिन है क्योंकि अगर आप किसी को दुखी देखकर उसका कष्ट निवारण करने के लिये कोशिश करते हैं तो हरचन्द ज़ाहिरा आप दूसरे को सुख पहुँचाते हैं लेकिन कोशिश करते वक़्त आपके दिल में दूसरे का कष्ट दूर करने की कामना मौजूद रहती है और नीज़ दूसरे का कष्ट दूर करके आपको खास क़िस्म की खुशी हासिल होती है और यह नामुमकिन नहीं है कि इसी ख़ास किस्म की खुशी का भोग करने की ख़ातिर आपका मन दूसरों के कष्ट दूर करने के लिये चाह उठता हो इसलिये आपकी यह कोशिश निष्काम कैसे कहला सकती है। रहा धर्म का पालन या फ़रायज़ का अदा करना, ग़ौर करने से मालूम होगा कि फ़रायज़ अदा करते वक़्त भी यही ख़्वाहिश रहती है कि काम एहतियात से किया जावे कि कहीं हम धर्म से न गिर जावें या अगर किसी का मन निष्काम कर्म करने का अत्यन्त शौक़ीन है तो कर्म करते वक़्त उसके दिल में यह कामना ज़रूर रहेगी कि मुझे निष्काम रहना चाहिये वरना यह कर्म सकाम हो जायगा। वाज़ह हो कि यह या इस क़िस्म के एतराज़ात एकदम नज़रअन्दाज़ करने के क़ाबिल नहीं हैं क्योंकि इन्सान बिला

किसी इच्छा या नीअत के कोई भी कर्म करने के लिये मुस्तैद नहीं हो सकता। भला कोई इन्सान नाहक़ क्यों हाथ पाँव मारे, क्यों अपना आराम छोड़कर हड्डियाँ घिसाये, क्यों अपनी तवज्जुह किसी ख़ास जानिब रवाँ करे? काम करने का आख़िर कोई तो मतलब या मुद्दा होना चाहिये। जो शख़्स बेमतलब काम करता है बिलाशुबह पागल है क्योंकि बेमतलब काम सिर्फ़ बुद्धिहीन पुरुष किया करते हैं। लेकिन अगर ये ख़्यालात दुरुस्त हैं तो फिर निष्काम कर्म कोई क्यों व कैसे करेगा? और उनसे मोक्ष कैसे मिल सकता है? अगर पागलों की काररवाइयाँ निष्काम कर्म हैं तो मोक्ष के सबसे ज़्यादा हक़दार ये ही लोग होने चाहियें। मगर ऐसा नहीं है। निष्काम से मुराद "हर क़िस्म की कामना से राहित" नहीं है। बाज़ बुज़ुर्ग ईश्वर के अपर्ण कर्म करने की आज्ञा देते हैं और बाज़ इष्टदेव की दया व प्रसन्नता संमुख रखकर कर्म करने के लिये हिदायत करते हैं। सन्तमत यह सिखलाता है कि सच्चे प्रेमीजन को हर एक काम इस निमित्त करना चाहिये कि उसे सच्चे मालिक का प्रत्यक्ष दर्शन प्राप्त हो। इस कामना को दिल में रख कर अपने सब फ़रायज़ अदा करना निष्काम कर्म है। सच्चे मालिक के दर्शन की चाह को कामना नहीं कहते, इसे प्रेम कहते हैं। हर क़िस्म की कामना से रहित सिर्फ़ जीवन्मुक्त पुरुष हो सकते हैं। जीव सिर्फ़ अपने शरीर व मन के सुखों की चाह को ज़ेर डाल सकते हैं। इनको अपनी अध्यात्मिक उन्नति की चाह उसवक़्त तक ज़रूर दिल में रखनी होगी जबतक इनके हृदय की सब ग्रन्थियाँ न टूट जावें और इन्हें सच्चे मालिक का साक्षात्कार न होजावे। हृदय में ग्रन्थियाँ मौजूद रहते हुए हर क़िस्म की कामनाओं से रहित होने का ख़्याल आलस्य या शरारत की तरफ़ जलावेगा। आपको ग़लती के इस गढ़हे से होशियार रहना चाहिये।

बचन (१४)

अभ्यास के समय के अलावा भी अपने मन की सँभाल करना मुनासिब है।

जैसे उम्दा से उम्दा खाना ज़रा सी लापरवाई से बिगड़ जाता है और पुरानी से पुरानी दोस्ती ज़रा सी बदएहतियाती से दुश्मनी में बदल जाती है ऐसे ही मन की नेक से नेक हालत ज़रा सी लापरवाई या बद-एहतियाती से नाक़िस हालत में तब्दील हो जाती है और उसके दूर करने व पहली हालत के दोबारा पैदा करने के लिये शौक़ीन परमार्थी को दोबारा कोशिश करनी पड़ती है। चुनाँचे बहुत से सतसङ्गी भाइयों को इस मुश्किल का सामना करना पड़ता है और वे असली वजह न समझते हुए बार बार गिरते व उठते हैं। ये भाई परमार्थ का सच्चा शौक़ तो रखते हैं लेकिन यह ख़्याल करके कि गुरु महाराज की रक्षा का हाथ हमारे सिर पर है, अपने मन की सँभाल के मुतअल्लिक़ कोई ज़िम्मेवारी महसूस नहीं करते और सिवाय अभ्यास के वक़्त के उसे बेलगाम अपने अङ्गों में बरतने देते हैं। यह दुरुस्त है कि दुनिया के हिसाब से ये भाई निहायत उत्तम रहनी गहनी रखते हैं और किसी की मजाल नहीं कि इनकी चाल ढाल पर हर्फ़ लगा सके लेकिन आम दुनिया का नेक व बद की तमीज़ का आदर्श बमुक़ाबिले उस आदर्श के, जो योगाभ्यास की कमाई के लिये मतलूब है, निहायत अदना है इसलिये बहुत सी बातें, जो सोसायटी के रिवाज व गवर्नमेन्ट के क़वायद की रू से बिल्कुल जायज़ व दुरुस्त हैं, सच्चे परमार्थ के हिसाब से महज़ नाजायज़ व नामु

नासिब हैं। मसलन् अपनी औलाद के साथ दिल व जान से मुहब्बत करना अपनी दौलत व इज़्ज़त की तरक़्क़ी के लिये हमातन कोशिश करना आम तौर पर जायज़ समझा जाता है लेकिन योगाभ्यास के शौक़ीन को इन बातों से उपरामचित्त रहना होगा क्योंकि दिल में बग़ैर सच्चा वैराग्य पैदा हुए मन की चंचलता व मलिनता में हर्गिज़ कमी नहीं आ सकती और बिला इसके अन्तर में सुरत यानी तवज्जुह का लगना और ध्यान व शब्द के रस का प्राप्त होना नामुमकिन है। इसलिये सब सत्सङ्गी भाइयों के लिये मुनासिब है कि अभ्यास के वक़्त के अलावा भी अपने मन की ख़ूब निगहदाश्त करें। उनको चाहिये कि हमेशा के लिये ज़ेहननशीन कर लें कि जैसे एक मर्तबा ज़ोर से हिलाया हुआ तार अर्से तक हिलता रहता है ऐसे ही एक मर्तबा काम, क्रोध वग़ैरह किसी अङ्ग में ज़ोर के साथ बर्ताव करने पर मन का वेग उस अङ्ग की जानिब अर्से तक रवाँ रहता है। इसके अलावा यह भी याद रक्खें कि ज़्यादा अर्से तक किसी काम में लगे रहने से भी मन बेक़ाबू होकर उसी काम की जानिब बार बार रुख़ करता है और काम ख़तम होने पर उसी के मुतअल्लिक़ गुनावन उठाता है। यहाँ तक कि चार पाँच घंटे लगातार सोए रहने से भी सुरत का इस क़दर बिखेर हो जाता है कि जागने पर बिला ख़ास कोशिश किये सोने से पेश्तर की हालत पैदा नहीं होती। मतलब यह है कि शौक़ीन परमार्थी को चाहिये कि न तो ज़ोर या वेग के साथ मन के किसी अंग में बर्ताव करे और न ही लगातार अर्से तक किसी काम या पदार्थ की जानिब मुख़ातिब रहे।

बाज़ लोग यह कहेंगे कि जबतक दुनिया में क़याम है और जब-तक दुनियवी फ़रायज़ ज़िम्मे हैं तब तक काम, क्रोध वग़ैरह अंगों में ज़ोर से बर्ताव करना या लगातार दुनियवी काम काज में मसरूफ़ रहना इन्सान के लिये मामूली बात है। कहने के लिये यह बात दुरुस्त है और ज़ाहिरा इन विघ्नों से बचना भी दुश्वार मालूम होता है लेकिन, जैसा कि सत्सङ्गियों के लिये हिदायत है, अगर कोई शख़्स जाग्रत् अवस्था में घंटे आध घंटे के बाद दो एक मिनट के लिये सुमिरन ध्यान करता रहे और नीज़ सोते वक़्त सुमिरन ध्यान किया करे यानी सुमिरन ध्यान करता हुआ सोया करे और सोने से पहिले अपने मन में दो एक मर्तबा कहले कि दो घंटे से ज़्यादा नींद का ग़लबा न रहे तो इन दोनों विघ्नों से सहज में नजात हो सकती है और हरवक़्त रसीलेपन व सिमटाव की हालत क़ायम रह सकती है। कुछ दिन आज़मा कर देखो कि इन हिदायात पर अमल करने से किस क़दर फ़ायदा होता है।

'काटते और खोदते रस्ता रहो।
मरते दम तक एक दम ग़ाफ़िल न हो॥'

बचन (१५)

नाम का असली सुमिरन।

'जिन्ही नाम ध्याइया, गए मुशक़्क़त घाल।
नानक ते मुख उज्जले, केती छूटे नाल॥'

श्री गुरु ग्रन्थ साहब में गुरु नानक साहब की ऊपर लिखी कड़ी आती है। इसके मानी हैं कि जो लोग नाम को ध्याते हैं उनकी मुशक़्क़त यानी

जन्म मरण की तकलीफ़ का ख़ातमा हो जाता है, उनके चेहरे उज्ज्वल यानी रोशन हो जाते हैं और कितनेही उनके सङ्ग जन्म मरण से छूट जाते हैं। गुरू साहब का यह वचन सुनहरे अक्षरों में लिखने लायक़ है क्योंकि जिस अमल के लिये इस वचन में उपदेश फ़र्माया गया है वह सन्तमत का बुनयादी उसूल है और कई एक दूसरे मतों की जान है। इसी उसूल पर कारबन्द रहते हुए सिक्ख, हिन्दू, मुसलमान व ईसाई वग़ैरह असहाब रोज़ाना अपने अपने इष्टदेव के पवित्र नाम का जप करते हैं या अपने मज़हब के पवित्र ग्रन्थों का पाठ करते हैं मगर अफ़सोस के साथ लिखना पड़ता है कि नाम के ध्यान यानी सुमिरन करने की असली युक्ति से अक्सर भाई क़तई नावाक़िफ़ हैं। ये बेचारे अपनी जानिब से हरतरह की कोशिश करते हैं यानी सवेरे उठकर स्नान करते हैं या हाथ मुँह धोते हैं, माला या तसबीह से हज़ार या लाख बार जप करते हैं या बाक़ायदा मुतबर्रिक पुस्तकों का समझ समझ कर पाठ करते हैं—और ऐसा करने से उनको बहुत कुछ तक़वियत व शान्ति भी प्राप्त होती है-मगर चूँकि इनमें से कोई भी नाम के ध्याने की असली तरकीब नहीं है इसलिये वे इस अमल के असली नफ़े से महरूम रहते हैं। शेख़ फ़रीदुद्दीन अत्तार फ़र्माते हैं:—

'यादे हक़ आमद गिज़ा ईं रूह रा।
मरहम आमद ईं दिले मजरूह रा॥
मोमिना ज़िक्रे ख़ुदा बिसयार गोय।
ता बयाबी दर दो आलम आबरूय॥
ज़िक्र बर सह वजह बाशद बेख़िलाफ़।'

तू नदानी ई सखुन रा अज़ गज़ाफ़ ॥
आम रा न बुवद वजुज़ ज़िक्रे ज़बाँ ।
ज़िक्रे खासाँ बाशद अज़ दिल बेगुमाँ ॥
ज़िक्र खासुल्खास ज़िक्रे सिर्रे बुवद ।
हरकि ज़ाकिर नीस्त ओ खासिर शवद ॥"

यानी "मालिक के नाम का सुमिरन रूह की खुराक है और जख़्मी दिल के लिये मरहम का काम देता है। ऐ प्रेमी जन ! मालिक का सुमिरन खूब कर ताकि दोनों आलम में तेरी इज़्जत हो । सुमिरन के तीन तरीक़े हैं लेकिन तू हँसी समझता है और इसलिये इस भेद से नावाक़िफ़ है । आम लोग सिर्फ़ ज़बान से सुमिरन करते हैं। यह पहिला तरीक़ा है, लेकिन ख़ास ख़ास लोग बिलाशुबह दिल से सुमिरन करते हैं यह दूसरा तरीक़ा है, मगर ख़ासुल्ख़ास यानी बिरले प्रेमी गुप्त तरीक़े से सुमिरन करते हैं, यह तीसरा तरीक़ा है । जो कोई सुमिरन नहीं करता वह नुक़्सान उठाता है ।"

इससे ज़ाहिर है कि शेख़ साहब बख़ूबी जानते थे कि ज़बान व दिल से ज़िक्र करने के अलावा एक और भी पोशीदा तरीक़ा विर्द का है। सन्तमत की बोली में इसी तरीक़े को सुरत या रूह की ज़बान से नाम का सुमिरन कहते हैं। जब कोई शख़्स राधास्वामीमत में शरीक होता है तो उसको नाम के सुमिरन का यह तीसरा तरीक़ा बख़ूबी ज़ेहननशीन करा दिया जाता है और उसको समझा दिया जाता है कि हरचन्द ज़बान व दिल से सुमिरन करना कोई बुरी बात नहीं है लेकिन असली रूहानी नफ़ा सुरत की ज़बान से सुमिरन करने ही से हासिल होता है।

आम लोगों को यह भी मालूम नहीं कि उनके जिस्म में उनकी सुरत की निशस्त का मुक़ाम कहाँ पर है, हालाँकि वे बखूबी जानते हैं कि क़ुदरत के अन्दर तमाम कुव्वतें एक मरकज़ (केन्द्र) से अपने मुहीत (मण्डल) के अन्दर फैलती हैं और इस क़ायदे की रू से हर जिस्म के अन्दर कोई ऐसा मरकज़ होना चाहिये कि जहाँ से निकल कर रूह की धारें जिस्म के मुख़्तलिफ़ हिस्सों में फैलती हैं। सुरत की ज़बान से सुमिरन रूह की निशस्त के मुक़ाम पर किया जाता है। शुरू में शौक़ीन अभ्यासी को यह अमल निहायत मुश्किल महसूस होता है क्योंकि उसकी तवज्जुह बार बार ज़बान व दिल की जानिब मुखातिब होती है लेकिन महीने आध महीने की कशमकश के बाद सहूलियत की सूरत नमूदार होने लगती है और जो आनन्द व सरूर शाग़िल को हासिल होता है, बयान से बाहर है। ज़बानी सुमिरन, जिसको फ़ारसी में ज़िक्रुल्लसान् कहते हैं, सबसे अदना अमल है। इसकी निस्बत कबीर साहब ने फ़र्माया है:—

'माला तो कर में फिरे जिभ्या मुख के माहिं।
मनुआ तो दह दिस फिरै यह तो सुमिरन नाहिं॥'

यानी माला तो तुम्हारे हाथ में घूमती है और ज़बान तुम्हारे मुहँ के अन्दर चलती है और मन तुम्हारा दस दिशाओं में डोलता है, यह तरीक़ा सुमिरन का नहीं है।

मन से सुमिरन बमुक़ाबिले ज़बान से सुमिरन के बहुत अच्छा है लेकिन इस अमल से महज़ दिल पर असर होता है यानी एक हद तक दिल की सफ़ाई हासिल होती है। वह असली फ़ायदा, जिसका ज़िक्र गुरू नानक साहब ने फ़र्माया, दूसरी ही चीज़ है। वह फ़ायदा तभी हासिल हो सकता

है जब इन्सान को अपने प्राण पर क़ाबू हो। प्राण से हमारी मुराद साँस लेते वक़्त अन्दर जाने व बाहर आने वाली हवा से नहीं है बल्कि उस शक्ति से है जिसके बल से फेफड़े व जिस्म के दीगर आज़ा हरकत करते हैं। यह शक्ति हरशख़्स के अन्दर मौजूद व कारकुन् है लेकिन बेक़ाबू है। इस पर क़ाबू तवज्जुह की यकसूई से मिलता है और तवज्जुह की यकसूई यकसूई पैदा करने वाले शग़ल की कमाई से पैदा होती है और नाम का सुमिरन तवज्जुह की यकसूई पैदा करने वाला शग़ल है इसलिये ज़ाहिर है कि जबतक सुमिरन करने वाले के हाथ, ज़बान व दिल साकिन न होंगे तबतक उसको तवज्जुह की यकसूई प्राप्त न होगी और उस वक़्त तक उसका सुमिरन ज़िक्रुल्लसान् या ज़िक्रुल्क़लब ही रहेगा।

ब्रह्माण्डपुराण में एक जगह बतलाया गया है कि जन्म से हर शख़्स शूद्र ही होता है, संस्कार करने पर द्विज कहलाता है, वेद पढ़ने से विप्र होजाता है और ब्रह्म को जानने से ब्राह्मण बनता है। इससे ज़ाहिर है कि वेदादि शास्त्रों का पढ़ना हर चन्द मुफ़ीद व उत्तम काम है लेकिन इस अमल से इन्सान को सिर्फ़ विप्रपदवी मिलती है और ब्राह्मणपदवी ब्रह्म के साक्षात्कार ही से हासिल होती है। दूसरे लफ़्ज़ों में शास्त्रों का पढ़ना एक बात है और ब्रह्म का साक्षात्कार दूसरी बात है। इसी तरह छान्दोग्य उपनिषद् में एक जगह ज़िक्र है कि नारद जी सनत्कुमार जी के पास आये और कहने लगे—हे भगवन्! मुझे शिक्षा दो। सनत्कुमार जी ने जवाब दिया—जो कुछ तुम जानते हो मुझे वह बतलाओ, तब मैं उसके आगे शिक्षा दूँगा। नारद जी ने कहा—मैं ऋग्वेद पढ़ा हूँ नीज़ यजुर्वेद, सामवेद और चौथा अथर्ववेद, पाँचवाँ इतिहास पुराण, वेदों का वेद यानी

व्याकरण, पितरों की विद्या, राशिविद्या, दैव विद्या, निधिविद्या, वाकोवाक्य विद्या, एकायनविद्या, देवविद्या, ब्रह्मविद्या, भूतविद्या, क्षात्रविद्या, नक्षत्रविद्या, सर्पविद्या और देवजन की विद्या, ये सब मैंने पढ़ी हैं लेकिन हे भगवन्! मैं सिर्फ़ मंत्रविद् यानी मंत्रों का जानने वाला हूँ, आत्मविद् यानी आत्मा का जानने वाला नहीं हूँ। हे भगवन्! मैंने आप जैसे महापुरुषों से सुना है कि जो आत्मविद् होता है वह शोक यानी दुःख के पार पहुँच जाता है। ऐसे शोक में पड़ा हुआ मैं हूं। ऐसे शोक में पड़े हुए मुझको आप दुःख के पार पहुँचा दें।

इसपर सनत्कुमार जी ने फ़र्माया—यह सब, जो तुमने पढ़ा है, केवल नाम है, असलियत या आत्मा नहीं है। ऋग्, यजुर्, साम वग़ैरह सबके सब नामही हैं। तुम नाम की उपासना करो लेकिन जो नाम की उपासना करता है उसका हुक्म जहाँ तक नाम की पहुँच है वहीं तक जाता है। नारदजी यह सुनकर चौंक उठे और पूछने लगे—महाराज! क्या नाम से बढ़कर भी कोई वस्तु है? (जवाब) हाँ, नाम से बढ़कर है (सवाल) मुझे वह बताइये (जवाब) वाणी नाम से बढ़कर है क्योंकि वाणी ही इन सबको पूरे तौर पर जतलाती है। ऋग्वेद आदि हमें वाणी ही समझाती है। (सवाल) क्या वाणी से भी कोई चीज़ बढ़कर है? (जवाब) हाँ, वाणी से बढ़कर मन है वग़ैरह वग़ैरह इसी तरह सिलसिले को जारी रखकर सनत्कुमार जी ने मन से बढ़कर संकल्प यानी ख़्याल को बताया और उससे बढ़कर चित्त को और चित्त से बढ़कर ध्यान को और ध्यान से बढ़कर विज्ञान को और विज्ञान से बढ़कर बल को और बल से बढ़कर अन्न को और अन्न से बढ़कर जल को और जल से बढ़कर तेज को और तेज से बढ़कर आकाश को और आकाश से बढ़कर स्मृति यानी

याददाश्त को और स्मृति से बढ़कर आशा को और आशा से बढ़कर प्राण को बतलाया और हर एक की महिमा बयान करते हुए यह ज़ाहिर किया कि जिसकी तुम उपासना करोगे उसकी पहुँच तक तुमको स्वतंत्रता या आज़ादी प्राप्त होगी। प्राण की निस्बत अलबत्ता यह फ़र्माया कि प्राण ही सब कुछ है यानी प्राण ही माता, पिता और सारा जङ्गम व स्थावर है और जो इस प्रकार प्राण को सब कुछ देखता, मानता और समझता है वह अतिवादी बनता है। अतिवादी उस पुरुष को कहते हैं जो कोई ऐसी वस्तु को प्रकट करे जो पहिले किसी को मालूम न हो।

इस कथा से प्रकट है कि ऋषिलोग भी ज़बान व दिल की पहुँच से परे प्राण या आत्मशक्ति की महिमा बखूबी समझते थे और उनकी शिक्षा यही थी कि बग़ैर इस शक्ति के जगाये कोई इन्सान दुख सुख व जन्म मरण के चक्र से नहीं छूट सकता। यही बात गुरू नानक साहब व दीगर सन्तों व फ़क़ीरों ने सिखलाई और यही बात राधास्वामीमत में सिखलाई जाती है। राधास्वामीमत में जो सुमिरन की युक्ति बतलाई जाती है उसकी कमाई से यही शक्ति जागती है। ज़बान या दिल से मंत्रों या पवित्र नामों का उच्चारण करना हरचन्द एक हद तक निहायत मुफ़ीद है लेकिन इससे असली रूहानी फ़ायदा हासिल नहीं होसकता।

बचन (१६)

ध्यान का असली साधन।

बचन नम्बर १५ में चन्द महापुरुषों के बचन पेश करके यह दिखलाने की कोशिश की गई थी कि जिन तरीक़ों से आम लोग मालिक के

नाम का सुमिरन करते हैं उनसे असली रूहानी नफ़ा नहीं हो सकता और यह कि असली रूहानी नफ़ा हासिल करने के लिये ज़रूरी है कि नाम का सुमिरन सुरत की ज़बान से किया जावे। अब हम यह ज़ाहिर करने की कोशिश करेंगे कि सुमिरन की तरह ध्यान के मुतअल्लिक़ भी अवाम के अन्दर भारी ग़लतफ़हमियाँ फैल रही हैं। अक्सर असहाब देवता की मूर्ति या तस्वीर के रूबरू सिर झुका कर और आँखें बन्द करके अपनी तकलीफ़ का ज़िक्र या ख़ुशी का शुकराना बजा लाने ही को ध्यान समझते हैं। बाज़ भाई किसी मूर्ति या तस्वीर या मुतबर्रिक चिन्ह या स्थान पर हार, फूल या नक़दी चढ़ा कर कुछ देर के लिये बैठ जाते हैं और मूर्ति या तस्वीर की शक्ल का अन्तर में ख़्याल करते हैं। बाज़ असहाब व्यापक-स्वरूप परमात्मा का अनुमान करने की कोशिश करते हैं यानी आँखें बन्द करके आकाश की तरह व्यापक, सूर्य या ज्योति की तरह रोशन, दयालु, कृपालु, सर्वशक्तिमान्, निराकार परमात्मा का ध्यान लगाते हैं। बाज़ प्रेमी किसी मूर्ति या तस्वीर पर दृष्टि लगा कर घंटे आध घंटे जम कर बैठते हैं। बाज़ अभ्यासी मेरुदण्ड यानी रीढ़ की हड्डी के निचले सिरे पर सफ़ेद या पाँच रंग की रोशनी का ध्यान करते हैं। बाज़ पुरुषार्थी नाभि के मुक़ाम पर कृष्ण महाराज या महात्मा बुद्ध की शक्ल का ख़्याल करते हैं। बाज़ भाई अपनी नाक के सिरे पर दृष्टि जमा कर चित्त एकाग्र करने की कोशिश करते हैं। ग़रज़ेकि मुख़्तलिफ़ शौक़ीन प्रेमी अपनी अपनी रोशनी के मुवाफ़िक़ अनेक प्रकार से अपने इष्टदेव या किसी वस्तु का ध्यान लगाते हैं और अक्सर कामयाब होकर ऐश्वर्य्य, सुख, शान्ति या अन्दरूनी तजरुबात हासिल करते हैं। इसमें शक नहीं कि महज़ खान, पान व खेल

कूद में ज़िन्दगी ख़तम कर देने के मुक़ाबिले में किसी तरीक़े व किसी वजह से भी तवज्जुह का अन्तर्मुख जोड़ना क़ाबिले तारीफ़ व नफ़ाबख़्श अमल है लेकिन वाज़ह हो कि मुनासिब तरीक़े पर ध्यान का शग़ल करने से इन्सान को निहायत आला दर्जे का परमार्थी नफ़ा हासिल हो सकता है। तस्वीर व मूर्ति वग़ैरह की पूजा के बारे में तुलसीदास जी फ़र्माते हैं:—

'कल्पवृक्ष को चित्र लिखि, कीन्हे विनय हज़ार।
वित्त न पावे ताहि सों, तुलसी देख विचार॥'

यानी ऐ तुलसी! अगर कोई शख़्स कल्पवृक्ष की तस्वीर खींच कर उससे हज़ार मर्तबे भी दरख़्वास्त करे तो भी कुछ न पावेगा, इस बात को ग़ौर के साथ विचारो।

इस मायूसी की वजह बयान की मुहताज नहीं है। कल्पवृक्ष की तस्वीर असली कल्पवृक्ष का काम नहीं दे सकती इसलिये जो शख़्स कल्पवृक्ष से मनमाने फल हासिल किया चाहता है उसको असली कल्पवृक्ष तलाश करके उससे अपनी ख़्वाहिश ज़ाहिर करनी होगी। इसी तरह हरचन्द तस्वीर या मूर्ति का ध्यान तवज्जुह की यकसूई में और मन को इष्टदेवता की जानिब मुख़ातिब करने में बहुत कुछ मदद देता है लेकिन यह उम्मीद करना कि वह तस्वीर या मूर्ति इष्टदेवता की तरह सब कामनाएँ पूरी कर सकती है, सरासर ग़लत है।

ध्यान के मज़मून पर पतञ्जलि महाराज ने बहुत कुछ रोशनी डाली है क्योंकि जिस योगसाधन का आपने अनुशासन फ़र्माया, ध्यान उसका एक ज़रूरी अङ्ग है। चुनाँचे आपका एक सूत्र है:—

"वीतरागविषयं वा चित्तम्"

यानी राग (दुनिया की मुहब्बत) से रहित पुरुषों के स्वरूप का ध्यान करने से चित्त के विक्षेप दूर होते हैं।

इसके बाद आप फ़र्माते हैं:—

"यथाऽभिमतध्यानाद्वा"

यानी जिसमें जिसका प्यार है उसका ध्यान करने से भी मन की स्थिति होती है। इससे ज़ाहिर है कि ध्यान का अभ्यास करने से मन को स्थिरता प्राप्त होती है और अभ्यासी साधन में आगे क़दम बढ़ाने के क़ाबिल हो जाता है और अगर कोई शख़्स इस निमित्त किसी देवता की मूर्ति या किसी महात्मा की तस्वीर का ध्यान करता है तो उसका यह अमल निहायत दुरुस्त है। उसको इस अमल से मन के विघ्न दूर करने में ज़रूर कामयाबी होगी लेकिन इससे यह भी ज़ाहिर है कि उस शख़्स का यह अमल मूर्तिपूजा या तस्वीरपरस्ती नहीं है। चुनाँचे राधास्वामीमत में हरचन्द मत के आचार्यों की तसावीर व निशानात का अदब बजा लाते हैं लेकिन कोई समझदार सत्सङ्गी इन तस्वीरों व निशानों से किसी क़िस्म की पुकार प्रार्थना नहीं करता और न ही ऐसा करने के लिये इजाज़त है। तस्वीरों से सिर्फ़ चित्त के एकाग्र करने में मदद ली जाती है क्योंकि जिन महापुरुषों की वे तस्वीरें हैं न सिर्फ़ वे वीतराग यानी दुनिया की मुहब्बत से आज़ाद थे बल्कि सत्सङ्गियों को उनके साथ कमाल दर्जे की मुहब्बत भी है।

इसपर बाज़ असहाब एतराज़ कर सकते हैं कि हम निराकार, सर्वव्यापक परमात्मा ही का ध्यान क्यों न करें, जड़ पदार्थों का ध्यान क्यों करें? जवाब यह है कि किसी मुआमले की निस्बत एतराज़ करना एक

बात है और तजरुबे के बाद फ़ैसला करना दूसरी बात है। अगर कोई शख़्स व्यापक व निराकार परमात्मा का ध्यान करके चित्त की एकाग्रता और ध्यान के बाद समाधि की अवस्था में क़दम रखनेकी क़ाबिलियत हासिल कर सकता है तो उसे किसी तस्वीर या मूर्ति का ध्यान करने की ज़रूरत नहीं है मगर आम इन्सानों से व्यापक व निराकार परमात्मा का ध्यान बन पड़ना निहायत कठिन है। चुनाँचे कृष्ण महाराज गीता में फ़र्माते हैं कि अव्यक्त यानी ग़ायब का ध्यान करने में सख़्त मुश्किलात का सामाना होता है और व्यक्त यानी प्रकट का ध्यान आसानी से हो सकता है। लेकिन जैसाकि अभी बयान किया गया अगर कोई शख़्स वाक़ई (यानी महज़ एतराज़ करने के लिये नहीं) ग़ायब का ध्यान करके अपनी दिली मुराद हासिल कर सकता है तो उसको न राधास्वामीमत की शिक्षा पर अमल करने की ज़रूरत है और न पतञ्जलि महाराज के मश्वरे से काम लेने की ज़रूरत है। ध्यान का अमल समाधि की अवस्था हासिल करने के लिये महज़ एक दर्मियानी ज़ीना है और व्यक्त का ध्यान करने से अभ्यासी बआसानी इस दर्मियानी ज़ीने पर चढ़ सकता है लेकिन अगर कोई शख़्स किसी दूसरे तरीक़े से इस ज़ीने पर चढ़ जाय तो क्या मुज़ायक़ा है, मतलब ज़ीना पर चढ़ने और आगे क़दम बढ़ाने से है। अब ग़ौरतलब यह है कि ध्यान किस मुक़ाम पर करना चाहिये। सन्तमत यानी राधास्वामीमत में ध्यान का अभ्यास उसी मुक़ाम पर किया जाता है जहाँ सुमिरन का अमल किया जाता है क्योंकि ध्यान करने से जब सुरत या तवज्जुह उस मुक़ाम पर किसी क़दर जम जाती है तो अभ्यासी के अन्दर आप से आप उस मुक़ाम की गुप्त शक्ति जाग जाती है जिसके प्रताप से अभ्यासी में उस मुक़ाम पर

सुरत ठहराने या समाधि लगाने की क़ाबिलियत पैदा हो जाती है और फिर ऊपर से आने वाली धुन प्रकट होने से अभ्यासी की सुरत उस मुक़ाम से आगे सरक या चढ़ सकती है। जो लोग मेरुदण्ड, नाभि या हृदय के मुक़ामात पर ध्यान जमाते हैं उनके अन्दर भी इन मुक़ामात की शक्तियाँ जाग जाती हैं मगर अक्सर असहाब उस रस व आनन्द में, जो ध्यान जमाने से प्रकट होता है, मगन होकर वहीं लीन हो जाते हैं और ख़्याल करने लगते हैं कि योगाभ्यास की आख़िरी मंज़िल उन्हें हासिल हो गई है।

वचन (१७)

एक प्रश्न का उत्तर।

एक साहब सवाल करते हैं कि राधास्वामीमत में एक सन्त सतगुरु के गुप्त होने पर उनके जानशीन किस क़ायदे से मुक़र्रर होते हैं? इसका जवाब मुख़्तसिर अलफ़ाज़ में पोथी सारबचन नसर, भाग दूसरा के बचन नं० २५० में मुन्दर्ज है यानी यह कि एक सन्त सतगुरु के गुप्त होने पर गुरुधरा, जिसको निजधार भी कहते हैं, जानशीन के अन्दर आ समाती है और उसके बाद जीवों की सँभाल का सिलसिला जानशीन की मार्फ़त जारी रहता है। दुनिया में लीडर या पेशवा आम तौर पर चार तरीक़ों से मुक़र्रर होते हैं:—अव्वल अवाम की कसरतराय से, दोयम् इन्तख़ाब से, सोयम् नामज़दगी से, चहारम् विरासत (वंशक्रम) से। अव्वल सूरत में कुल जमाअत या सङ्गत को अपनी राय ज़ाहिर करने का मौक़ा दिया जाता है और

अवाम जिस शख़्स के हक़ में होते हैं वह लीडर या प्रेज़ीडेन्ट हो जाता है। दूसरी सूरत में ख़ास अशख़ास,जो पब्लिक के नुमायन्दे (प्रतिनिधि) होते हैं,अपने में से या अवाम में से विशेष योग्य भाई को चुनते हैं। तीसरी सूरत में एक लीडर अपनी मौजूदगी में अपना जानशीन नामज़द कर देता है और चौथी सूरत में बाप के बाद बेटा जानशीन होता है। इन चार तरीक़ों के अलावा एक और भी रिवाज देखने में आता है यानी जिस शख़्स के हाथ में इन्तिज़ाम की बागडोर या फ़ौज व ख़ज़ाना रहता है वह ज़बर-दस्ती अवाम पर हुक्मरानी करने लगता है और अवाम चुप चाप उसकी ताबेदारी क़बूल कर लेते हैं जैसाकि हाल में शाह ईरान की निस्बत देखने में आया है। लेकिन राधास्वामीमत में इन पाँचों में से कोई भी तरीक़ा इस्तेमाल नहीं किया जाता। जब किसी जानशीन के अन्दर निजधार आ समाती है तो प्रेमीजनों को उस जानशीन की ख़िदमत में हाज़िर होने के लिये साफ़ अन्दरूनी हिदायात मिलती हैं। ये हिदायात पाकर प्रेमीजन पहचान के लिये उनके चरणों में हाज़िर होते हैं और भरपूर इतमीनान हासिल होने पर उनमें श्रद्धा व भाव लाते हैं। मनुष्य का स्वभाव है कि कोई भी मुश्किल काम सिर आने पर तबिअत परेशान हो जाती है और वह बार बार उस काम के मुतअल्लिक़ सोचता है या मश्वरा लेता है लेकिन सुरतवन्त पुरुष यानी जिनके अन्दर आत्मशक्ति का प्रकाश और जिनके ज़िम्मे जीवों के कल्याण के मुतअल्लिक़ सेवा सुपुर्द होती है वे सोच विचार के बजाय अनुभव से काम लेते हैं। नीज़ निज धार का प्रवेश होने पर उन्हें अपने मिशन के मुतअल्लिक़ आयन्दा का हाल मालूम हो जाता है इसलिये मुश्किलें सामने आने पर वे पहले से तय्यार रहते हैं और नीज़

अनुभव द्वारा उनको हिदायात मिलती रहती हैं कि किस मौके पर क्या कारर्वाई अमल में लानी चाहिये। दूसरे लफ़्ज़ों में सुरतवन्त पुरुष दुनिया के मुश्किल से मुश्किल काम अचिन्त रह कर करते हैं और जो प्रेमी जन परख पहचान के लिये उनके चरणों में हाज़िर होते हैं उनके इस गुण को बआसानी परख सकते हैं। इसके अलावा उनसे तअल्लुक़ होने पर सत्सङ्ग के वक़्त व नीज़ अभ्यास की हालत में ख़ास सहूलियत और रस व आनन्द की कैफ़ियत महसूस करते हैं। इस क़िस्म की हिदायात व अलामात हासिल होने पर रफ़्ता रफ़्ता सत्सङ्गी अवाम को सतगुरु वक़्त की निस्बत ऐतक़ाद क़ायम हो जाता है और थोड़े अर्से में सिवाय चन्द अभागी जीवों के कुल सत्सङ्गमण्डली पिछले सन्त सतगुरु के ज़माने की तरह प्रीति व प्रतीति के साथ सत्सङ्ग के मुतअल्लिक़ अन्दरूनी व बेरूनी कारर्वाई में मसरूफ़ हो जाती है। दूसरे लफ़्ज़ों में 'सन्तसतगुरु' वक़्त मदद व परख पहचान के तलबगार प्रेमीजनों को अन्तर व बाहर लाकलाम परख पहचान देकर अपने चरणों में लगा लेते हैं। जो असहाब आयन्दा परमार्थ की तरक़्क़ी के शौक़ीन नहीं होते या जिनके दिल में पिछले सन्त सतगुरु के ज़माने में जानशीन के लिये किसी वजह से मलिनता पैदा हो जाती है वे तहक़ीक़ात का दर्वाज़ा बन्द करके घर पर बैठे रहते हैं और सन्त सतगुरु वक़्त की प्रकट दया से महरूम रहते हैं। ऐसे शख़्स मरने के बाद अलबत्ता ऐसे ख़ान्दानों में जन्म पाते हैं कि जहाँ आसानी से छोटी उम्र ही में सतसङ्ग में शरीक हो जायँ और ऐसा करने पर उनकी परमार्थी तरक़्क़ी का सिलसला फिर से जारी हो जाता है। इसमें शक नहीं कि जानशीनी के मुतअल्लिक़ यह क़ायदा निहायत अजीब व ग़रीब है लेकिन गुज़श्ता

५० सालों का तजुरबा साफ़ दिखलाता है कि इससे बेहतर और कोई तरीक़ा नहीं हो सकता और सिवाय समर्थ पुरुष के कोई दूसरा शख़्स इस क़ायदे पर चलकर अपने काम व इन्तिज़ाम का सिलसिला जारी नहीं रख सकता ।

बचन (१८)

सार बचन नज़म (छन्दबन्द) के बचन नम्बर ३५ के बारहवें शब्द का अर्थ ।

प्रेम भरी मेरी घट की गगरिया ।
छूट गई मों से मलिन नगरिया ॥ १ ॥

मेरी घट की गागरी (मुराद निज घट से है) प्रेम से भर गई जिसका नतीजा यह हुआ कि मेरी सुरत इस मलिनमायादेश से अलहदा हो गई। मालिनमायादेश से पार होने में मुझे सख़्त मुश्किल का सामना करना पड़ा क्योंकि:—

नौ दूतन मों से धूम मचाई ।
दसवें ने मोहिं खींच चढ़ाई ॥ २ ॥

नौ द्वारे, जिनमें मेरी सुरत का हमेशा से वर्ताव था, सुरत को जकड़े हुए थे और अपनी तरफ़ उसको ज़ोर से खींचते थे लेकिन घट में प्रेम भरपूर रहने की बदौलत मेरी सुरत दसवें द्वार की जानिब चढ़ गई ।

इस दरमियान में—

हंसमंडली फ़ौज लड़ाई।
काल दुष्ट अब पीठ दिखाई॥ ३॥

मेरी अन्तर्मुखी वृत्तियों ने, जो निहायत निर्मलरूप थीं और जिनको हंसों की फ़ौज कहा जा सकता है, बहिर्मुखी वृत्तियों के साथ खूब जंग का और इस देवासुरसंग्राम का नतीजा यह हुआ कि असुर-वृत्तियों का पूर्ण पराजय हुआ और काल यानी मन, जो उनका मुखिया था, पराजित होगया। उसके बाद—

माया आई मोहिं लुभावन।
कनक कामिनी बान छुड़ावन॥ ४॥

माया ने मुझे लुभाने की कोशिश की और दौलत व स्त्री भोग के बान यानी तीर मेरी जानिब छोड़े मगर उसकी भी कुछ पेश न गई, क्योंकि:—

मैं भी उमँग नवीन सँभारी।
मार लिया दल उसका भारी॥ ५॥

मैं नई नई उमंग यानी प्रेम की लहर अपने घट में उठाने लगा। नतीजा यह हुआ कि माया का भारी दल भी पराजित हो गया।

भागी माया छोड़ा देस।
मैं सतगुरु को करूँ आदेस॥ ६॥

फ़ौज के हार जाने पर माया ने मेरा रास्ता छोड़ दिया यानी मायिक वृत्तियाँ ग़ायब होगई। मैं इस फ़तह के लिये गुरु महाराज के चरणों में बार बार वन्दना करता हूँ।

सतगुरु पकड़ी अब मोरी बहियाँ।
खींच चढ़ाया गगन मँझैयाँ ॥ ७ ॥
धुन सुन कर अब भई निहाल।
सत्तपुरुष मेरे दीन दयाल ॥ ८ ॥

गुरु महाराज ने मेरा बाजू पकड़ कर मुझे गगन यानी आकाश की जानिब खींचा यानी गुरुस्वरूप का दर्शन करती हुई मेरी सुरत आकाशमार्ग से चली और अन्तरी शब्द सुन कर निहायत मगन हुई। मेरे सतगुरु बड़े दीनदयाल हैं, मैं किस ज़बान से उनकी कृपा का शुकराना अदा करूँ। उन्हों ने मुझ से दीन व नाकारा को अन्तर में खींच कर अपने से स्पर्श फ़र्माया यानी उनकी कृपा से मेरी सुरत ने शब्दस्वरूप सतगुरु से स्पर्श किया—

दया करी मोहिं अङ्ग लगाई।
चरन ओट गहि सरन समाई ॥ ९ ॥

शब्द से मेल होने पर मेरी सुरत उनके चरणों की पूर्ण आश्रित हो गई यानी मेरी सुरत का रुख़ सर्वाङ्ग शब्द की जानिब होगया और उसके बाद—

कोटि जन्म की ख़बर जनाई।
जन्म मरन अब दूर नसाई ॥ १० ॥
प्रेम प्रीति का मिला ख़ज़ाना।
जीतरीति गुरुशब्द पिछाना ॥ ११ ॥
शब्द पाय सतशब्द पुकारी।
चली सुरत और निज धुन धारी ॥ १२ ॥

तत्काल मेरी सुरत चेतन हो गई यानी मेरी सुरत के ऊपर से एक एक करके सब गिलाफ़ दूर होकर मुझे आत्मज्ञान प्राप्त हुआ। ज्यों ज्यों ये गिलाफ़, जिन पर मेरे पिछले तमाम जन्मों के झीने संस्कार पड़े थे, उतरते थे त्यों त्यों मुझे अपने गुज़श्ता सब जन्मों का हाल मालूम होता था। यहाँतक कि हर तरह की नापाकी दूर होने पर मेरी सुरत हमेशा के लिये जन्म मरण के चक्र से आज़ाद हो गई और मुझे प्रेम प्रीति का ख़ज़ाना यानी भण्डार मिल गया और मुझे मैदान जीतने का ढंग आ गया। मैंने अन्तर में गुरुशब्द यानी त्रिकुटी स्थान का शब्द श्रवण किया और होते होते सत्यलोक का शब्द जारी हो गया। सुरत निज धुन यानी निज धाम से आने वाली धुन को पकड़ कर आगे बढ़ती चली और राधास्वामी दयाल के चरणों से वासिल हो गई (मिल गई)।

राधास्वामी अन्तरजामी।
गति उनकी कस करूँ बखानी ॥ १२ ॥

मैं राधास्वामी दयाल की गति क्योंकर बयान करूँ, मेरी ज़बान और मेरा दिल दोनों असमर्थ हैं। वह अन्तर्यामी ही इस भेद को जानते हैं।

वचन (१९)

क्या जगत् मिथ्या है ?

एक साहब प्रश्न करते हैं कि वेदान्तियों का यह कहना कि जगत् मिथ्या है और जगत् के साज़ व सामान और दुख सुख महज़ ख़्वाब व

ख़्याल हैं, कहाँ तक दुरुस्त है ? एक ज़माना था कि मुल्के हिन्दुस्तान में इस क़िस्म के विचार का बहुत ज़ोर था जिसका नतीजा यह हुआ कि अवाम ने यत्न व परिश्रम करना ही छोड़ दिया और लोग अपना ज़्यादा से ज़्यादा वक़्त सुस्ती व काहिली में ज़ाया करने लगे। अगर इस विचार का नतीजा यह होता कि हिन्दुस्तानी भाई संसार के भोग विलास को मिथ्या या असत्य समझ कर उनसे घृणा करने लगते और सत्य वस्तु यानी आत्मा या सुरत के साक्षात्कार के लिये यत्न व कोशिश करते तो कोई हर्ज न था बल्कि बहुत अच्छा होता क्योंकि आत्मशक्ति के जगने से आला दर्जे की समझ बूझ पैदा होकर उनको संसार की असलियत और इन्सानी फ़रायज़ (कर्त्तव्यों) का ठीक ठीक पता चल जाता। मगर, जैसा कि ऊपर बयान किया गया, लोग बदस्तूर राग, द्वेष के अङ्गों में बर्तते हुए मेहनत व यत्न के वक़्त संसार की असारता का बहाना पेश करके आलसी हो गये।

यह निर्णय करने के लिये आया संसार सत्य है या असत्य, अव्वल सत्य असत्य की तारीफ़ करनी होगी। अगर सत्य के मानी "जो सदा एकरस क़ायम रहे" क़रार दिये जावें यानी यह कि जिसमें कभी किसी क़िस्म की तब्दीली वाक़े न हो तो वाक़ई तमाम संसार नीज़ हमारा जिस्म व मन असत्य ठहरते हैं क्योंकि इन तीनों के अन्दर क्षण क्षण में तब्दीली वाक़े होती है। और अगर सत्य उसे कहें जिसके वजूद का इल्म पाँच ज्ञानेन्द्रियों व बुद्धि के इस्तेमाल करने से हासिल हो तो संसार सत्य क़रार पाता है। यह दुरुस्त है कि स्वप्न में हमारा जाग्रत् का अक्सर ज्ञान ग़लत हो जाता है, लेकिन साथ ही हम

यह भी जानते हैं कि जागने पर अक्सर स्वप्न का ज्ञान ग़लत होकर जाग्रत् का ज्ञान फिर सत्य हो जाता है। मतलब यह है कि जब हम स्वप्न में उन औज़ारों का इस्तेमाल ही तर्क कर देते हैं जिन्हें हम जाग्रत् अवस्था में इस्तेमाल करते हैं तो यह मामूली बात है कि स्वप्न में हमें जाग्रत् अवस्था का ज्ञान अनुभव न हो और अगर कोई शख़्स, जो जाग्रत् अवस्था में है और अपनी आँखों से सामने खड़े हाथी को देख रहा है, आँखें बन्द करके यह कहे कि मेरा हाथी का ज्ञान ग़लत था क्योंकि अब हाथी की शक्ल के बजाय अँधेरा दीखता है तो उसका यह कथन अयुक्त यानी ग़लत होगा, इसी तरह जाग्रत् अवस्था के तजरुबात स्वप्न में न मिलने से उनको ग़लत क़रार देना नादुरुस्त है। सन्तमत यह सिखलाता है कि संसार यानी प्रकृति अदना दर्जे का चेतन है और आत्मा यानी सुरत आला दर्जे का चेतन है। आत्मा व प्रकृति का संयोग होने पर, जिसे जड़-चेतन की ग्रन्थि कहते हैं, एक तीसरी शक्ति पैदा हो जाती है, जिसे जीवात्मा कहते हैं। यह जीवात्मा ही प्रश्न करती है और जीवात्मा ही अपने बल से प्रश्नों का उत्तर देती है। अगर कोई जीवात्मा मुनासिब साधन करके जड़-चेतन की ग्रन्थि खोल ले तो उसकी आत्मा प्रकृति से न्यारी होकर अपनी असली अवस्था को प्राप्त होजावे। संसार में जितने भी सामान देखने में आते हैं सब जीवात्माओं ही का ज़हूरा हैं। मसलन् रुई व ऊन के वस्त्र रुई के पौदे व भेड़ के जिस्म के अन्दर क़ायम जीवात्माओं के तैयार किये हुए जिस्म के हिस्सों ही से बनाये जाते हैं और इसी तरह तमाम फल, फूल, मिठाइयाँ वग़ैरह भी जीवात्माओं के तैयार किये शरीरों ही से बनते हैं। अब चूँकि जीवात्मा कोई असली चीज़ या जौहर

नहीं है बल्कि आत्मा व प्रकृति की मिलौनी का नतीजा है इसलिये असल जौहर पर निगाह डालने से जीवात्मा का तमाम ज़हूरा असत्य हो जाता है। इस मानी में अगर कोई जगत् को मिथ्या कहे तो नामुनासिब न होगा लेकिन जब कि आम लोग आत्मा यानी सुरत की जानिब से क़तई ग़ाफ़िल हैं और उनका मन संसार के सामान व भोग विलास की उन्नति व अवनति ही को नफ़ा व नुक़सान समझता है तो ऐसी दृष्टि वाले लोगों का संसार को मिथ्या कहना नावाजिब है। हम यहाँ पर दो मिसालें पेश करके उनसे यह दरख़्वास्त करेंगे कि अपनेतईं मिसालों के अन्दर बयान की हुई हालातों में रखकर बतलावें आया संसार सत्य है या असत्य ?

(१) एक शख़्स रात के वक़्त स्वप्न में देखता है कि सुबह का वक़्त है और उसका मुलाज़िम हाथ में एक तारख़बर लिये हुए आता है। यह शख़्स लिफ़ाफ़ा खोल कर पढ़ता है कि उसके लड़के को किसी दुश्मन ने गोली से मार डाला। ख़बर पढ़ते ही यह शख़्स चौंक उठता है और जाग कर मन ही मन में कहता है कि आज कैसा वाहियात स्वप्न देखने में आया। थोड़ी देर के बाद यह शख़्स फिर सो जाता है और तीन चार घंटे बाद सुबह होने पर हस्बमामूल उठता है और मुँह हाथ धोकर नाश्ते के लिये बैठता है। इतने में सचमुच नौकर एक तारख़बर लाता है और यह शख़्स हैरान व परेशान काँपते हुये हाथों से लिफ़ाफ़ा खोलता है और वही अलफ़ाज़ पढ़ता है जो उसने स्वप्नावस्था में देखे थे। ख़बर पढ़कर उसके होश व हवास जाते रहते हैं और यह नाश्ता छोड़कर, मुँह सिर लपेट चार-पाई पर लेट जाता है और दो चार घंटे चुप चाप पड़ा रहता है। इतने में नौकर आकर जगाता है कि लोग लड़के की लाश ले आये हैं। यह शख़्स

उठकर अपनी आँखों से अपने मुर्दा लड़के को देखता है। क्या इस शख़्स के स्वप्न का तजरुबा गलत था ? क्या इस शख़्स का जागकर तारखबर का पढ़ना और अपने लड़के को गोली से ज़ख़्मी होकर मरा हुआ देखना असत्य है ?

(२) शहर चट्टानोगा (रियासत टेनेसी मुल्क अमरीका) का अखबार डेली टाइम्ज़ १३ फ़रवरी सन् १९१८ ई० के पर्चे में लिखता है कि मुसम्मी जिम मेक अल हरन हबशी को, जिसने राजर्स व टायग्रट दो गोरे अमरीकनों को पिछले शुक्र के दिन मुक़ाम अस्टल स्प्रिंग्ज़ में गोली से मार डाला था और एक तीसरे शख़्स को ज़ख़्मी कर दिया था, आज सात बज कर ४० मिनट पर बवक़्त रात १२ आदमी, जो मसनूई चेहरे पहने हुये थे, पकड़ कर ले गये और उसे ज़िन्दा जला दिया। जिस वक़्त यह शख़्स जलाया जा रहा था क़रीबन् दो हज़ार आदमी, जिसमें औरतें और बच्चे भी शामिल थे, तमाशा देख रहे थे। रूपोश (मुँह-छिपाये) लोग क़ैदी को पकड़े हुए रेलवे स्टेशन से चौथाई मील के फ़ासले पर ले गये और उन्होंने वहाँ उसके जलाने के लिये लकड़ियों का ढेर जमा किया। मजमा उनके पीछे पीछे गया और आख़री वक़्त तक मौजूद रहा। लोगों ने हबशी को अव्वल एक पेड़ से बाँध दिया और उसके नज़दीक ही आग जलाई। जब आग खूब भड़क उठी तो उन्होंने उसके अन्दर लोहे की एक लम्बी सलाख गर्म होने के लिये डाल दी। सलाख के सुर्ख़ हो जाने पर एक शख़्स ने उसे आग से निकाल कर सुर्ख़ हिस्सा हबशी के जिस्म के नज़दीक किया। हबशी सुर्ख़ सलाख के नज़दीक पहुँचते ही मारे दहशत के पागल हो गया और उसने गर्म

सलाख़ को हाथों से पकड़ लिया। उसके दोनों हाथ फ़ौरन् जल उठे और तमाम वायुमण्डल जलते हुए गोश्त की बू से भर गया और जलता हुआ हबशी चीखें मारने लगा। इसके बाद लोगों ने गर्म सलाख़ कई मर्तबा उसके जिस्म के मुख़्तलिफ़ हिस्सों पर लगाई। बेचारा अधमुआ हबशी निहायत दर्दअंगेज़ लहजे में इस ज़ोर से चिल्लाता था कि बस्ती तक उसकी आवाज़ पहुँचती थी। चन्द मिनटों तक इस वहशियाना (जंगली) तरीक़े से ग़रीब हबशी को तकलीफ़ें देने के बाद रूपोश लोगों ने उसके पतलून और पैरों पर मिट्टी का तेल छिड़का और उसे चिता पर बिठाकर आग लगा दी। ज्योंही लकड़ियों ने आग पकड़ी, हबशी चिल्ला कर दरख़्वास्त करने लगा कि उसे गोली से मार दिया जाय। तमाम मजमे ने जवाब में मुँह चिड़ाना और चीखें मारना शुरू किया। इसी समय में आग भड़क उठी और हबशी के सिर के जलते हुए बालों से नीले रंग की चिनगारियाँ आसमान की तरफ़ जाने लगीं और उसका चीख़ना बन्द हो गया। क्या हबशी महज़ ख़्वाब देख रहा था? क्या उसका दुख महज़ असत्य ज्ञान था? क्या दो हज़ार आदमियों का मजमा भी वही ख़्वाब देख रहा था जो हबशी को दिखाई देता था?

बचन (२०)

मालिक की दया का भरोसा रखने से ज़िन्दगी के दुख बरदाश्त करने में भारी सहायता मिलती है।

शहर कलकत्ता के एक रईस ने ज़िन्दगी से दुखी होकर अव्वल अपने दो निरपराध बच्चों को ज़हर पिलाया और बाद में ख़ुद ज़हर पी

कर परलोक को सिधार गया और यह तहरीर छोड़ गया कि उसका विश्वास परमात्मा की हस्ती से उठ गया था और उसने ज़िन्दगी से तंग आकर ये कर्म किये। सब जानते हैं कि जब इन्सान मुसीबतों से घिर जाता है और बावजूद हर क़िस्म की मेहनत व कोशिश के अपनी हालत ख़राब पाता है तो ख़ुदा, देवी, देवता, भूत, प्रेत की जानिब मुख़ातिब होता है और जब उस जानिब से भी मायूसी हो जाती है तो पागल होकर जो मन में आता है कर गुज़रता है और अक्सर ख़ुदकुशी (आत्मघात) कर लेता है इसलिये इस रङ्ग से जो कर्म बन पड़ा वह इतना आश्चर्यजनक नहीं है मगर इस घटना से एक निहायत मुफ़ीद मतलब सबक़ हासिल होता है यानी यह कि जब तक इन्सान का मालिक की दया में विश्वास क़ायम रहता है वह हिम्मत नहीं हारता, वह सख़्त से सख़्त मुश्किल बरदाश्त करता हुआ बेहतरी की राह देखता है। यानी मालिक की दया का भरोसा एक ऐसा लंगर है जिसे गिराकर इन्सान ज़िन्दगी के समुद्र की लहरों से बेख़ौफ़ आशा की नाव में बैठा हुआ दुनिया का तमाशा देख सकता है। लेकिन चूँकि आम लोगों को न तो मालिक का कुछ पता है और न ही उसकी ज़ात में सच्चा विश्वास है इसलिये अक्सर औक़ात मामूली झोंके आने पर लंगर टूटकर उनकी आशा की नाव डूब जाती है। इसके अलावा अक्सर लोग ख़्वाहमख़्वाह दया का भरोसा बाँधकर अपनी हैसियत से बढ़कर सौदे कर बैठते हैं या नाजायज़ फ़ायदा उठाने के लिये मुक़द्दमाबाज़ी करते हैं और वक़्तेनामुनासिब आने पर मायूसी का मुँह देखते हैं। सन्तमत यह ज़रूर सिखलाता है कि हर प्रेमीजन को मालिक की हस्ती व दया में सच्चा व गहरा विश्वास रखना चाहिये लेकिन

साथ ही यह भी सिखलाता है कि उस मालिक को हाज़िर व नाज़िर जानकर किसी ऐसे कर्म का भागी न बनना चाहिये और न कोई ऐसी उम्मीद बाँधनी चाहिये कि जिससे वह परमार्थी आदर्श से गिर जाय। सच्चे मालिक की दया में भरोसा इसलिये नहीं बँधवाया जाता कि प्रेमीजन मालिक से अपनी मर्ज़ी के मुआफ़िक़ काम ले और अपनी जायज़ व नाजायज़ इच्छाएँ पूरी करावे बल्कि इसलिये कि नामुवाफ़िक़ हालात के आने पर उसका धीरज बना रहे और वह हरक़िस्म की ग़ैर-ज़रूरी चिन्ता व फ़िक्र से आज़ाद रहकर मुनासिब यत्न व कोशिश कर सके। जबतक हमारा इस दुनिया में क़याम है तबतक दुनियवी ज़रूरियात का और उनके पूरा करने के सिलसिले में विरोधी सूरतों का पैदा होते रहना क़ुदरती बात है। हमारा यह ख़्याल करना क़तई ग़लत व लाहासिल होगा कि हुज़ूरी शरण लेने से हम तमाम सृष्टिनियमों और संसारी तूफ़ानों से बच रहें। हमें समझ बूझ कर सृष्टिनियमों का पालन करते हुए ज़िन्दगी बसर करनी होगी। हमें दुश्मनों, धोकेबाज़ों और फ़साद करने वालों से बचने के लिये मुनासिब इन्तिज़ाम करना होगा और नीज़ हमें हर क़िस्म की दैविक व भौतिक आपत्तियों को बर्दाश्त करते हुए अपने कर्तव्य पालन करने होंगे लेकिन जैसे आम लोग अपनी ज़िन्दगी रुपये,पैसे और इष्टमित्र की मदद या चालाकी व सीनाज़ोरी के भरोसे पर बसर करते हैं और मुख़ालिफ़ सूरतों के नमूदार होने पर उन्हीं से काम लेते हैं हमें बजाय इनके सच्चे मालिक की दया का भरोसा रखकर दिन काटने होंगे और नामुवाफ़िक़ बातों के ज़ाहिर होने पर मालिक की दया का आसरा लिये हुए मुनासिब यत्न व कोशिश करनी

होगी और यह बात बेखौफ़ कही जा सकती है कि इन उसूलों पर चलने से किसी भी प्रेमीजन को मायूसी का मुँह न देखना पड़ेगा। यह मुमकिन है कि कुछ अर्से के लिये किसी की मुश्किलों में ज़ाहिरन् इज़ाफ़ा होता जावे और उसे किसी जानिब से मदद की सूरत दिखलाई न दे लेकिन यह नहीं हो सकता कि कोई प्रेमीजन जो सँभलकर चाल चलता है और परमार्थी आदर्श को हमेशा निगाह के रूबरू रखता है, हमेशा के लिये या बहुत समय के लिये चिन्ता व फ़िक्र की आग में डाला जावे।

बचन (२१)

सत्सङ्ग में लौकिक उन्नति का उद्देश्य।

दुनिया में आज कल एक अजब क़िस्म की लहर चल रही है। हर एक मुल्क, हर एक क़ौम और हर एक जमाअत इसी कोशिश में है कि वह तरक़्क़ी के मैदान में सबसे आगे निकल जावे। अफ़्रीक़ा के हबशी और अमरीका के रेड इन्डियनज़ तक के दिलों में इस क़िस्म के वलवले उठ रहे हैं इसलिये कोई तअज्जुब नहीं कि हिन्दुस्तान की हर क़ौम व हर जमाअत के अन्दर भी जागृति पैदा हो रही है। चारों तरफ़ से 'जागो' 'आगे बढ़ो' की आवाज़ सुन कर सत्सङ्गी भाइयों के दिल में भी क़ुदरती तौर पर इस क़िस्म का जोश पैदा होता है और वक़्तन् फ़वक़्तन् इस जोश का इज़हार सत्सङ्गमण्डली के अन्दर भी प्रकट हो जाता है। पुरानी चाल के सत्सङ्गी भाई इस क़िस्म की बातों को सुन कर और नीज़ यह मुलाहिज़ा करके कि दयालबाग़ में तालीम व इन्डस्ट्रीज़ के

मुतअल्लिक़ भारी कोशिश की जा रही है, ख़्वाहमख़्वाह नतीजा निकालते हैं कि सत्सङ्गमण्डली भी दुनिया के अन्दर काम करने वाली लहर की लपेट में आ गई है। इसमें शक नहीं कि हमारी जमाअत के लिये इससे बढ़कर कोई मुसीबत व बदनसीबी का वक़्त नहीं हो सकता, जबकि हम परमार्थी आदर्श से गिरकर दुनियवी तरक़्क़ी, अधिकार व सम्पत्ति की चाह में ग्रसित हो जावें मगर जब तक हुज़ूर राधास्वामी दयाल की दया का पंजा हमारे सिरों पर है और सत्सङ्गमण्डली को आम तौर पर शौक़ हुज़ूरी तालीम के मुताबिक़ अमल करने का है इस क़िस्म की मुसीबत व बदनसीबी हमारे सिर पर नाज़िल नहीं हो सकती। यह दुरुस्त है कि प्रेमप्रचारक में व नीज़ सत्सङ्ग में दयालबाग़ के अन्दर कॉलिज वग़ैरह की तरक़्क़ी के मुतअल्लिक़ तजवीज़ों पर बहस की गई और नीज़ सत्सङ्गी भाइयों को बरमला मश्वरा दिया गया कि सत्सङ्ग की संस्थाओं की दिलोजान से मदद करें लेकिन कॉलिज वग़ैरह की तरक़्क़ी के लिये कोशिश महज़ इस लिये की जा रही है कि ये संस्थाएँ अपने पावों पर खड़ी हो जावें ताकि सत्सङ्गी भाइयों को अपने बच्चों की तालीम के मुतअल्लिक फ़रायज़ से किसी क़दर रिहाई हो जाय और नीज़ ऐसे भाइयों को, जो दयालबाग़ में रह कर अपना जीवन व्यतीत किया चाहते हैं, अपने पेट भरने के लिये मुनासिब काम काज मिल जाय। यह हरगिज़ ख़्याल नहीं है कि दूसरे लोगों की तरह सत्सङ्गमण्डली तालीम व इन्डस्ट्रीज़् के मुतअल्लिक़ आन्दोलन में तत्पर हो। हम बख़ूबी समझते हैं कि जो तरक़्क़ी का रास्ता मुख़्तलिफ़ कौमों व मुल्कों ने इख़्तियार किया है वह परमार्थी आदर्श से दूर ले जाने वाला और देर अबेर तमाम दुनिया के

लिये मुसीबत की सूरत पैदा करने वाला है। दुनिया में जिस क़दर जानदार रहते हैं वे सबके सब किसी न किसी जानदार का जिस्म बतौर खुराक के इस्तेमाल करते हैं। मसलन् शेर बकरी का जिस्म और बकरी वनस्पतियों का जिस्म और वनस्पति खनिज वस्तुओं का जिस्म खाकर ज़िन्दा रहते हैं और खुराक हासिल करने के लिये हर जानदार अपने दिमाग़ व जिस्म की बनावट व ताक़त की रू से अलग अलग तरकीबें अमल में लाते हैं। मसलन् कमज़ोर जानवर चोरी से या धोका देकर ग़िज़ा हासिल करते हैं (चुनाँचे चूहा चोरी से अनाज ले जाता है और बिल्ली धोके से शिकार मारती है) और तन्दुरुस्त और मुहज़्ज़िब (सभ्य) इन्सान मेहनत मुशक़्क़त करके रोज़ी कमाते हैं व ज़मीन से अनाज पैदा करते हैं और चालाक लोग सीधे सादे व कमज़ोर जानदारों से छीन झपट कर या मकर व फ़रेब से काम लेकर अपना पेट भरते हैं। इसलिये मुहज़्ज़िब क़ौमें यही कोशिश करती हैं कि क़ारीगरी व व्यापार में तरक़्क़ी करके तमाम दुनिया का चाँदी सोना अपने मुल्क में खींच लें ताकि क़ौम का हर एक मेम्बर अमीरी से ज़िन्दगी बसर करे और आयन्दा के लिये औलाद तन्दुरुस्त व क़ाबिल पैदा कर सके ताकि बुज़ुर्गों के बूढ़े होने पर उनकी ख़िदमत के लिये मुनासिब इन्तिज़ाम रहे और कोई ग़ैर मुल्क या क़ौम हम्ला करके उनको दबा न सके। यहाँ तक तो कोई हर्ज नहीं क्योंकि किसी क़ौम का अपने पैरों पर खड़े होने की कोशिश करना किसी के लिये हानिकारक नहीं हो सकता लेकिन मुश्किल यह पड़ती है कि एक क़ौम या मुल्क लालच या ईर्षा के ग़ालिब होने से अपने जंगी ज़रियों की तरक़्क़ी में दिलोजान से मसरूफ़ होकर

अपनी जंगी ताक़त को इतनी ज़बरदस्त बना लेता है कि पड़ोसी क़ौमों व मुल्कों को इसके सिवा कोई चारा नहीं रहता कि वे भी तरह तरह की तंगी व तुर्शी बर्दाश्त करके अपनी जंगी ताक़त में इज़ाफ़ा करें। तरक़्क़ी के मैदान में बढ़े हुए मुल्क व कौम को जब पड़ोसियों के जानने का इल्म होता है तो वे मौक़ा देखकर कमज़ोर पड़ोसियों पर धावा बोल देते हैं और नतीजा यह होता है कि कौमों व मुल्कों के दर्मियान लड़ाई से ग़रीब रियाया के खून की नदियाँ जारी हो जाती हैं। सत्सङ्गी भाई विचार सकते हैं कि इस सब मुसीबत का आरम्भ एक ज़ाहिरा निष्पाप व सीधी सादी पेट भरने व अपने पाँव पर खड़े होने की ख़्वाहिश से होता है। इसी मानी में ऊपर बयान किया गया कि सत्सङ्गमण्डली की यह कभी पॉलिसी नहीं हो सकती है कि परमार्थी आदर्श से गिर कर दुनिया की दूसरी क़ौमों के ढंग को इख़्तियार कर लेवे। हमारी ख़्वाहिश और हमारा इन्तिज़ाम फ़िलहाल इतनी बात पर ख़त्म है कि अपने बच्चों की तालीम व परवरिश का मुनासिब इन्तिज़ाम कर दिया जावे, ताकि ग़रीब व ज़माने की हालतों से नावाक़िफ़ भाइयों की औलाद को ज़रियों व तजरुबे की कमी की वजह से नाहक़ दुख न उठाना पड़े। अभी चूँकि हमारी जमाअत निहायत मुख़्तसिर है इसलिये हमारी ज़रूरियात व ज़िम्मेवारियाँ भी मुख़्तसिर हैं, इस वक़्त बड़ी बातों के ख़्वाब देखना नावाजिब व नामुनासिब होगा। यह दुरुस्त है कि सभी जीव हुज़ूर राधास्वामी दयाल के बच्चे हैं और हुज़ूर राधास्वामी दयाल ने सत्सङ्ग की बुनियाद तमाम जगत् के जीवों के कल्याण की ग़रज़ से क़ायम फ़रमाई है लेकिन इसके ये मानी नहीं हैं कि हम ओछे पात्रों की तरह

अभी से लम्बी चौड़ी बातें मारने लगें और दो चार साधारण संस्थाओं के बल पर दुनिया की तहज़ीब और दुनिया की आमदनी व खर्च में नुमायाँ तब्दील पैदा करने की उमंगें उठाने लगें। इस वक़्त अगर ज़रूरत है तो इस बात की कि अपनी हैसियत के मुताबिक़ सत्सङ्गमण्डली की मुख़्तलिफ़ ज़रूरियात को पूरा करने के लिये कोशिश की जावे और नीज़ अपनेतई व अपनी औलाद को बड़े पैमाने पर सेवा करने के क़ाबिल बनाया जावे। बड़े पैमाने पर सेवा वही शख़्स कर सकता है जो बड़े पैमाने पर कुर्बानियाँ कर सकता है और कुर्बानियाँ वही शख़्स कर सकता है जिसके पास कुर्बानी के लिये सामान मौजूद है। दूसरे लफ़्ज़ों में बड़े पैमाने पर वही शख़्स सेवा कर सकता है जिसके पास कुर्बान करने के लिये नीरोग शरीर और होशियार, मज़बूत व शुद्ध मन और काफ़ी मिक़दार में धन मौजूद है। इन तीन चीज़ों में से एक भी हासिल न रहते हुए कुर्बानी या सेवा का ज़िक्र ज़बान पर लाना महज़ बढ़ की बातें कहना है।

बचन (२२)

सृष्टिकर्ता के सम्बन्ध में तीन प्रश्नों के उत्तर।

एक साहब प्रश्न करते हैं कि हमें कैसे यक़ीन हो कि सृष्टि का कोई कर्ता यानी रचने वाला ज़रूर है। इसका जवाब निहायत आसान है। अगर मनुष्य, पशु व वृक्ष के शरीर के रचने व सँभालने के लिये आत्मा यानी रूह की ज़रूरत है तो कुल सृष्टि के रचने व सँभालने के लिये भी आत्मा या रूह की ज़रूरत है। जैसे हमारी आत्मा के रचे हुए शरीर के

अन्दर अनेक जीव जन्तु बसते हैं ऐसे ही उस परमात्मा के रचे हुए शरीर यानी सृष्टि के अन्दर मनुष्य व पशु,पक्षी आदि अनेक जीव जन्तु विचरते हैं। वह पुरुषविशेष, जो तमाम सृष्टि का अभिमानी है, सृष्टि का कर्ता यानी रचने वाला है।

उनका दूसरा प्रश्न यह है कि अगर वाक़ई कोई सृष्टि का कर्ता है तो जबकि उसने यह सृष्टि बिला हमसे राय लिये रची है और अब भी जो उसका जी चाहता है करता है तो हम उसे जानने की क्यों फ़िक्र करें? इसका जवाब यह है कि वाक़ई आपके लिये उसे जानने की अभी फ़िक्र करनी वृथा है अलबत्ता जो शख़्स सृष्टि के अन्दर भारी कारीगरी व दानिशमन्दी व दया का इज़हार देखकर विचारता है कि यह सबका सब कारख़ाना महज़ इत्तिफ़ाक़ से प्रकट नहीं हुआ, इन्सान ने जितनी भी विद्याएँ व कलाएँ मालूम व ईजाद की हैं सब प्राकृतिक नियमों ही को समझ बूझ कर की हैं, क़ुदरत विद्याओं का एक ऐसा अथाह समुद्र है कि सृष्टि के आदि से लेकर आज तक बावजूद तमाम कोशिश व प्रयत्न के इन्सान को अबतक उसके एक क़तरे का भी इल्म नहीं हुआ, ऐसा शख़्स ख़्याल करता है कि यह नामुमकिन है कि रचना के अन्दर सिर्फ़ इस पृथ्वी पर ही आबादी हो। यह नहीं हो सकता कि आसमान पर चमकने वाले लाखों सितारे महज़ बेजान टिमटिमाते हुए गोले हैं और बेशुमार सूरज व चाँद व सय्यारे महज़ हमारी पृथ्वी को क़ायम रखने व रोशन करने के लिये बनाये गये हैं। ज़रूर पृथ्वी के अलावा और भी लोक आबाद हैं और हर लोक के वासियों के जिस्म उस लोक के मसाले से बने होंगे और उनकी आदतें यानी रहनी गहनी और उनके सुख दुख उनके शरीरों और उनके

लोक की चेतनता यानी रूहानियत के हिसाब से होंगे। इसलिये सम्भव बल्कि आवश्यक है कि इस पृथ्वी से बढ़कर रूहानी लोक भी सृष्टि के अन्दर मौजूद हों और उनके अन्दर निवास करने वाली रूहें हमारी तरह जन्म मरण, चिन्ता फ़िक्र और दुख सुख में मुब्तिला न हों। अगर ऐसे लोक और ऐसी योनियाँ मौजूद हैं तो कोई वजह नहीं कि हम मुनासिब कोशिश व साधन करके उनको प्राप्त न करें जबकि सरीहन् हमारी पृथ्वी सूरज से रोशनी व जान लेकर ज़िन्दा है और उसी के गिर्द नन्हे बच्चे की तरह जीवन के आहार के लिये चक्कर लगाती है तो क्यों न हम बजाय पृथ्वी के सूर्यलोक ही में चलकर रहें। वह लोक खुद प्रकाशमान है। उसके हर ज़र्रे के अन्दर पृथ्वी के मसाले की निस्बत ज़्यादा शक्ति भरी है। उस लोक के वासियों के जिस्म बमुक़ाबिला हमारे नूरानी होंगे। उनकी उम्रें हमारी उम्रों की निस्बत ज़्यादा लम्बी होंगी। उनका दुख सुख का अनुभव हमसे मुख़्तलिफ़ होगा। इस पृथ्वी पर मनुष्यशरीर पाकर पशुओं की तरह ज़िन्दगी बसर करना नादानी है। आओ, कोशिश करके सृष्टि के कर्ता का भेद दर्याफ़्त करें ताकि सृष्टि का ठीक ठीक हाल समझ में आवे और सृष्टि का ऊँचा से ऊँचा मुक़ाम, ज़्यादा से ज़्यादा सुख का स्थान और उत्तम से उत्तम योनि यानी जिस्म का भेद दर्याफ़्त हो ताकि मुनासिब यत्न व साधन करके इस मृत्युनगर से छुटकारा पाकर हमारी सुरत उस लोक में प्रवेश करे। ऐसी दृष्टि व समझ बूझ वाले मनुष्य के लिये सृष्टि के कर्ता का हाल दर्याफ़्त करना और बावजूदेकि उसने बिला हमसे राय लिये हुए सृष्टि रची है उसके साक्षात्कार के लिये फ़िक्र व यत्न करना एक खुशगवार फ़र्ज़ है।

उनका तीसरा प्रश्न यह है कि अगर मान लिया जावे कि सृष्टि के कर्ता का जानना हमारे लिये मुफ़ीद व ज़रूरी है तो उसे कैसे जानें ? इसका जवाब यह है कि अव्वल ऐसे पुरुष का खोज करो जिनको यह गति हासिल है, दूसरे मिल जाने पर उनकी सोहबत व ख़िदमत करो, तीसरे जो साधन वे बतलावें उसकी दिल व जान से कमाई करो और चौथे जब तक ख़ातिरख़्वाह नतीजा हासिल न हो जाय कोशिश व मेहनत जारी रक्खो।

बचन (२३)

बाहरी काररवाई व साधन सच्चे परमार्थ का आदर्श नहीं है।

एक सिक्ख भाई ने बयान किया कि मैं अब पक्का सिक्ख बन गया हूँ। मैं पाँचों कक्के हर वक़्त सजाये रखता हूँ। सिर पर साफ़े के नीचे हमेशा नीली पगड़ी बाँधता हूँ। जो शख़्स केशधारी नहीं है उसके हाथ की कोई चीज़ नहीं खाता हूँ। प्रातःकाल स्नान करके 'जप जी साहब' वग़ैरह का और दिन में दसवीं पादशाही (गुरू गोविन्दसिंह साहब) की वाणी का पाठ करता हूँ। यह बातें सुन कर पूछा गया—आया इन काररवाइयों से कोई अन्दरूनी तब्दीली भी वाक़ै हुई है ? उन्होंने जवाब दिया कि यह तब्दीली वाक़ै हुई है कि मुझे सिवाय सिक्खों के कोई शख़्स प्यारा नहीं लगता। सिर्फ़ सिक्खों ही के साथ उठना बैठना और दस गुरुओं के गुन गाना अच्छा लगता है। इस पर कहा गया कि ज़रा आँखें बन्द करके बतलाओ कि क्या दिखाई देता है ? जवाब मिला कि अँधेरा दिखाई देता है। उनसे कहा गया कि इससे ज़ाहर है कि पक्का सिक्ख बनने के मुत-

बल्कि जितनी काररवाइयाँ आपने कीं उन सब का तअल्लुक़ महज़ जाग्रत् अवस्था से है यानी आप सिर्फ़ जाग्रत् अवस्था में सिक्खी ख़्यालात, सिक्ख मज़हब की तालीम और गुरू साहिबान का चिन्तवन कर सकते हैं इसलिये आँखें बन्द करके अन्तर्मुख वृत्ति करने पर आपको महज़ अन्धकार दिखलाई देता है। आप अभी पक्के सिक्ख नहीं बने हैं। पक्का सिक्ख बनना उसे कहते हैं कि बाहर से दृष्टि हटाकर अन्तर्मुख होने पर आपको अपनी आत्मा का या सच्चे मालिक का या गुरु महाराज का दर्शन प्राप्त हो। सिक्खमज़हब के जितने भी सच्चे गुरू हुए उन सब को यह गति प्राप्त थी और इसी की बदौलत वे देह व संसार के साथ तअल्लुक़ रखते हुए निर्लेप रहते थे और इसी गति की वजह से तमाम दुनिया उनकी पूजा करती है। बाहरी निशानात धारण कर लेना या ज़बान से महापुरुषों की बाणी का पाठ या उच्चारण करना हरचन्द क़ाबिले तारीफ़ बातें हैं लेकिन सच्चे महापुरुष महज़ इन बातों की शिक्षा के लिये देह धारण नहीं फ़र्माते। सच्चे गुरु की यही महिमा है कि वे जिसका हाथ पकड़ लेते हैं उसको माया की कीचड़ से निकाल कर अपने समान बना लेते हैं इसलिये पक्का सिक्ख वह है कि जिसने सचमुच सच्चे गुरु महाराज का चरण पकड़ा है और जो उनकी दया से और जो साधन वे सिखलाते हैं उसकी कमाई से, दिन बदिन निखरता जाता है और जो यह महसूस करता है कि बजाय मामूली नव द्वारों में बर्ताव करने के उसकी सुरत या तवज्जुह की धार ज़्यादातर दसवें द्वार की जानिब मुख़ातिब रहती है और जिसको वक़्तन् फ़वक़्तन् सूक्ष्म या चेतन घाट की प्रज्ञा प्राप्त होती है और जिस शख़्स को अन्तरी आँख के खुलने से आत्मा व अनात्मा में

फ़र्क़ साफ़ दिखलाई देता है। अफ़सोस! कि ये बातें उस सिक्ख भाई को पसन्द न आईं। उसने जवाब में यही कहा कि मैं पहले ही कह चुका हूँ कि अब मेरा चित्त ग़ैरसिक्ख असहाब से मुहब्बत करना नहीं चाहता। यह वाक़ा इस ग़रज़ से पेश किया जाता है कि सत्सङ्गी भाई इससे सबक़ हासिल करें और होशियार रहें कि वे इस क़िस्म की ग़लती में न पड़ें और राधास्वामीमत की असली तालीम की जानिब लापरवा होकर अपनेतई धोका न दें कि वे सच्चे सत्सङ्गियों की सी ज़िन्दगी बसर कर रहे हैं। वक़्तन् फ़वक़्तन् तन, मन और धन से सेवा करना या राधास्वामी दयाल की पवित्र बानी का पाठ करना निहायत उत्तम व ज़रूरी काम हैं लेकिन राधास्वामीमत की असली तालीम का तअल्लुक़ अन्तर में गहरा ग़ोता लगाने से है। सेवा, सत्सङ्ग व अभ्यास महज़ साधन हैं, आदर्श नहीं हैं। साधन किसी नतीजे पर पहुँचने का ज़रिया हुआ करता है, नतीजा नहीं होता। नतीजे को आदर्श कहते हैं। हमारा आदर्श सच्चे मालिक का दर्शन है। उसी की प्राप्ति के लिये हमने हुज़ूर राधास्वामी दयाल की चरणशरण ली है। उसी की प्राप्ति के लिये हमें सेवा, सत्सङ्ग व सुरत-शब्द-अभ्यास की शिक्षा फ़र्माई गई है।

बचन (२४)

सत्सङ्ग की बिनती से एक मुफ़ीद सबक़।

किसी मज़हबी जमाअत के परमार्थी आदर्श या किसी मज़हबी पेशवा (नेता) के परमार्थ के मुतअल्लिक़ तजरुबात का पता लगाने के

लिये एक उम्दा तरकीब यह भी है कि उस जमाअत के अन्दर प्रचलित या उस मज़हबी पेशवा की रची हुई विनती या प्रार्थना का बग़ौर मुताला किया जावे। चूंकि विनती या प्रार्थना अपने इष्टदेव के चरणों का ध्यान करके या अपने तईं उनके हुज़ूर में पेश करके पढ़ी जाती है इसलिये रचने वाला उन शब्दों के अन्दर अपने दिल के गहरे से गहरे भाव दर्ज करता है और नीज़ अपनी ज़िन्दगी की मुश्किलात का संक्षेप में ज़िक्र करके उनकी मारफ़त दया व मदद के लिये प्रार्थना करता है। इन शब्दों का मुताला करने से बआसानी पता लगाया जा सकता है कि प्रार्थना करने वाला अपने इष्टदेव की निस्बत दिल में क्या ख़्यालात रखता है, कौन सी मुश्किलें व मुसीबतें उसे परेशान करती हैं और क्या गति या आदर्श वह प्राप्त किया चाहता है। दयालबाग़ में सुबह के सत्सङ्ग के समाप्त होने पर जो विनती पढ़ी जाती है उसके मानी नीचे दर्ज करते हैं:—

(१) "ऐ गुरु महाराज! अहंकार को तजकर और मन की ज़बरदस्तियों से दुखी होकर हम दास अपना सीस हुज़ूर के चरणकमलों पर झुका कर अपनी विनती पेश करते हैं। (२) भवजल यानी संसार के अथाह सागर में अनन्त व अपार लहरें उठ रही हैं और ऊपर से कुल रचना पर ज़हरे हलाहल की धार बरस रही है जिसकी वजह से मन की बहिर्मुख वृत्तियाँ प्रबल हो रही हैं और संसार के मनुष्य आत्मा और सच्चे मालिक को भूलकर मायिक पदार्थों की जानिब दौड़ रहे हैं। (३) ऐ समर्थ व पूर्ण धनी! आप गहरी दया विचारें और काल कर्म की धार के कष्ट को निवारण फ़र्मावें। (४) ऐ परम पिता! हम दासों

ने आपकी शरण अडोल तरीक़े पर दृढ़ता के साथ धारण की है (कोई कष्ट या तकलीफ़ की हालत या मायिक पदार्थों का लोभ लालच हमें बहकाकर डाँवा डोल नहीं कर सकता, हमारी तवज्जुह केवल आपके चरणों में लगी है)। शरण लेने के बाद जो कृपा आपने हमारे ऊपर फ़र्माई वह अतोल है, हमारी ज़बान उसके बयान करने में असमर्थ है। (५) ऐ दाता ! आपने अपने चरणकमलों का साया हमें बख़्शिश फ़र्माया, आपकी क्या स्तुति करें (आपकी कृपा का कुछ वार पार नहीं)। आपने हमारे लिये संसार में जन्म धारण फ़र्माया और हमें खुद अपने पवित्र चरणों की पहचान इनायत फ़र्माई। (६) अब ऐसी मेहर की बख़्शिश फ़र्माइये कि जो प्रीति प्रतीति हमें प्रदान हुई है वह बनी रहे और हमारा चित्त किसी वजह से भी डोलने न पावे और संसार सागर से पार उतर कर हमें आपके परम पवित्र चरणों में निवास मिले यानी हमारी सुरत मायिक मण्डलों से पार हो कर निर्मल चेतन देश में प्रवेश करे। (७) ऐ परम पुरुष पूर्ण धनी राधास्वामी दयाल ! जबतक हमारा बेड़ा संसार सागर से पार न हो जावे तबतक हमारी बराबर सँभाल फ़र्माइये। (८) ऐ सच्चे मालिक ! दासों की इतनी अर्ज़ मंजूर फ़र्माइये और फ़ौरन मंजूर फ़र्माइये। हम आपके पवित्र चरणों के आश्रित हैं और उनपर न्यौछावर यानी कुर्बान हैं।

इस विनती का मुताला करने से समझ में आ सकता है कि एक सच्चा सत्सङ्गी क्या ख़्वाहिश लेकर सच्चे मालिक के चरणों की तरफ़ रुजू लाता है और किस गति की प्राप्ति के लिये हाथ पाँव मारता है। साधारण सृष्टिनियमों और कर्मों की विरुद्ध ताक़तें सरीहन हमारी किश्ती

को परमार्थी आदर्श से दूर लेजा रही हैं इसलिये कुल कर्तार से दीनता व नम्रता पूर्वक प्रार्थना की जाती है कि वे बेड़े को मंजिले मकसूद पर पहुँचावें और ऐसी मौज फ़र्मावें कि हमारी सुरत यानी आत्मा मन व माया के झमेलों से छुटकारा पाकर निर्मल चेतन देश में दाखिल हो और जबतक यह गति हासिल न हो तबतक रक्षा का हाथ हमारे सिर पर बना रहे और हमारी प्रीति प्रतीति में कमी न होने पावे। नीज़ यह समझते हुए कि सतगुरु कैसे दुर्लभ रत्न होते हैं और किन क़ायदों की पाबन्दी में उनकी संसार में आमद होती है और उनके ज़ाहिरन् साधारण मनुष्यों की तरह रहने से उनकी परख पहचान करना कैसा दुश्वार है सच्चे दिल से शुकराना अदा किया जाता है कि उन्हों ने कृपा करके हमारे लिये सबके सब संयोग जोड़ दिये और अपनी तरफ़ से दया फ़र्माकर अपनी परख पहचान बख़्शिश फ़र्माई।

बचन (२५)

गुरुभक्ति को गुलामी कहना मूर्खता है।

एक साहब एतराज़ करते हैं कि सत्सङ्ग की तालीम, जिसमें भक्ति पर ज़ोर दिया जाता है, इन्सान को बुलन्द हौसले से गिराकर पस्तहौसला बना देती है यानी जब कोई शख़्स बार बार अपनेतईं कमज़ोर व गुनहगार देखता है तो उसकी हिम्मत और तमाम मर्दाना कुव्वतें पस्त होजाती हैं। उसका दया व मेहर के लिये बार बार प्रार्थना करना उसे इस क़दर कमज़ोर दिल बना देता है कि न तो वह मामूली सी तकलीफ़ बर्दाश्त

कर सकता है और न किसी बड़ी ज़िम्मेवारी के काम में हाथ डालने के लिये हौसला कर सकता है। जब शुबह शाम किसी के कान में यही डाला जाय कि हर काम में गुरु महाराज की प्रसन्नता को मुख्य रखना चाहिये और बिला चूँ चरा उनके हुक्मों की तामील करनी चाहिये तो उस बेचारे के दिल में आज़ादी व खुद्दारी का भाव कैसे रह सकता है? दिन रात अपनेतई दूसरे का बन्दा ख़्याल करना और अपने मन को ज़ेर डालकर सेवा में लगे रहना बुलन्द से बुलन्द ख़्याल वाले इन्सान के अन्दर ज़रूर बिल ज़रूर ग़ुलामनफ़्सी (दासत्व) पैदा कर देता है वग़ैरह वग़ैरह।

वाज़ह हो कि सत्सङ्ग की तालीम की निस्बत ये सब इलज़ाम क़तई ग़लत और बेबुनियाद हैं। क्या किसी लायक़ उस्ताद या हकीम की शागिर्दी करते हुए उनकी हिदायतों पर बे चूँ व चरा अमलकरना, उनके अहकाम की दिल व जान से तामील करना,उनके मुक़ाबिले अपने-तई कमज़ोर व नादान देखना, उनसे सबक़ व नज़रे इनायत के लिये वक़्तन् फ़वक़्तन् प्रार्थी होना, अपने तन व मन की ख़्वाहिशों को ज़ेर डालकर उनकी ख़िदमत बजा लाना और इस तरीक़े से आला तालीम, नाज़ुक नुक़्तों और गुप्त रहस्यों का सीखना गुलामी की दलील है या सच्ची शागिर्दी की? इसके सिवा क्या हज़रत मुहम्मद, हज़रत मसीह, महात्मा बुद्ध व सिक्ख गुरू साहिबान के शिष्यों ने, जिन्होंने अपने अपने वक़्त में बड़े बड़े काम करके दिखलाये और ज़माने की काया पलट दी, कोई और तालीम पाई थी? हक़ीक़त यह है कि ऐतराज़ करने वाले लोग मामूली इन्सानों व सच्चे

साध सन्तों में कोई फ़र्क़ न मानकर भक्ति को गुलामी की तालीम कहने लगते हैं। क्या यह मानी हुई बात नहीं है कि इन्सान पर सोहबत या सङ्ग साथ का भारी असर पड़ता है? अँगरेज़ी में एक मसल है जिसके मानी यह हैं—"अगर तुम मुझे यह बतला दो कि तुम किस सोहबत में उठते बैठते हो तो मैं यह बतला दूँगा कि तुम किस क़िस्म के इन्सान हो।" मतलब यह है कि जिस सङ्ग व सोहबत में इन्सान अपना ज़्यादा वक़्त खर्च करता है उसके ख़्यालात उसकी आदत व स्वभाव में पैवस्त (प्रविष्ट) हो जाते हैं। इसलिये अगर कोई शख़्स सच्चे साध सन्त की ख़िदमत में हाज़िर रहे और उनके ख़्यालात और रहनी गहनी का असर प्रेम प्रीति के साथ अपने अन्दर जज़्ब करे तो क़ुदरतन् वह थोड़े ही अर्से में उनकी तरह पाकख़्याल व पाकदिल बन जायगा। अपने मन को ज़ेर डालना सच्चे बहादुरों का काम है न कि ग़ुलामों व कायरों का। मुमकिन है कि कोई ग़ुलाम या डरपोक अपने मालिक के सामने मन मारकर बर्ताव करे लेकिन हर शख़्स बख़ूबी समझ सकता है कि ऐसे लोग ज़ाहिर में एक तरह का बर्ताव करते हैं और उनके मन में दूसरे ही ख़्यालात की लहरें चलती रहती हैं। इसके सिवा यह भी एक मशहूर मसल है कि जो शख़्स दूसरों पर हुकूमत किया चाहता है उसको अव्वल फ़र्माँबरदारी सीखनी होगी। अक्सर हिन्दुस्तानी असहाब जब किसी बड़े ओहदे पर होते हैं तो वे अपने मातहतों से काम लेने में नाकामयाब साबित होते हैं। यह नामुमकिन नहीं है कि उनकी नाकामयाबी की वजह यही हो कि उन्हों ने फ़र्माँबरदारी का सबक़ नहीं सीखा। तवारीख़ में सैकड़ों बल्कि हज़ारों मिसालें ऐसे सच्चे भक्तों की मिलती हैं

जो बहुत समय तक अपने गुरु महाराज या मुर्शिद की खिदमत में सच्ची भक्ति करते रहे लेकिन जिन्हों ने हुक्म मिलने पर बावजूद दुनियवी विद्याओं से नावाक़िफ़ होने के ऐसी बहादुरी व अक़्लमन्दी के काम सर-अंजाम दिये कि जिनका हाल सुनकर मौजूदा ज़माने के बड़े बड़े बहादुर अक़्लमन्द दाँतों में उँगली दबाते हैं। मिसाल के तौर पर शिवाजी व बाबा बन्दा का हाल मुलाहिज़ा किया जावे। अपने गुरु रामदास जी से आज्ञा पाकर बे सर व सामान शिवाजी ने मुग़ल बादशाहत को मिटा देने का बीड़ा उठाया और मुसलमान बादशाहों के देखते ही देखते दक्षिणी हिन्द में मरहठा हुकूमत का झण्डा खड़ा कर दिया। इसी तरह बाबा बन्दा ने, जो उम्रभर वैरागी साधू रहा था, गुरु गोविन्दसिंह साहब की आज्ञा पाकर मुग़ल बादशाहों के साथ इस ज़ोर की जङ्ग की कि तवारीख़ में उसके नाम का ज़िक्र करते वक़्त मुसलमान इतिहासलेखकों को सख़्त से सख़्त अलफ़ाज़ इस्तेमाल करने पड़े। हमारी राय में गुरुभक्ति की निस्बत ऐतराज़ वे ही असहाब करते हैं जिनको कभी सच्चे गुरु के दर्शन मुयस्सर नहीं हुए, जिन्हें अपने माँ बाप या उस्ताद का अदब व ताज़ीम बजा लाने का सबक़ नहीं मिला और न ही सच्चे भक्तों की तवारीख़ पढ़ने का मौक़ा हुआ, जो शख़्स जानवरों की तरह मारे मारे फिरने को आज़ादी समझते हैं और जिनको मन व इन्द्रियों का रोकना और बुज़ुर्गों से तालीम हासिल करने के लिये उनकी ख़िदमत बजा लाना दुश्वार मालूम होता है।

बचन (२६)

मन का रुख़ संसार की जानिब से कैसे बदल सकता है ?

एक साहब प्रश्न करते हैं कि उनका मन सच्चे मालिक से बहुत कुछ लापरवा रहता है और दुनियवी कारोबार में शौक़ के साथ लगता है। क्या कोई ऐसी तदबीर हो सकती है कि जिससे मन का रुख़ बदले और उसे सच्चे मालिक की भक्ति का शौक़ हो ?

जिस मन के अन्दर इस क़िस्म का सवाल पैदा हो उसकी हालत अच्छी तो नहीं है लेकिन इतनी बुरी भी नहीं है क्योंकि अपनी कमज़ोरी व ग़लती से वाक़िफ़ होना और उनसे रिहाई हासिल करने के लिये प्रार्थी होना व कोशिश करना मन के अन्दर उत्तम संस्कारों की मौजूदगी का निशान है, वरना आम संसार बेहोश भोगों की लहर में बह रहा है और सन्तुष्ट है और किसी के दिल में ख़्याल तक पैदा नहीं होता कि सच्चे मालिक की भक्ति और वृत्तियों के अन्तर्मुख फेरने का भेद दर्याफ़्त करे। मालिक की याद से लापरवा रहने का कारण मन के अन्दर रजोगुणी या तमोगुणी अङ्गों की प्रधानता है। रजोगुणी अङ्ग प्रधान रहने पर बहिर्मुख वृत्तियाँ ज़बरदस्त वेग के साथ रवाँ रहती हैं और जैसे तेज़ भागने या तेज़ रफ़्तार हवागाड़ी में सवारी करने से ख़ास क़िस्म का आनन्द आता है ऐसे ही बहिर्मुख वृत्तियों के वेग के साथ रवाँ रहने में भी ख़ास क़िस्मका आनन्द आता है। और चूंकि मन रसिया है यानी आनन्द का शौक़ीन है और जिस काम या हालत से उसे रस व आनन्द मिलता है उसी में लगा रहता है यानी उसी के मुतअल्लिक़ वृत्तियाँ उठाता है इसलिये क़ुदरतन् रजोगुणी मन बहिर्मुखी वृत्तियों के रस में भीगा रहता है। तमोगुणी मन आलस्य व

सुस्ती के अङ्गों में वर्ताव करता है और दुनिया व मालिक दोनों की जानिब से लापरवा रहता है।

अब सवाल यह रह जाता है कि इन विघ्नों से रिहाई कैसे हासिल हो ? अव्वल सख़्त दुख व तकलीफ़ मिलने से, दोयम् सत्त्व-गुणी वृत्ति वाले यानी मालिक के सच्चे भक्तों के सङ्ग व सोहबत से। सख़्त दुख व तकलीफ़ मिलने पर अक्सर इन्सान चौंक जाते हैं और अपनी दौड़ धूप व सुस्ती छोड़ कर विचारने लगते हैं कि रजोगुणी व तमो-गुणी अङ्गों में वर्तने से सिवाय तकलीफ़ के कुछ हासिल न होगा। इसलिये बेहतर है कि सच्चे मालिक की जानिब तवज्जुह मुख़ातिब की जावे ताकि दया व मेहर प्राप्त होकर दुख व तकलीफ़ से रिहाई मिले। मतलब यह है कि जब किसी के यत्न व कोशिश उलटे ही पड़ते हैं और दुनिया में उसे कोई यार व मददगार नज़र नहीं आता तो चार नाचार उसकी तवज्जुह मालिक की जानिब मुख़ातिब होती है। दोयम् बक़ौले कि—

"सोहबते मर्दानत अज़ मर्दां कुनद।
नारे ख़न्दाँ बाग़ रा ख़न्दाँ कुनद॥"

(मर्दों की सोहबत तुझको मर्द बना देगी जैसे खिला हुआ अनार तमाम बाग़ को खिला देता हैं।)

सच्चे आशिकों यानी सच्चे प्रेमीजनों की सोहबत में रहकर और उनकी बात चीत व रहनी गहनी से मुतासिर होकर मन सहज में अन्तर्मुख हो जाता है। वजह यह है कि प्रेमीजनों की सोहबत के ज़बरदस्त संस्कार पुराने रजोगुणी व तमोगुणी संस्कारों पर ग़ालिब आकर इन्सान के चाल व्यवहार में प्रकट तब्दीली पैदा कर

देते हैं और कुछ अर्से बाद यानी उसपर सोहबत का गाढ़ा रंग चढ़ जाने से वह दूसरा ही इन्सान बन जाता है।

मन का रुख बदलने के मुतअल्लिक़ जो दो तदबीरें ऊपर बयान की गईं उनमें से पहली तदबीर निपट मूर्खों के लिये है और दूसरी बातमीज़सज्जन पुरुषों के लिये है। सज्जन पुरुष सच्चे सङ्ग सोहबत की तलाश करेगा और मूर्खजन महज़ दुख व तकलीफ़ के वक़्त का इन्तिज़ार करेगा।

वचन (२७)

मनुष्यशरीर सिर्फ़ हाड़, माँस व चाम का ढेर नहीं है।

सन्तमत की तालीम का एक बुनियादी उसूल यह है कि मनुष्य-शरीर निहायत अमूल्य है इसकी पूरी क़दर करनी चाहिये। इस शरीर को सिर्फ़ संसार के विषय भोगने व औलाद पैदा करने में सर्फ़ करना परले दर्जे की अभाग्यता है। इस शरीर के अन्दर ऐसा इन्तिज़ाम है कि अगर मनुष्य कोशिश करे तो देवता, हंस और परमहंस गति को प्राप्त हो सकता है। किसी सिद्ध पुरुष की सेवा में हाज़िर रहकर यह भेद बखूबी समझ में आ सकता है। जैसे लौकिक रहस्यों के समझने व सीखने के लिये क़ाबिल उस्ताद की शागिर्दी ज़रूरी है ऐसे ही इस रहस्य के समझने व सीखने के लिये सच्चे सतगुरु की शागिर्दी लाज़िमी है।

बाज़ लोग कहते हैं कि देखने में मनुष्यशरीर हड्डियों व चमड़े का ढेर ही तो है मगर ऐसी दृष्टि वाले पुरुषों के लिये मनुष्यजीवन सिर्फ़

वासनाओं व इच्छाओं में वर्तने का ज़रिया है। गम्भीर दृष्टि वाले पुरुष जानते हैं कि हड्डियों और चमड़े को जान देने वाला जौहर, जिसे सुरत या आत्मा कहते हैं, इस रचना में बहुमूल्य जौहर है। इस जिस्म के सूराख़ों या रौज़-नों की मार्फ़त मनुष्य रचना के पदार्थों व क़ुदरत की शक्तियों से मेल कर सकता है और जिस्म के अन्दर क़ायम गुप्त चक्रों या कमलों के जगा लेने पर इस के अन्दर ऊँचे ग़ाट की शक्तियाँ जाग जाती हैं, यहाँ तक कि आत्मा व सच्चे कुल मालिक का साक्षात्कार होकर जन्म मरण का ख़ात्मा और अमर आनन्द व अविनाशी सुख की प्राप्ति हो जाती है इसलिये सन्तमत तालीम देता है कि ऐसा अमूल्य शरीर पाकर उसे वृथा खोना नहीं चाहिये। कबीर साहब फ़र्माते हैं:—

"कहता हूँ कह जात हूँ कहा बजाऊँ ढोल।
स्वाँसा ख़ाली जात है तीन लोक का मोल॥
कबीर सोता क्या करे जागन से कर चौंप।
यह दम हीरा लाल है गिन गिन गुरु को सौंप॥"

माना कि कोई शख़्स ज़्यादा धनवान या पूँजीदार नहीं है, माना कि वह मोटा झोटा कपड़ा पहनकर और रूखा सूखा टुकड़ा खाकर अपने दिन काटता है लेकिन वाज़ह हो कि मनुष्यशरीर के अन्दरूनी फ़ायदे उसे सबके सब भरपूर हासिल हैं इसलिये सन्तमत शिक्षा देता है कि ऐ ग़रीब व दीन अधीन प्रेमीजन! तू मत घबरा, तेरा मेहनत मुशक़्क़त करके चार पैसे कमाना और उसी कमाई में (जो हक़ व हलाल की है) गुज़र करना दुनिया की निगाह में ओछा हो सकता है लेकिन परमार्थी लक्ष्य से निहायत मुबारक है। जो शख़्स हक़ व हलाल की कमाई खाता है वही

अपने मन को काबू में रखकर अपने जिस्म के अन्दर छिपी हुई शक्तियों व चक्रों को जगा सकता है। संसार के भोग विलासों में ज़रूर खास क़िस्म की लज़्ज़त है लेकिन तवज्जुह के ज़रा अन्तर्मुख होने पर जो रस व आनन्द प्राप्त होता है उसके मुक़ाबिले में उसकी कोई हक़ीक़त नहीं है। तू ज़रा हिम्मत कर और सुमिरन ध्यान की युक्तियाँ सीखकर दृष्टि को अन्तर की जानिब फेर। तेरे घट में दो रास्ते चलते हैं-एक नरक की जानिब और दूसरा सच्चखण्ड की जानिब ले जाने वाला है। तू लोकलाज और मूर्खों की तान का ख़्याल छोड़कर इन रास्तों का भेद दर्याफ़्त कर। तू नाहक़ दूसरों की देखा देखी सुख के लिये सांसारिक पदार्थों की जानिब दौड़ता और परेशान होता है। तेरे घट में सुख के सब सामान रक्खे हैं। तू ज़रा होश कर और दृष्टि को घट में उलट।

बड़ा ज़ुल्म है मेरे यार यह
कि तू जाय सैर को बाग़ के।
तू कँवल से आप ही कम नहीं
हिये में उलट के चमन में आ॥

वचन (२८)

निन्दकों के साथ हमारा वर्ताव किस प्रकार होना चाहिये ?

किसी भी साध सन्त या महात्मा की ज़िन्दगी के हालात पढ़ने से मालूम होगा कि हरचन्द वे महापुरुष निहायत सादी ज़िन्दगी बसर करते थे और अपना ज़्यादा से ज़्यादा वक़्त मनुष्यमात्र के कल्याण के

मुतअल्लिक़ कोशिश में लगाते थे लेकिन फिर भी बहुत से लोगों को उनकी रहनी गहनी व परोपकार की कार्रवाई में सैकड़ों दोष नज़र आते थे। इतना ही नहीं बल्कि आज दिन हालाँकि वे महापुरुष संसार में मौजूद नहीं हैं और न ही किसी इन्सान से कुछ लेते हैं लेकिन तो भी हज़ारों दिलजले उनकी पवित्र रहनी गहनी और उच्च शिक्षा में बीसों ऐब निकाल कर अपना दिल ठण्डा करते हैं। मसलन् क़ुरैशी लोग बहुत समय तक हज़रत मोहम्मद की सख़्त बुराई करते रहे और हज़ारों ग़ैरमुसलिम लोग अबतक पैग़म्बर साहब की पाक रहनी गहनी के मुतअल्लिक़ ज़बाँदराज़ी करते हैं। इसी तरह गुरू नानक साहब व कबीर साहब के मुतअल्लिक़ बहुत से लोग जो मुँह में आया कह देते हैं इसलिये तअज्जुब नहीं अगर हुज़ूर राधास्वामी दयाल व राधास्वामीमत की निस्बत भी नामुनासिब अलफ़ाज़ सुनने में आवें। दूसरों को क्या कहें, ख़ुद अपने ही घर के बाज़ लोग जिन्हें न विशेष ज्ञान ज़िम्मेवारी का है और न ही क़ाबिलियत ज़रूरी मामलात के समझने की हासिल है, किसी वजह से नाराज़ होकर सत्सङ्ग की हर बात में दोष निकालते हैं और इस ढंग से वे न सिर्फ़ अपनेतईं सत्सङ्ग के लाभ और सेवा के मौक़े से महरूम करते हैं बल्कि अपने ज़हरीले ख़्यालात का प्रचार करके अपने सङ्गी साथियों व अज़ीज़ कुटुम्बियों को भी सच्चे परमार्थ की आला तालीम से दूर रखते हैं। क्या इन भूले भाइयों की किसी तरह मदद की जासकती है ? ज़रूर की जा सकती है और एक से ज़्यादा तरीक़ों से। अव्वल हमें चाहिये कि जब ऐसे भाइयों से साबिक़ा पड़े तो उनके साथ शान्ति से बर्ताव करते हुए और उनके सख़्त व अनुचित शब्द ख़ुशी से बर्दाश्त करते हुए उन्हें

सत्सङ्ग की असली तालीम से वाक़िफ़ करायें। दोयम् जब तब उनके हक़ में सच्चे मालिक के चरणों में प्रार्थना करें ताकि उनकी कुमति दूर हो और उन्हें सुमति प्राप्त हो। सोयम् कभी उनसे बदला लेने या नाराज़ होकर उन्हें नुक़्सान पहुँचाने का ख़्याल दिल में न आने दें और हज़रत मसीह के अलफ़ाज़—"ऐ परम पिता! उनके पाप क्षमा करो क्योंकि वे असलियत से नावाक़िफ़ हैं"—याद करके अपने मन की सँभाल करें। जब हम किसी से नाराज़ होते हैं तो हमारे मन के अन्दर ग़ैरमामूली गर्मी भर जाती है और आम तौर पर हमारा मन अन्तरी साधन के नाक़ाबिल हो जाता है और वक़्तन् फ़वक़्तन् हमें ज़हरीले ख़्यालात बदला लेने के बारे में सूझने लगते हैं। अगर ऐसे मौक़े पर मन की मुनासिब सँभाल न की जावे तो न सिर्फ़ हमारी परमार्थी तरक़्क़ी रुक जाती है बल्कि हमसे कोई अनुचित काररवाई बनकर अर्से तक परेशान करने वाली बला गले पड़ जाती है। इसलिये अक़्लमन्दी इसी में है कि हम किसी निन्दा करने वाले के शब्दों से नाराज़ न हों।

"गाली ही से ऊपजे कलह कष्ट अरु मीच।
हार चले सो सन्त है लाग मरे सो नीच॥
गाली आवत एक है उलटत होय अनेक।
कहैं कबीर न उलटिये वाही एक की एक॥"

वचन (२६)

मुक्ति-अवस्था का वर्णन ।

प्रश्न है कि सन्तमत में मुक्ति-अवस्था का किस प्रकार वर्णन किया गया है? मुक्ति-अवस्था चूँकि ज्ञानेन्द्रियों व स्थूल बुद्धि की पहुँच से परे की हालत है इसलिये रोज़ाना महावरे के अलफ़ाज़ में उसका बयान करना एक निहायत कठिन बल्कि नामुमकिन बात है। जो बात सर्व साधारण के तजरुबे में न आई हो उसका वर्णन करने के लिये आम तौर पर तजरुबे में आने वाली मगर उससे मिलती जुलती बातों की उपमा यानी नज़ीर दी जाती है। मसलन् अमृत का वर्णन करने के लिये दूध की सफ़ेदी, बर्फ़ की ठंडक, चीनी की मिठास और पानी की तरलता से काम लिया जाता है। इसी तरह मुक्ति-अवस्था का वर्णन करने के लिये इन्सानी ज़िन्दगी के निर्मल व गहरे रस व आनन्द की अवस्था का ज़िक्र किया जाता है मगर ज़ाहिर है कि इस क़िस्म का बयान क़तई अधूरा है। सन्तमत में बतलाया गया है कि सब जानदारों के अन्दर एक चेतन जौहर विराजमान है जो सुरत, आत्मा या रूह के नाम से पुकारा जाता है। हालते मौजूदा में यानी पृथ्वी पर निवास करते हुए सुरत का तअल्लुक़ मन व शरीर से हो रहा है और ये दोनों यानी मन व शरीर सुरत से जान पाकर चेतन होरहे हैं और जैसे एक एलेक्ट्रो मैगनेट (विद्युत्चुम्बक) के अन्दर, जिसमें अज़ख़ुद कोई मिक़नातीसी (चुम्बकीय) क़ुव्वत नहीं होती, बिजली का गुज़र होने से फ़ौरन् ज़बर-दस्त मिक़नातीसी क़ुव्वत पैदा होजाती है ऐसे ही मन से (जोकि जड़

है) सुरत की धार का संयोग होते ही मन के अन्दर हरकत आजाती है और अहङ्कार, इच्छा व काम क्रोध वग़ैरह का इज़हार होने लगता है। आम तौर पर यही अवस्था चेतन अवस्था और इस अवस्था की कार-रवाइयाँ आत्मिक क्रियाएँ समझी जाती हैं; लेकिन दरअसल यह 'जड़-चेतन' अवस्था है और इस अवस्था की क्रियाएँ मन की करतूतें हैं। जो शक्ति इस अवस्था में कारकुन होती है, यानी सुरत की धार का मन के साथ सम्बन्ध होने पर जो कुव्वत मन के अन्दर जाग जाती है, उसको सन्तों व दीगर अभ्यासी पुरुषों ने जीवात्मा या जीव के नाम से बयान किया है। इसलिये साधारण मनुष्य जो कुछ ज्ञान हासिल करते हैं या दुख सुख का अनुभव करते हैं उनका सम्बन्ध आत्मिक ज्ञान से नहीं होता बल्कि वह सब जीवात्मा का ज्ञान होता है। इस शक्ति की सब काररवाइयों को मुल्तवी करके (जिसे पतञ्जलि महाराज चित्तवृत्तियों का निरोध कहते हैं) अपने अन्तर में निर्मल चेतन घाट की यानी उस स्थान की, जो शरीर व मन की मिलौनी से परे है, चेतनता या प्रज्ञा प्रकट करने पर जो ज्ञान उदय होता है उसका एक पल भर अनुभव होजाने पर इन्सान मुक्ति-अवस्था का किसी क़दर सही अनुमान कर सकता है। असली मुक्ति तब हासिल होती है जब सुरत यानी आत्मा शरीर व मन के प्रपञ्च से अलहदा होकर और शरीर व मन सम्बन्धी मण्डलों के पार निर्मल चेतन अवस्था या देश में, जिसे सन्तमत में सच्चे मालिक का धाम या राधास्वामीधाम कहा जाता है, प्रवेश कर जाती है। इस धाम में ख़ालिस यानी निर्मल चेतन जौहर के सिवाय और किसी चीज़ का दख़ल नहीं है और—

"जैसे नाला जब तलक बहता रहे ।
सब कोई नाले को नाला ही कहे ॥
और जब दरिया से नाला जा मिला ।
होगया दरिया नहीं नाला रहा ॥"

सुरत उस धाम में प्रवेश करने पर परम पुरुष सच्चे मालिक के साथ तद्रूप हो जाती है और अपने निज खवास (गुणों) में, जो कि सत्ता, चेतनता, आनन्द व प्रकाश हैं, वर्ताव करती है । मुण्डक उपनिषद् में यही बात नीचे लिखे मन्त्र में बयान की गई है:—

"यथा नद्यः स्यन्दमानाः समुद्रेऽस्तं गच्छन्ति नामरूपे विहाय ।
तथा विद्वान्नामरूपाद् विमुक्तः परात् परं पुरुषमुपैति दिव्यम् ॥"

यानी जैसे बहती हुई नदियाँ समुद्र में दाखिल होकर अपना नाम व रूप यानी आपा खो देती हैं ऐसे ही विद्वान् यानी ब्रह्मविद्या का जानने वाला नाम व रूप से विमुक्त यानी अलग होकर परे से परे जो दिव्य यानी प्रकाशमान पुरुष है उसको प्राप्त होता है ।

बचन (३०)

मन की शुद्धता के लिये उपाय ।

बाज़ लोग कहते हैं कि जबतक वे आज़ादाना ज़िन्दगी बसर करते थे और परमार्थ के सम्बन्ध में सिवाय ज़बानी जमा खर्च के कोई यत्न या कोशिश न करते थे उनको अपना मन निहायत साफ़ सुथरा मालूम होता था लेकिन जबसे उन्होंने मन व इन्द्रियों के दमन यानी क़ाबू

करने के लिये बाक़ायदा यत्न शुरू किया तो उन्हें महसूस हुआ कि उनका मन कैसी गन्दी व नापाक ख़्वाहिशात से भरा हुआ है और जब उसे ठहराने के लिये कोशिश की जाती है तो बछेरे के समान, जो पीठ पर हाथ रखने से उछलता है, ग़ैरमामूली चंचलता दिखलाता है और उनकी तबिअत में बार बार यही आता है कि अभ्यास छोड़कर खड़े हो जायँ या लेट जायँ। बाज़ अनजान मन की यह हालत देखकर साधन की युक्तियों की निस्बत शक करने लगते हैं और कुछ नादान तो साधन छोड़कर बदस्तूरे साबिक़ मन के खेल कूद में लग जाते हैं। वाज़ह हो कि मन के इस क़िस्म के विघ्न सिर्फ़ सुरत-शब्द-अभ्यास ही की कमाई में प्रकट नहीं होते, पतञ्जलि महाराज ने भी अपने योगसूत्रों में इन विघ्नों का विस्तार से ज़िक्र किया है जिससे ज़ाहिर होता है कि अष्टाङ्ग योग करने वालों को भी इन विघ्नों का सामना करना पड़ता था। असल बात यह है कि जबतक मन के अन्दर मलिनता भरी है कोई भी शख़्स कामयाबी के साथ योग-साधन नहीं कर सकता इसलिये हर एक शौक़ीन अभ्यासी को मन की शुद्धता हासिल करने के लिये यत्न करना चाहिये। मन की शुद्धता कैसे प्राप्त हो? आम लोग यही जवाब देंगे कि सत्य बोलने से मन को शुद्धता प्राप्त होती है लेकिन यह जवाब काफ़ी नहीं है। सत्य बोलने से तबिअत में शान्ति और निर्मलता ज़रूर आती है लेकिन हाल के और पिछले जन्मों के संस्कार और संसार के पदार्थों की कशिश और अपने व सङ्गी साथियों के मन के काम, क्रोध वग़ैरह अङ्गों का ज़ोर अपना असर ज़रूर ही दिखलाते हैं। केवल सत्य बोलने का व्रत धारण कर लेने से उनके नाक़िस असर से बचाव नहीं हो सकता। जैसे जल में स्नान करने से

थोड़ी देर के लिये बदन साफ़ व ठंडा हो जाता है ऐसे ही सत्य बोलने पर मन को थोड़ी देर के लिये निर्मलता व शीतलता प्राप्त हो जाती है लेकिन जल्द ही मन बदस्तूर मलिन हो जाता है। मन की शुद्धता प्राप्त करने के लिये अव्वल उपाय झुरना यानी पश्चात्ताप करना है, दूसरा उपाय मन के अन्दर भक्ति व प्रेम के ख़्यालात पैदा करना है और तीसरा उपाय सुरत यानी तवज्जुह को अन्तर में किसी ऊँचे मुक़ाम पर जमाना है और चौथा उपाय सच्चे मालिक या गुरू महाराज की दया व मेहर हासिल करना है। जब हम अपनी ग़लतियों को ग़लतियाँ समझने लगते हैं तभी हमारे मन के अन्दर पश्चात्ताप पैदा होता है। दूसरे लफ़्ज़ों में जब हमारा मन सच्चा होकर वर्तने लगता है तभी हमको अपनी कसरें नज़र आती हैं। कसरें नज़र आने पर अपनी ग़लती व कमज़ोरी के लिये हर शौक़ीन परमार्थी को झुरना व पछताना चाहिये। सच्चा पछतावा पैदा होने पर जैसे नीबू के निचोड़ने से अर्क़ निकल जाता है ऐसे ही मन के अन्दर से विकारी अङ्ग निकल जाते हैं। श्रद्धा व भक्ति के ख़्यालात मन में पैदा करने से शुद्धता ऐसे प्राप्त होती है जैसे तेज़ाब के अन्दर खार डालने से तेज़ाब की तेज़ाबी मिट जाती है। और सुरत यानी तवज्जुह को किसी ऊँचे मुक़ाम पर ले जाने से मन को शुद्धता ऐसे प्राप्त होती है जैसे किसी दर्द का रोगी नींद आजाने पर स्वप्न में मनोहर तजरुबात हासिल करता है यानी तवज्जुह के ऊँचे स्थान की ओर मुख़ातिब होने से मन का झुकाव निचली जानिब रुख़ वाले अङ्गों की तरफ़ से हट जाता है। सच्चे मालिक या सच्चे गुरू महाराज की कृपादृष्टि होने से मन को ऐसे शुद्धता प्राप्त होती है जैसे वर्षा होने से तमाम वृक्ष व ज़मीन धुल जाते हैं। प्रेमी-

जनों को चाहिये कि इन उपायों में से जिस मौक़े पर जो उपाय बन पड़े वही अमल में लावें और लाभ उठावें।

बाज़ पुराने ख़्यालात के लोग गङ्गा, यमुना वग़ैरह दरियाओं में स्नान करने से मन की शुद्धता प्राप्त होने की आशा बाँधते हैं। खुले पानी में ग़ोता मारने पर जिस्म के अन्दर अव्वल एक दर्जा की ठण्डक आजाती है जो ग्रीष्म ऋतु में ख़ासकर हद दर्जा की सोहावनी लगती है। नहाने के थोड़ी देर बाद जिस्म के अन्दर प्रतिक्रिया (Reaction) पैदा होजाती है और नहाने वाले को जिस्म में ख़ुशगवार गर्माई व दमक महसूस होती है। अनसमझ लोग इन्हीं तजरुबात से ख़ुश होकर अपनेतईं तसल्ली देते हैं कि दरिया में स्नान करने से उनके पाप धुल गये और उनका हृदय शुद्ध होगया। प्रेमीजनों को इस भ्रम से होशियार रहना चाहिये।

बचन (३१)

सच्चा परोपकारी बनने के लिये अधिकार की ज़रूरत है।

अक्सर लोग यह कहते सुनाई देते हैं कि यह ज़माना एक कोने में बैठकर भजन ध्यान करने का नहीं है। इस वक़्त ज़रूरत परोपकार और देश की सेवा करने की है। इन्हीं के ज़रिये उच्च गति प्राप्त होकर मनुष्यजन्म सफल होगा। वाज़ह हो कि लोगों के ये ख़्यालात नादानी की बुनियाद पर क़ायम हैं। इसमें शक नहीं कि परोपकार और देश की सेवा उत्तम काम हैं लेकिन याद रहे कि सच्चा परोपकार हर

किसी के बस का नहीं। सच्चा परोपकार वही शख़्स कर सकता है जिसे अपनी कोई ग़रज़ न हो और जिसमें परोपकार करने की पूरी योग्यता मौजूद हो। अगर इस आदर्श को निगाह में रखकर आज कल के परोपकारियों की जाँच की जावे तो आसानी से मालूम हो जावेगा कि उनमें कितने सच्चे परोपकारी हैं और कितनों ने परोपकार को अपना रोज़गार बना रक्खा है।

यह बयान करने की ज़रूरत नहीं कि वाक़ई बेग़रज़ होना एक निहायत मुश्किल काम है। सच्चे बेग़रज़ दो ही क़िस्म के लोग हो सकते हैं—एक तो वे जिनकी सब दुनियवी ज़रूरतें पूरी हो गई हैं, दूसरे वे जो दुनिया के सामान से बेनियाज़ (उपरत) हो गये हैं यानी या तो वे लोग जिन्हें दुनिया के सब सामान प्राप्त हैं या वे जिन्हें दुनिया के सामान की परवा नहीं है। ज़ाहिर है कि जहान भर में तलाश करने से एक भी ऐसा शख़्स न मिलेगा जिसे दुनिया के सब सामान प्राप्त हों। बड़े बड़े राजा, बादशाह तृष्णा की अग्नि में जल रहे हैं। राजा, बादशाह या अमीर बन जाने से इन्सान मामूली चीज़ों की ज़रूरत से तो आज़ाद हो जाता है लेकिन यह नहीं होता कि उसकी तमाम ज़रूरतें पूरी हो जावें। बरख़िलाफ़ इसके आम तौर पर उसका लोभ व लालच बहुत बढ़ चढ़ जाता है। अकबर जैसा ज़बरदस्त बादशाह, जिसकी दौलत व अमीरी का कुछ हिसाब न था और जिसके फ़ीलख़ाने में सैकड़ों हाथी मौजूद थे, एक राजा के रामप्रसाद नामी हाथी की तारीफ़ सुनकर बेताब हो जाता है और उसके हासिल करने के लिये हज़ारों जानें और लाखों रुपये बरबाद कर डालता है। ऐसे ही महाराजा रणजीतसिंह पेशावर के

सूबे से एक घोड़ी छीन लाने के लिये भारी लड़ाई छेड़ देता है और कैसर विलियम जर्मनी की बादशाहत से सन्तुष्ट न रहकर तमाम दुनिया से लड़ाई ठानता है। इसलिये यह कहना बेजा नहीं है कि दुनिया में ऐसा कोई भी शख़्स न मिलेगा जिसकी सब ख़्वाहिशात पूरी हो गई हों।

इसी तरह ऐसे लोग, जो दुनिया के सामान से बेपरवा हों, ज़्यादा तादाद में न मिलेंगे। यह दौलत उन्हीं प्रेमियों को हासिल होती है जिन्हें रूहानी सुरूर (आनन्द) मिल जाता है। जैसे मिस्री मिलने पर इन्सान गुड़ को फेंक देता है ऐसे ही प्रेमी परमार्थी रूहानी सुरूर के हासिल होने पर दुनिया के भोग विलास से मुँह फेर लेता है क्योंकि रूहानी सुरूर किसी को तभी हासिल होता है जब वह अपने मन व इन्द्रियों को बस में लाकर अपनी तवज्जुह अन्तर में जोड़ने लगे। इसलिये दुनिया के सामान से बेपरवा वे ही मनुष्य हो सकते हैं जिन्हों ने एक अर्से तक मन व इन्द्रियों को दमन करने और सुरत यानी तवज्जुह को अन्तर में जोड़ने का साधन किया हो। अगर ये सब बयानात दुरुस्त हैं तो यह नतीजा निकालना मुश्किल न होगा कि सच्चा बेग़रज़ होना हर किसी का काम नहीं है।

अब रहा परोपकार की क़ाबिलियत का सवाल। यह भी मुआमला ज़्यादा आसान नहीं है। जैसे देखिये—कितने लोग स्वराज्य हासिल करने की कोशिश में लगे हैं। यह मान सकते हैं कि वे सच्चे दिल से समझते हैं कि स्वराज्य हासिल होने से उनके मुल्क को भारी फ़ायदा पहुँचेगा मगर दर्याफ़्ततलब यह है कि उनमें कितने भाई स्वराज्य की प्राप्ति का अधिकार रखते हैं। अक्सर लोग बावजूदेकि न कोई ख़ास तजवीज़ें रखते

हैं और न कोई तजरुबा, लेकिन तो भी दूसरों को रास्ता दिखलाने के काम में मसरूफ़ हैं। अगर कोई शख़्स ग़रीब बीमारों की दवा इलाज किया चाहता है तो अव्वल उसे दवा इलाज का इल्म बख़ूबी हासिल करना चाहिये। इल्म हासिल किये बग़ैर बीमारों की दवा इलाज शुरू कर देना परोपकार नहीं है बल्कि ग़रीबों के प्राण लेना और अपनी मूर्खता दिखलाना है। इसलिये हमारा यह ख़्याल नादुरुस्त नहीं है कि सच्चा परोपकार हर किसी के बस की बात नहीं है।

सवाल हो सकता है कि क्या भूखे प्यासे को भोजन या पानी देना परोपकार नहीं है? क्या ग़रीबों के लिये हस्पताल या स्कूल, कॉलिज खोलना परोपकार नहीं है? जवाब यह है कि ज़रूर ये सब काम परोपकार से सम्बन्ध रखते हैं मगर इन कामों का सरअंजाम देना घटिया दर्जे का परोपकार है। घटिया दर्जे का इस मानी में कि यह काम ऐसे नहीं हैं कि इनके सरअंजाम देने से किसी को उच्च गति प्राप्त हो जावे या इनकी ख़ातिर भजन ध्यान या अन्तरी साधनों की कमाई तर्क या मुल्तवी कर दी जावे। हमारा मनुष्यजन्म तभी सफल होगा जब हमें सच्चे मालिक का दर्शन नसीब होगा। यह नेमत दान, पुण्य या हस्पताल, स्कूल व कॉलिज खोलने से हासिल नहीं हो सकती। इसके हासिल करने के लिये सच्चे सतगुरु की शरण और अन्तरी साधनों की कमाई ज़रूरी है।

वचन (३२)

पवित्र ग्रन्थों की सिर्फ़ ताज़ीम करना काफ़ी नहीं है, उनके उपदेश पर अमल भी करना चाहिये।

संसार की कोई चीज़ स्वयं न अच्छी है और न बुरी। जब इन्सान अपने दिल में कोई ग़रज़ क़ायम कर लेता है तो उसके लिहाज़ से चीज़ें अच्छी या बुरी क़रार पाती हैं यानी जो चीज़ें उस ग़रज़ से मुताबिक़त रखती हैं या उसकी प्राप्ति में मददगार हैं वे अच्छी कहलाती हैं और जो उसके मुख़ालिफ़ हैं वे बुरी क़रार दी जाती हैं। मसलन् अगर किसी वक़्त हम नहाना चाहते हैं तो उस वक़्त वर्षा का होना अच्छा समझा जावेगा और अगर किसी वक़्त हमें नहाने से नफ़रत या परहेज़ है तो उस वक़्त मेंह का बरसना बुरा मालूम होगा। इस नियम के अनुसार अगर कोई विद्वान् एक पुस्तक इस ग़रज़ से लिखे कि उसके दोस्त आशना, जिनके हाथ में वह पुस्तक पहुँचे, उसके इल्म से वाक़िफ़ होकर फ़ायदा उठावें लेकिन दोस्त आशना पुस्तक पाकर बजाय उसके पढ़ने व समझने के रेशमी रूमाल में बाँध कर उसकी पूजा करने लगें तो हरचन्द उनकी यह कारर्वाई अज़ख़ुद बुरी या क़ाबिले एतराज़ नहीं है। लेकिन पुस्तक रचने वाले पुरुष की मंशा के क़तई ख़िलाफ़ और उसके नुक़्ए निगाह से बुरी व क़ाबिले एतराज़ है। अगर हमारा यह ख़्याल दुरुस्त है तो यह कहना नादुरुस्त नहीं है कि जो मज़हबी जमाअतें ईश्वरकृत ग्रन्थों या इलहामी पवित्र पुस्तकों में विश्वास रखती हैं, उनपर फ़र्ज़ होजाता है कि अपने पवित्र ग्रन्थों की अलावा ताजीम (प्रतिष्ठा) करने के उनसे वह

फ़ायदा भी उठाने की कोशिश करें जिसकी दात के लिये ईश्वर, ख़ुदा या इष्टदेव ने वह पवित्र ज्ञान या उपदेश उस जमाअत को प्रदान किया। जो लोग ऐसा नहीं करते वे अपने ईश्वर, ख़ुदा या इष्टदेव की मंशा की ख़िलाफ़वर्ज़ी करते हैं। इसलिये क्या हिन्दू, क्या मुसलमान, क्या ईसाई और क्या सन्तमतानुयायी सभी भाइयों पर फ़र्ज़ है कि वेद भगवान्, क़ुराने मजीद, अन्जीले मुक़द्दस और सन्तमुखबाणी का ग़ौर के साथ मुताला करें और जबतक उन्हें असली अर्थों का ज्ञान न हो जाय, चैन न लें और जब वे मालूम हो जायँ तो सच्चे भक्तों की तरह पवित्र ग्रन्थों के उपदेश पर अमल करें। जब तक कोई शख़्स इस उसूल पर कारबन्द नहीं है उसकी हालत उस नादान प्यासे से अच्छी नहीं है जो कुएँ के किनारे पहुँच कर 'पानी पानी' चिल्लाता हुआ मर जाता है। उस शख़्स को अपने मज़हब से असली फ़ायदा हरगिज़ हासिल न होगा और उसका मनुष्यचोला धारण करना और किसी मज़हब में शरीक होना क़रीबन् बेमसरफ़ रहेगा।

अगर इस नियम को दुरुस्त मान लिया जावे तो इन भाइयों के ज़िम्मे यह भी फ़र्ज़ हो जाता है कि अपनी जमाअत के अन्दर ऐसे पुरुष तलाश करें जो उन पवित्र पुस्तकों के असली मानी से वाक़िफ़ हों ताकि उनकी ख़िदमत में हाज़िर रहकर दिली मुराद हासिल की जाय। इसमें शक नहीं कि दुनिया में पण्डित, मौलवी, पादरी व ग्रन्थी बेशुमार मौजूद हैं लेकिन मुश्किल यह है कि उन पवित्र पुस्तकों की टीका या भाष्य करने में ये लोग आपस में एकमत नहीं हैं। हर मज़हब के अन्दर सैकड़ों फ़िर्क़े (संप्रदाय) और हर फ़िर्क़े के अन्दर जुदा जुदा मानी लगाने वाले

विद्वान् या पण्डित मौजूद हैं। पवित्र पुस्तक एक है लेकिन उसकी व्याख्याएँ बेशुमार व जुदागाना हैं, कोई करे तो क्या करे? हमारी राय में इसका इलाज सिर्फ़ एक है और वह यह कि शौक़ीन परमार्थी को चाहिये कि अपनी जमाअत के अन्दर अभ्यासी ज्ञानी की तलाश करे और कोरे पण्डितों यानी वाचिक ज्ञानियों को नज़रअन्दाज़ करे और बाद तहक़ीक़ात के जिस बुज़ुर्ग की निस्बत इतमीनान हो जाय कि उसका सहारा महज़ ग्रामर व डिक्शनरी (व्याकरण व कोश) पर नहीं है बल्कि उसने अन्तर में गहरा गोता मार कर कुछ स्वयं अनुभव हासिल किया है उसकी शागिर्दी इख़्तियार करे। तहक़ीक़ात के दौरान् में परमार्थी को चाहिये कि किसी क़िस्म की रू रिआयत न करे लेकिन इतमीनान होजाने पर सच्चे दास या सेवक की तरह बर्ताव करे और उस बुज़ुर्ग से तालीम पाकर खुद अन्तरी साधन या अभ्यास शुरू करे और रफ़्ता रफ़्ता एक दिन खुद अभ्यासी ज्ञानी बन जाय। अभ्यासी पुरुष की तलाश के लिये सलाह इसलिये दी गई कि किसी भी किताब का भावार्थ सिर्फ़ ऐसे शख़्स की समझ में आसकता है जिसके अन्दर क़ाबिलियत (योग्यता) व माद्दा उसके समझने का मौजूद है। ईश्वरीय ज्ञान के समझने के लिये जो क़ाबिलियत दरकार है वह बयान की मोहताज नहीं है। जिस शख़्स ने मुनासिब साधन करके अपने मन को निर्मल व निश्चल नहीं बनाया और सुरत के घाट का तजरुबा यानी आध्यात्मिक ज्ञान हासिल नहीं किया वह ईश्वरीय ज्ञान समझने व समझाने के हरगिज़ क़ाबिल नहीं हो सकता।

वचन (३३)

असली व झूठे त्याग में फ़र्क़ ।

दुनिया में ज़ाहिरी त्याग की बड़ी महिमा है । जो शख़्स अपने जिस्म का बहुत सा हिस्सा नङ्गा रक्खे या ओढ़ने के लिये मोटा कपड़ा या कम्बल इस्तेमाल करे और सिर व दाढ़ी मूँछ के बाल लम्बे व बेतरतीब रक्खे वह बड़ा त्यागी समझा जाता है और जो शख़्स समय समय पर अपने त्याग का ज़िक्र करता रहे और रुपया पैसा छूने से इन्कार करे उसकी महिमा का तो कुछ वार पार ही नहीं है । क्या वे सब लोग, जो इस क़िस्म के स्वाँग बनाये फिरते हैं और बार बार गृहस्थों से मिलकर अपनी ज़रूरियात पूरी कराते हैं, दिल से संसार के भोग विलास को नफ़रत या लापरवाई की निगाह से देखते हैं ? अगर सच पूछा जावे तो खास लोगों का ज़िक्र छोड़कर आम तौर पर ऐसे लोग यह स्वाँग बतौर रोज़गार के रचते हैं क्योंकि वे बख़ूबी समझते हैं कि त्याग का चिह्न देखकर गृहस्थों के दिलों में सेवा के लिये बड़ी उमङ्ग पैदा हो जाती है और वे त्यागी जी की ज़रूरियात पूरी करने के लिये रुपया पैसा ख़र्च करना अपनी बड़भाग्यता समझते हैं । वाज़ह हो कि त्याग व वैराग्य वही सच्चा व लाभदायक है जो दिल से हो । अगर दिल में दुनियवी साज़ व सामान के लिये मोहब्बत व राग मौजूद है तो बाहरी त्याग व वैराग्य महज़ कपट की काररवाई है । हाफ़िज़ ने खूब कहा है:—

"हाफ़िज़ा मय खुरो रिन्दी कुनो खुशबाश वले ।
दामे तज़वीर मकुन चूँ दिगराँ क़ुराँ रा ।।"

इस क़िस्म की मक्कारी से यह मुमकिन है कि कोई शख़्स सौ पचास लोगों को अपना श्रद्धालु बनाले और उनसे सेवा व टहल कराके अपने दिन आराम से गुज़ारे लेकिन ऐसा शख़्स सच्चे परमार्थ के मार्ग पर क़दम रखने के क़ाबिल हरगिज़ न होगा।

बाज़ लोग कहते हैं कि रुपया पैसा छूने से बड़ा पाप लगता है इसलिये अभ्यासी पुरुषों को कभी चाँदी सोने को हाथ नहीं लगाना चाहिये। हम पूछते हैं कि क्या पाप लगता है ? सच्चे विरागी पुरुष के लिये सोना, चाँदी व मिट्टी एक समान हैं क्योंकि तीनों एक ही खानि से निकलती हैं और यकसाँ मुफ़ीद हैं। क्या मिट्टी, लोहा, काँसा और पीतल किसी एक मालिक ने बनाये हैं और सोना, चाँदी दूसरे ने ? या सबकी सब धातुएँ उसी एक मालिक के इन्तिज़ाम से और एक ही पृथ्वी से प्राप्त होती हैं ? अब ज़रा ग़ौर करो कि रुपये पैसे क्या चीज़ हैं ? ये महज़ चाँदी व ताँबे के टुकड़े हैं जिन पर ख़ास क़िस्म के नक़्श वग़ैरह खुदे हैं और जिस हुकूमत ने उन्हें तैयार किया है उसके हुक्म से चीज़ों के ख़रीद व फ़रोख़्त के सिलसिले में बतौर क़ीमत के लिये व दिये जाते हैं। अगर इस क़िस्म का इन्तिज़ाम न होता तो अवाम के लिये बड़े पैमाने पर तिजारत करना नामुमकिन रहता और छोटे पैमाने पर तिजारत करने में भी सख़्त तकलीफ़ होती। मसलन् अगर आप कपड़ा ख़रीदना चाहते तो पुराने ज़माने के दस्तूर व इन्तिज़ाम के मुताबिक़ आप को दो चार मन अनाज सिर पर लादकर ले जाना पड़ता और बज़ाज़ की दूकान के एक कोने में कपड़ों के ढेर होते और बक़िया हिस्से में क़िस्म क़िस्म के अनाज के ढेर दिखलाई देते। ख़्याल किया

जा सकता है कि अगर कोई शख़्स मोटरकार ख़रीदना चाहता तो उसको गेहूँ वग़ैरह के कितने छकड़े लादकर साथ ले जाने पड़ते और मोटर-फ़रोश की दूकान अनाजमण्डी से कम न होती। ग़रज़ेकि यह ज़ाहिर है कि सिक्का का रिवाज इस मतलब से जारी किया गया कि लोगों को चीज़ों की ख़रीद व फ़रोख़्त में सहूलियत रहे। दूसरे लफ़्ज़ों में जो काम पिछले वक़्तों में अनाज के ढेर या जानवरों से लिया जाता था वह अब धातु के टुकड़ों से लिया जाता है और अगर यह बात सच है तो दर्याफ़्ततलब हो जाता है कि आया पिछले जमाने में त्यागी लोग अनाज व जानवरों के रखने व छूने से परहेज़ करते थे ? इसका जवाब साफ़ है—सभी ब्राह्मण व ऋषि गायें पालते थे और राजाओं से इनाम व दक्षिणा में अनाज व गायें प्राप्त करते थे। इन बातों पर ग़ौर करने से साफ़ हो जाना चाहिये कि रुपया पैसा छूने में कोई हर्ज नहीं है। अलबत्ता चूँकि रुपये पैसे से हर क़िस्म के जायज़ व नाजायज़ सामान बआसानी ख़रीद किये जा सकते हैं इसलिये हर शख़्स के दिल में रुपये पैसे के लिये सहज में मोहब्बत पैदा हो जाती है। परमार्थी पुरुषों को चाहिये कि वे मोहब्बत या राग का ज़हर दिल में दाख़िल न होने दें और अपनी मेहनत व हक़्क़ व हलाल की कमाई से जो रुपया कमाया जावे उसका मुनासिब व जायज़ इस्तेमाल करें और रुपये पैसे के ढेर जमा करने की लालसा न उठावें।

वचन (३४)

धर्मशास्त्र और शरीअत।

जबकि दुनिया के हर हिस्से में तब्दीली व तरक़्क़ी का शोर मच रहा है मुल्के हिन्दुस्तान में धर्मशास्त्र व शरीअत के ज़मानों के लिये पुकार सुनाई देती है। हिन्दूसङ्गठन के प्रेमी पिछले युगों व मर्यादापुरुषोत्तम रामचन्द्र जी के ज़माने के स्वप्न देख रहे हैं और मुसलिमसङ्गठन के प्रेमी चौदह सौ वर्ष पुराने अरब देश के क़िस्से व कहानियाँ याद कर रहे हैं। यह कोई नहीं कहता कि धर्मशास्त्रों में जो शिक्षाएँ वर्णन कीगईं या पिछले युगों में जो रिवाज मुल्के हिन्दुस्तान में क़ायम थे या अरब देश में इसलाम की छोटी उम्र में जो शरीअत का क़ानून मुक़र्रर हुआ वह एकदम ग़लत या नुक़सान्देह है बल्कि यह कहा जाता है कि प्राचीन बुज़ुर्गों ने ज़रूरियाते वक़्त व हालात गिर्दोपेश को ख़्याल में रखकर जो नियम मुक़र्रर किये उनकी मौजूदा ज़माने में, ज़बकि दुनिया की काया पलट गई है और हिन्दू ख़्वाह मुसलमान बिलकुल नये हालात में ज़िन्दगी बसर कर रहे हैं, हर्फ़ बहर्फ़ तामील कराना नादुरुस्त है। चुनाँचे हिन्दू भाइयों का यह उम्मीद करना कि हिन्दुस्तान में वैदिक समय दोबारा प्रकट हो, सरासर ग़लत है क्योंकि अगर यह मान भी लिया जावे कि वह ज़माना दोबारा लौट आए तो ज़्यादातर हिन्दुओं को हर्गिज़ पसन्द न आवेगा। महात्मा बुद्ध, कबीर, नानक व दीगर महापुरुषों की शिक्षा के प्रचार से हिन्दू अवाम को बख़ूबी ज़ेहननशीन होगया है कि अपने पाप साफ़ कराने की ग़रज़ से बेज़बान जानवरों का

बलिदान करना सच्ची धार्मिक ज़िन्दगी के नुक़्तए निगाह से क़तई नादुरुस्त व नामुनासिब है। इसी तरह राजाओं व अमीरों का सैकड़ों शादियाँ करना और उद्दालक ऋषि से पहले का या पाण्डवों का सा शादी का रिवाज दोबारह क़ायम करना अख़्लाक़ (सभ्यता) के मौजूदा आदर्श के ख़िलाफ़ होने से हर्गिज़ सर्व साधारण को पसन्द नहीं हो सकता। इसलिये हिन्दुओं के लिये मुनासिब यही है कि ऋषियों व मुनियों की तालीम से ज़मानए हाल की ज़रूरियात के लिये जो कुछ मुफ़ीदे मतलब मिले, ग्रहण कर लिया जावे और बाक़ी बातें छोड़ दीजावें। इसी तरह मुसलमान भाइयों को शरीअत के क़ायदों का ऐसा ही इस्तेमाल करना चाहिये। जिन लोगों ने मौलाना आज़ाद की 'दर्बारे अकबरी' को पढ़ा है उन्हें बखूबी मालूम होगा कि मुल्लाओं ने शरीअतपरस्ती पर ज़ोर देकर किस तरह अकबर बादशाह को परेशान कर दिया था। उस अक़्लमन्द शाहन्शाह ने खुदमतलबियों की चालाकियाँ ताड़कर पक्का इरादा किया कि हमेशा के लिये उनका ज़ोर तोड़ दे। मुल्लाओं ने भी ईरान व अफ़ग़ानिस्तान के आलिमों से मदद हासिल करके अकबर बादशाह को तख़्त से उतारने के मंसूबे बाँधे लेकिन खुशक़िस्मती से अबुलफ़ज़ल व शेख़ मुबारक अकबर बादशाह के मददगार बन गये और नतीजा यह हुआ कि मुल्लाओं को शिकस्त खानी पड़ी और अकबर बादशाह अपनी ज़मीर के मुताबिक़ शरीअत के हुक्मों के अर्थ करने का अधिकारी हो गया। ख़्याल किया जा सकता है कि अकबर की हुकूमत और हिन्दुस्तान की सल्तनत का क्या हाल होता अगर अकबर तंगदिल मुल्लाओं के कहने में चलता रहता? हालही की

मिसाल लीजिये–तुर्की ने, जो खिलाफ़त का गढ़ था, इस प्राचीन संस्था का एकदम सफ़ाया कर दिया और पुश्तहा पुश्त के रिवाज शादी व पर्दे को पल भर में उड़ा दिया। तअज्जुब है कि तुर्की के रहने वालों से शरीअत के क़वानीन की ऐसी खुल्लमखुल्ला खिलाफ़वर्ज़ी के लिये कोई नहीं पूछता बल्कि हर कोई कमालपाशा की इन काररवाइयों की प्रशंसा करता है। अगर हिन्दू व मुसलमान भाई पक्षपात छोड़कर ज़माने के हालात के बमूजिब धर्मशास्त्रों व शरीअत के मानी लगाने लगें तो नामुमकिन नहीं है कि हर दो (दोनों) न सिर्फ़ बिरादराना तौर से रहने लगें बल्कि ऋषियों व पैग़म्बर साहब की तालीम की स्प्रिट के बमूजिब सच्ची धार्मिक ज़िन्दगी बसर कर सकें।

वचन (३५)

दुनिया का दुख कैसे मिटे ?

हाफ़िज़ ने अपनी एक ग़ज़ल में कहा है:—"दुनिया में यह क्या शोर मच रहा है, तमाम संसार लड़ाई झगड़ों से भरपूर है। भाई को भाई के साथ कोई मोहब्बत नहीं और बाप को बेटे के लिये कोई प्रेम नहीं। हर शख़्स ज़माने से उन्नति व वृद्धि की आशा करता है लेकिन मुश्किल यह है कि दिन बदिन हालत बदतर ही नमूदार हो रही है। लड़कियों की माँओं के साथ जंग जारी है और लड़के बापों के बदख़्वाह नज़र आते हैं। मूर्ख गुलाब व शहद के

शरबत उड़ाते हैं और बुद्धिमान् जिगर का खून पीकर दिन काटते हैं। दुनिया से कोई शख्स बेहतरी की उम्मीद न करे क्योंकि यहाँ जो नया दिन चढ़ता है वह पिछले दिन से बदतर ही देखने में आता है। यहाँ का यही हाल है कि बेशक़ीमत व सवारी के अरबी घोड़े गदहों की तरह लादे जाते हैं और ज़ख्म पर ज़ख्म खाते हैं और गदहों की गर्दनों में सुनहरे हार पहनाये जाते हैं। ऐ ख्वाजा! हाफ़िज़ की नसीहत सुनो— जहाँ तक होसके अपनी जानिब से नेकी करो (तेरी इसी में भलाई है) यह नसीहत जवाहरात से भी बेशक़ीमत है।"

इस ग़ज़ल के मज़मून पर ग़ौर करने से मालूम होता है कि जो कुछ कैफ़ियत फ़िसाद व झगड़े की मौजूदा ज़माने में नज़र आती है वह कोई नई बात नहीं है। हाफ़िज़ के ज़माने में यानी कम अज़ कम छः सौ वर्ष पेश्तर भी दुनिया का ऐसा ही हाल था। इसके सिवा महाभारत व रामायण से प्राचीन ऐतिहासिक ग्रन्थों का मुताला करने से भी यही नतीजा निकलता है कि इस दुनिया में लड़ाई झगड़ा, लोभ लालच व ईर्षा विरोध का दौर पिछले युगों में भी जारी रहा। इंजील की रवायत की रू से तो सृष्टि के आदि ही से बुरे अङ्गों का वजूद क़ायम है क्योंकि हज़रत आदम के बेटे 'केन' ने अपने भाई 'एबिल' को इन्हीं अङ्गों की वजह से क़त्ल किया। यह मुमकिन है कि ये शहादतें लफ़्ज़ बलफ़्ज़ दुरुस्त न हों लेकिन इनसे इस क़दर ज़रूर पता चलता है कि हमेशा से अच्छे स्वभाव वाले व सदाचारी लोग नाक़िस अङ्गों में बर्तने वाले मनुष्यों की शिकायतें करते रहे हैं इसलिए यह कोई आश्चर्य की बात नहीं कि अगर मौजूदा ज़माने में मुख्तलिफ़ मुल्कों, क़ौमों

व सोसायटियों के अन्दर उनके मुतअल्लिक़ शिकायतें सुनने में आवें। असल वजह झगड़े व फ़साद की यह है कि "यक अनार व सद (सौ) बीमार" का मज़मून है यानी दुनिया के अन्दर इन्सान के पसन्देख़ातिर चीज़ें तो गिनती की होती हैं लेकिन उनके तलबगार बहुत होते हैं इसलिये तलबगारों में लड़ाई या खैंचातानी जारी रहती है। चुनाँचे तवारीख़ बतलाती है कि अब तक जितनी भी लड़ाइयाँ हुईं वे सबकी सब इलाक़ा, दौलत या स्त्रियों की प्राप्ति के लिये हुईं। कुरुक्षेत्र व लङ्का के युद्धों, महमूद ग़जनवी के हम्लों, अलाउद्दीन के कुश्त व खून, बाबर बादशाह के जङ्ग व जदल, अकबर व औरङ्गज़ेब की चढ़ाइयों, शिवाजी की खूँरेज़ियों और सिक्खों की लड़ाइयों का बाइस इन्हीं में से कोई न कोई था। दूर जाने की क्या ज़रूरत है, पिछिली यूरोप की लड़ाई ही को लीजिये–फ़ान्स के एक ज़रख़ेज़ इलाक़े पर जर्मनी का अर्से से दाँत था क्योंकि इस इलाक़े में कोयले, लोहे वग़ैरह धातुओं की बेशुमार खानें हैं। जर्मनी ने बहाना निकालकर सन १८७० ई० की जङ्ग के बाद उसपर क़ब्ज़ा कर लिया। ज़ाहिर है कि ऐसा बेशक़ीमत इलाक़ा खोकर फ़ान्स कैसे चुप बैठ सकता था ? चुनाँचे सन् १९१४ ई० की जङ्ग के खात्मा पर फ़ान्स ने दोबारा इस इलाक़े पर क़ब्ज़ा कर लिया। आसानी से नतीजा निकला जा सकता है कि यह इलाक़ा खो बैठने के बाद जर्मनी के नेताओं की दिमाग़ी हालत क्या होगी ? ग़रज़ेकि ग़ौर करने पर हर लड़ाई का बाइस मज़कूराबाला तीनों में से कोई न कोई ज़रूर निकलेगा। जो बात मुल्कों व क़ौमों में लड़ाइयों की बाइस है वही मुख़्तलिफ़ जमाअतों के अन्दर खानाजङ्गी (गृहयुद्ध) का कारण होती है। मसलन् हर सोसायटी में प्रधान व सेक्रेटरी

के दो ओहदे होते हैं लेकिन सोसायटी के बहुत से मेम्बर इन ओहदों के ख़्वाहिशमन्द हो जाते हैं। कुछ अर्सा तक तो उनके दिल ही दिल में ईर्षा की आग सुलगती है लेकिन मौक़ा मिलने पर यह ख़ौफ़नाक सूरत में नमूदार हो जाती है। अपने मुल्क को इस क़िस्म की नाश करने वाली आगों से बचाने के लिये इंगलिस्तान के बाज़ राजनीति समझने वालों ने "कसरत राय से चुनाव" का तरीक़ा निकाला और रफ़्ता रफ़्ता यह तरीक़ा सब देशों में फैल गया लेकिन इस ज़माने में कसरत राय हासिल करने के मुतअल्लिक़ जो जो हथकण्डे व चालें इस्तेमाल की जाती हैं उनका भेद प्रकट होने पर और उनके ज़रिये लीडरी के नाक़ाबिल लोगों के बड़े रुतबे पाने से जो मुसीबत व तबाही सोसायटी के सिर आती है उसको मुलाहिज़ा करके दुनिया के नीति जानने वाले हैरान हैं कि इस नई मुसीबत से कैसे रिहाई हो ? कोई मुनरो के उसूलों पर ज़ोर देता है, कोई मसोलिनी की तरफ़ उँगली दिखाता है, कोई कमालपाशा के तरीक़ों की तारीफ़ करता है कोई ऋषियों की प्राचीन शिक्षा की तरफ़ तवज्जुह दिलाता है, कोई चर्खे से बेहतरी की उम्मीद बाँधता है और कोई कौंसिलों में कसरत राय की मारफ़त सब बीमारियों के इलाज की उम्मीद रखता है। इन्सान बेचारा करे तो क्या करे ? न जाने का उपाय और न रहने का ठिकाना वाली बात है। बाज़ लोग यह कहते हैं कि वक़्त आगया है कि ग़ैब से कोई ग़ैरमामूली क़ाबिलियत का पुरुष अवतार धारण करे और दुनिया से मौजूदा गन्दगी दूर करके इन्सान के गुज़ारे की सूरत निकाले। सच पूछो तो ये सब फ़साद दुनिया से तभी दूर होंगे जब मुख़्तलिफ़ क़ौमों व मुल्कों के लोगों के नुक़्ए निगाह (लक्ष्य) में मुनासिब

तब्दीली होकर उन्हें दुनिया के चन्दरोज़ा व बेहैसियत भोगों के बजाय सच्चे मालिक का चरणरस प्यारा लगने लगेगा। वह रस अथाह व अपार है। उसके तलबगारों को "यक अनार व सद बीमार" के मस्ले की मुश्किलों का सामना नहीं करना पड़ता।

बचन (३६)

भजन के लिये समय मुक़र्रर करने की ज़रूरत क्यों है ?

एक प्रेमीजन का प्रश्न है कि भजन किस वक़्त करना चाहिये। हिन्दू भाई दो काल या त्रिकाल सन्ध्या करते हैं, मुसलमान भाई पाँच वक़्त नमाज़ पढ़ते हैं, ऐसे ही ईसाई भाई मुक़र्रर वक़्तों पर मास (Mass) पढ़ते हैं और तस्बीह (सुमिरनी) फेरते हैं और सिक्ख भाई सुबह व शाम के वक़्त मुक़र्ररा बाणी का पाठ करते हैं इसलिये सवाल होता है कि क्या मालिक की याद के लिये कोई ख़ास वक़्त मुक़र्रर करना लाज़िमी है ?

इस सवाल का जवाब यह है कि सुबह का वक़्त अभ्यास के लिये सबसे मौज़ूं (योग्य) है क्योंकि उस वक़्त आम तौर पर दुनिया ख़ामोश होती है और रात भर आराम करने व चुप चाप रहने से बदन में थकान नहीं रहती। खाना हज़्म हो चुकने से पेट हलका रहता है और दिमाग़ काफ़ी अर्सा आराम में रहने से दुनिया के झमेलों की याद से आज़ाद होता है लेकिन इसके ये मानी नहीं हैं कि किसी दूसरे वक़्त अभ्यास करना ही नहीं चाहिये। चूंकि अभ्यास ख़ास क़िस्म की अन्तरी

हालत पैदा करने की ग़रज़ से किया जाता है और दुनिया के काम काज का असर उमूमन् (प्रायः) हमारे जिस्म व मन को उस अन्तरी हालत की प्राप्ति के नाक़ाबिल बना देता है इसलिये रात को पाँच सात घंटे दुनिया से अलहदा रहने पर हम क़ुदरतन् अभ्यास के लिये किसी क़दर क़ाबिल हो जाते हैं लेकिन अगर कोई शख़्स दिन में काम काज करते हुए भी अपनी तबिअत व तवज्जुह पर क़ाबू रक्खे और वक़्तन् फ़वक़्तन् प्रेम अङ्ग में आकर तवज्जुह अन्तर्मुख जोड़ता रहे तो ऐसा शख़्स दिन भर अभ्यास में गुज़ार सकता है। शुरू में अपनेतईं आदी बनाने के लिये समय का मुक़र्रर करना ज़रूरी है और नीज़ दुनियवी काम काज के झमेलों और मन की कमज़ोरियों से बचने के लिये हमेशा मुक़र्ररा वक़्तों पर अभ्यास में बैठना मुफ़ीद है लेकिन साथही यह भी याद रखना चाहिये कि वह सच्चा मालिक, जिसकी पूजा की जाती है, किसी वक़्त ग़ाफ़िल नहीं होता और न ही किसी ख़ास वक़्त अपने भक्तों की तरफ़ ख़ास तौर पर मुख़ातिब होता है। उसका दरवाज़ा चौबीसो घण्टे खुला रहता है और वह हर वक़्त दया व बख़्शिश करने के लिये तैयार रहता है। समय नियत करने की ज़रूरत हमारी अपनी कमज़ोरियों की वजह से पैदा होती है न कि सच्चे मालिक के समयविभाग के कारण।

इस बयान से ज़ाहिर है कि अगर कोई शख़्स दिन रात में सिर्फ़ एक मर्तबा मालिक की याद में लीन हो और अपनी तवज्जुह अन्तर में ठीक तौर पर जोड़ ले तो वह शख़्स उन लोगों से, जो दिन में पाँच सात मर्तबा नमाज़ पढ़ते हैं लेकिन अपनी तवज्जुह पर कतई क़ाबू

नहीं रख सकते, हज़ार दर्जे नफ़े में है। लेकिन अगर ये लोग पाँच सात मर्तबा की नमाज़ में हरबार या अक्सर अपनी तवज्जुह अन्तर में जोड़ लेते हैं तो ये नफ़ा में हैं।

बाज़ लोग इबादत को मज़दूरी समझते हैं और ख़्याल करते हैं कि जितनी मर्तबा इबादत की जावे उतना ही ज़्यादा फल मिलेगा लेकिन सन्तमत में इबादत या भजन बन्दगी सिर्फ़ सच्चे प्रेम का इज़हार है, किसी फल की उम्मीद या सज़ा से बचाव की ग़रज़ से भजन करना घटिया दर्जे की भक्ति है। यह मुमकिन है कि जैसे शुरू में बच्चा स्कूल या पाठशाला में इनाम पाने की लालच से जाता है ऐसे ही कोई परमार्थी भी ख़ौफ़ व लालच से अभ्यास में लगे लेकिन जैसे सयाना होने पर विद्यार्थी को इल्म का चस्का पड़ जाता है और उसकी तवज्जुह आप से आप पढ़ने लिखने की जानिब मुख़ातिब होती है ऐसे ही अन्दरूनी रस व आनन्द का तजरुबा हासिल होने और प्रेमाग्नि के भड़क उठने पर शौक़ीन परमार्थी प्रेमबस भजन बन्दगी करने लगता है। ऐसे प्रेमी-जन के लिये ख़ास समय का बन्धन लाज़िमी नहीं है। उसकी अन्तर में डोर हर वक़्त लगी रहती है और वह झीनी याद चौबीसो घण्टे करता रहता है।

जिन भाइयों को यह हालत हासिल न हो उनके लिये अलबत्ता ज़रूरी है कि सुबह व शाम दो वक़्त और अगर कभी दो वक़्त फ़ुरसत न मिले तो सुबह के वक़्त कोई काम दुनियवी करने से पहले एक घण्टे के क़रीब अभ्यास में बैठें और दिन रात में चलते, फिरते, काम काज करते जब

मौक़ा मिले दो एक मिनट के लिये ठीक तौरपर सुमिरन ध्यान कर लिया करें और याद रक्खें:—

"पंज वक़्त आमद नमाज़े रहनमूँ।
आशिक़ाँनश् रा सलाते दायमूँ॥"

अर्थात् पाँच वक़्त जो नमाज़ के लिये मुक़र्रर किये गये हैं, वे रास्ता दिखलाने के लिये हैं। मालिक के प्रेमियों के लिये हमेशा व हरवक़्त नमाज़ का वक़्त है।

बचन (३७)

सच्चे शिष्य की पहिचान।

प्रेमबिलास के शब्द नं० १२४ में सच्चे शिष्य के कुछ लक्षण वर्णन किये गये हैं यहाँ पर उसके अर्थ बयान किये जाते हैं ताकि लक्षण अच्छी तरह समझे जा सकें।

१—सतगुरु पूरे खोज कर, हुआ चरन लौलीन।
राधास्वामी कहें पुकार कर, शिष पूरा लो चीन॥

राधास्वामी दयाल फ़र्माते हैं कि पूरे सतगुरु को तलाश करके जो शख़्स उनके चरणों में लीन हो जाय वही पूरा शिष्य है। आम रिवाज है कि लोग किसी भी अच्छे साधु या ब्राह्मण के मिल जाने पर उनसे दीक्षा लेकर शिष्य बन जाते हैं और जहाँ तक बन पड़ता है उनकी सेवा व टहल करते हैं लेकिन अपने शरीर व औलाद व धन वग़ैरह में बदस्तूर लीन रहते हैं। ये लोग सच्चे शिष्य कहलाने के अधिकारी नहीं हैं।

सच्चा और पूरा शिष्य वही है जो अव्वल पूरे सतगुरु की तलाश में तत्पर हो और जब तक पूरे गुरु न मिलें किसी को गुरु न बनाये और जब पूरे गुरु मिल जायँ तो सच्चे दिल से भरपूर उनकी भक्ति में मसरूफ़ हो। उसके प्रेम की हालत यह हो कि—

२-गुरु दर्शन मन लोचता चैन न छिन को आय।
जगत भोग फीके लगें ता सँग मन नहिं जाय॥

यानी गुरू महाराज के दर्शन के लिये मन ऐसा व्याकुल रहे कि एक पल चैन न ले और तवज्जुह का रुख़ गुरू महाराज के चरणों में इस तरह क़ायम हो कि जगत् के सभी भोग निरस यानी फीके लगें और तबिअत में उनके लिये कोई रुचि न रहे। इसके सिवा—

३-लोभ मोह मन से गये मनुवाँ बेपरवाह।
रतन खान घट में खुली जगत काँच नहिं भाय॥

संसार के पदार्थों के लिये लोभ और मोह, जो कि पिछले व हाल के जन्म के संस्कारों की वजह से क़ायम होगये थे, मन से दूर होजायँ और मन संसार के पदार्थों से उपरत होकर बर्ताव करे। यह वैराग्य महज़ ख़्याली बातों की वजह से न हो बल्कि जैसे किसी को जवाहिरात की खानि मिल जाने पर काँच या नक़ली जवाहिरात की परवा नहीं रहती इसी तरह गुरू महाराज के चरणों का प्रेम प्राप्त होने से उसे जगत् के पदार्थों का भोगरस फीका लगने लगे और इसलिये उसे जगत् के पदार्थों की परवा न रहे। गुरू महाराज का संग करने पर स्वाभाविक शिष्य को उनके उपदेश सुनने का मौक़ा मिलता है। सच्चा शिष्य वह है जिसके

अन्दर गुरू महाराज के उपदेश सुनकर सुमति जाग उठे। जिसका नतीजा यह होगा कि नफ़ा नुक़्सान और दुःख व क्लेश की हालतों के आने पर उसे बिल्कुल तकलीफ़ न होगी क्योंकि उसको सहज में समझ में आता जावेगा कि किस मौज से यानी उसके किस नफ़े के लिये तमाम ऊँची नीची हालतें मालिक की जानिब से रवा रक्खी जाती हैं:—

४—रोग सोग चिन्ता मिटी सुमति दात गुरु दीन।
परख मौज कुछ पाय कर संशय सभी टलीन॥
५—उमँग उमँग सेवा करे उमँग उमँग सतसङ्ग।
उमँग सहित सुमिरन करे उमँग सहित धुनसङ्ग॥

सच्चा शिष्य नफ़ा व नुक़्सान की हालतों की परवा न करता हुआ राज़ी बरज़ा रहकर हर रोज़ नई उमंग के साथ गुरू महाराज की सेवा करता है और उनके सत्सङ्ग में हाज़िरी देता है, उनके बतलाये हुए नाम के सुमिरन की युक्ति की कमाई करता है और अन्तर में चेतन शब्द या अनहद शब्द की धुन से मेल करता है।

६—बलिहारी वा शिष्य के हौं वारी सौ बार।
जड़ चेतन का भेद जिन चीन्ह लिया मनमार॥
७—कारज जग के सब करे सुरत रहे अलगान।
कमल फूल नित बास जल तौ भी अलग रहान॥

मैं ऐसे शिष्य के ऊपर बार बार क़ुर्बान (बलिहार) हूँ जिसने गुरू महाराज का बतलाया हुआ योगसाधन करके अपने मन को बसकर लिया है और जड़ व चेतन यानी अर्ज़ व जौहर का फ़र्क़ जान लिया

यानी अत्यन्त कर लिया और जो इस ज्ञान प्राप्त होने पर भी अपने सभी दुनियवी फ़रायज़ बदस्तूर अदा करता रहता है यह नहीं कि लाचार बनकर या जगत् से विरक्त होकर अपने दीनी व दुनियवी फ़रायज़ की जानिब से लापरवा होजाय बल्कि सभी फ़रायज़ बदस्तूर सरअंजाम देता रहे अलबत्ता अपनी सुरत यानी तवज्जुह को अन्तर्मुख रक्खे जैसे कमल का फूल हरचन्द हमेशा जल में निवास करता है लेकिन फिर भी पानी से अलग रहता है।

८—गुरु पूरे दुर्लभ अती तीन लोक के माहिं।
पूरा शिष भी सहज से ढूँढ मिलेगा नाहिं॥

यह दुरुस्त है कि पूरे गुरु तीन लोक में अति दुर्लभ हैं यानी तलाश करने पर निहायत मुश्किल से नसीब होते हैं लेकिन वाज़ह हो कि पूरा और सच्चा शिष्य भी ढूँडने पर आसानी से न मिलेगा यानी पूरा शिष्य बनना भी दुश्वार है।

९—परम कृपा जब गुरु करें परम दया कर्तार।
पूरे गुरु के खोज की तब पावे जिव सार॥

जब किसी पर गुरू महाराज की परम कृपा हो और सच्चे मालिक कुल कर्तार की परम दया हो तभी उस शख़्स के हृदय में पूरे गुरु की तलाश का शौक़ पैदा होगा यानी सच्चे मालिक की किसी शख़्स के लिये मौज हो कि जगत् से न्यारा करके उसको मुक्ति की अवस्था प्राप्त कराई जावे और नीज़ पूरे गुरु की, जो संसार में मौजूद हों, मौज हो कि उनकी मारफ़त उस शख़्स के जीव का कल्याण हो तो उसके दिल में सच्चे और पूरे गुरु की तलाश का शौक़ पैदा हो सकता है। इसलिये धन्य

हैं वे लोग जो चाहे किसी भी मज़हब या सोसाइटी या संसारी अवस्था में हों लेकिन उनके अन्दर सच्चे गुरु की तलाश का शौक़ क़ायम है। यह शौक़ वृथा न जायगा बल्कि ज़रूर एक दिन उनको पूरे गुरु से मिलाकर रहेगा और पूरे गुरु से मिलने पर उनके जीव के कल्याण की काररवाई सहज में शुरू हो जावेगी। लेकिन अफ़सोस है उन लोगों के हाल पर जो देह के बन्धनों में फँसे हैं और जिनके घट में कुमति यानी कुबुद्धि ने निवास कर रक्खा है और जो संसार के ही सुख चाहते हैं। चूँकि संसार में ज़्यादातर इसी क़िस्म के लोग हैं इसलिये आमतौर पर पूरे गुरु और पूरे शिष्य की तलाश का सच्चा शौक़ देखने में नहीं आता।

१०-देह फन्द जिव फाँसिया कुमति किया घट बास।
पूरे गुरु और शिष्य की कौन धरे मन आस॥

बचन (३८)

कलों के मुतअल्लिक़ ख़्यालात।

हिन्दुस्तान व नीज़ दूसरे मुल्कों में बाज़ लोगों का ख़्याल है कि मशीनों (कलों) की ईजाद से दुनिया को सख़्त नुक़सान पहुँचा है। वे कहते हैं कि जब तक तमाम हुकूमतें क़ानूनन् कलों का इस्तेमाल बन्द न कर देंगी दुनिया में चैन न होगा। क्या लोगों के ये ख़्यालात दुरुस्त हैं? हमारी राय में हरगिज़ नहीं। कलें आख़िर औज़ार हैं जो इन्सान को मेहनत से बचाती हैं। जो काम पहले बीस आदमी मिलकर एक महीने में ख़त्म नहीं कर सकते थे

उसे आज कलों की मदद से दो चार आदमी एक दिन में ख़त्म कर सकते हैं। यह दुरुस्त है कि जिन क़ौमों ने कलों की ईजाद में बढ़कर क़दम रक्खा उनके पास दूसरी जातियों की दौलत खिचकर चली गई और वे लोग, जो बड़े पैमाने पर चलते कारख़ानों के मालिक हैं, बादशाहों से ज़्यादा मालदार हैं। नीज़ यह भी दुरुस्त है कि दौलत के इस प्रकार एक जगह संग्रह का नतीज़ा यह हुआ है कि जिन जातियों के घर से दौलत चली गई वे मुफ़लिस व निर्धन हो गई हैं और जिनके हाथों में पहुँची वे विषयी, अहंकारी या माया की ग़ुलाम हो गई हैं। मगर वाज़ह हो कि कलों की ईजाद से पहले ज़माने में भी दौलत चन्द ही क़ौमों व लोगों के हाथ में रहती थी, ज़्यादातर रिआया जैसे तैसे पेट भर कर और मोटा झोंटा कपड़ा पहन कर दिन काटती थी। इसके सिवा दुनिया में ऐसा कौन इन्तिज़ाम है जो हर हालत में हर क़िस्म के लोगों के लिये एकसाँ मुफ़ीद हो। नीज़ जो क़ौमें तंगदस्त हो गई हैं उन्हें किसने मना किया था कि दूसरों की ईजाद से वे काम न लें या अपने लिये नई कलें ईजाद न करें। दुनिया एक घुड़दौड़ के मैदान के समान है जिसमें सभी क़ौमें बल्कि सभी लोग दौड़ दौड़ रहे हैं। जो लोग पीछे रह जाते हैं उनको तंग-दस्ती व मुफ़लिसी का मुँह देखना पड़ता है और जो आगे निकल जाते हैं या दूसरों के बराबर रहते हैं वे खुशहाल रहते हैं।

ग़ौर का मुक़ाम है कि इन्सान का जिस्म खुद एक मशीन है। नीज़ पशु पक्षी और वनस्पति आदि के शरीर तरह तरह की मशीनें हैं। अलावा इनके सूर्य भगवान् एक ऐसी मशीन हैं जो बेशुमारवज़न पानी समुद्रों से उठाकर पहाड़ों व मैदानों तक पहुँचाते हैं। हमारे घरेलू

इस्तेमाल की मामूली चीज़ें, जो प्राचीन काल से चली आती हैं, सभी तरह तरह की मशीनें हैं। चर्ख़ा, चक्की, चूल्हा, अँगीठी, रहट, चर्सा, ओखली, मूसल वग़ैरह मशीनें नहीं तो क्या हैं ? इसलिये किसी इन्सान का इन कलों को इस्तेमाल करते हुए नई व विशेषलाभदायक यानी इस ज़माने की मशीनों के ख़िलाफ़ होना और उनका नाम सुनकर नाक भौं चढ़ाना कैसे जायज़ हो सकता है ? यह मानते हैं कि इस ज़माने में लोगों ने हमेशा कलों की ईजाद से जायज़ फ़ायदा नहीं उठाया, जैसे बहुत सी कलें जो लड़ाई के महकमों के लिये तयार की गई हैं नाजायज़ व नामुनासिब हैं। काश इस क़िस्म की कलों के चाहने वालों को ख़्याल होता कि इन ईजादों से "जो पर को खोदे कुआँ ताको कूप तयार" के उसूल के बमूजिब एक दिन ख़ुद उनको या उनके देशवासियों को मुसीबत उठानी पड़ेगी। मगर ख़्याल रहे कि अगर इस क़िस्म की ईजादों से इन्सान को तकलीफ़ हो तो यह क़ुसूर उनके प्रेमियों की नीअत और ज़ुल्मतए निगाह का होगा क्योंकि अगर इनके दिल में शौक़ दूसरी क़ौमों को कुचलने का न होता तो ये हरगिज़ इन ईजादों की तरक़्क़ी के मददगार न होते और मददगार न रहने से ईजाद करने वालों की तवज्जुह कभी उनकी जानिब न जाती। अगर कलों के विरोधी अपनी कोशिश इस क़िस्म की कलों के बन्द करने की जानिब मुख़ातिब करें तो निहायत मुनासिब है और यक़ीनन् कुल की कुल मुहज़्ज़ब दुनिया उनका साथ देगी।

मुल्के हिन्दुस्तान के लिये, जो ईजादों के मुआमले में निहायत पीछे है, सख़्त ज़रूरत है कि मशीनरी की ज़रूरत को पूरे तौर पर समझकर

इस जानिब काफ़ी तवज्जुह दें। हिन्दुस्तान के अक्सर हिस्सों में गर्मी सख़्त पड़ती है अगर किसी तरीक़े से सूर्य की गर्मी से काम लेकर भाप तैयार की जाय तो निहायत कम क़ीमत पर बिजली पैदा की जा सकती है और कोयला व तेल की कमी का नुक़सान आसानी से पूरा किया जा सकता है। कुछ अर्सा हुआ कि यह ख़बर शाया हुई थी कि क़ाहिरा में किसी साहब ने ऐसा बायलर व इन्जन बनाया है जो सूर्य की गर्मी से भाप तैयार करके काम करता है। क्या हिन्दुस्तान में इस तरह की ईजादें नहीं की जा सकतीं? इसी तरह हिन्दुस्तान में दूसरे मुल्कों से करोड़ों रुपये के केमिकल्ज़ (Chemicals) आते हैं जो ज़रा तवज्जुह देने से बआसानी यहाँ तैयार हो सकते हैं बशर्तेकि मुनासिब कलों का इस्तेमाल किया जावे। काश जितना ज़ोर राजनैतिक तरक़्क़ी के मुतअल्लिक़ लगाया जाता है उसका दसवाँ हिस्सा भी कलों के इस्तेमाल व ईजाद की तरक़्क़ी की तरफ़ लगाया जाता ताकि हमारी बहुत सी दिक़्क़तें सहज में रफ़ा हो जातीं। बेहतर होगा कि सत्संगी नौजवान बजाय बीस पच्चीस रुपये की नौकरी के लिये उम्मीदवार बनने के, कारख़ानों में कलों का इस्तेमाल सीखें। याद रहे कि जैसे घोड़े को क़ाबू करने में ख़ास क़िस्म का लुत्फ़ आता है वैसे ही मशीन से काम लेने में भी लुत्फ़ आता है।

बचन (३९)

एक मद्रासी योगी के ऐतराज़ों के जवाब ।

अहाते मद्रास में काय-कल्प और रसायन के हज़ारों प्रेमी मिलते हैं। कहते हैं कि कल्प देसी दवाइयों का ऐसा मुरक्कब (मिश्रण) है जिसके कुछ दिन मुनासिब तरीक़े से सेवन करने पर नरशरीर अमर हो जाता है और रसायन जानने वाला बहुत सहज में हर चीज़ को सोने में बदल जा सकता है। यहाँ तक प्रसिद्ध है कि मद्रास के जङ्गलों में ऐसे आदमी मिलते हैं जिनकी उम्र एक लाख बरस से ज़्यादा है और जो दूध, ईंट, पत्थर वग़ैरह को सोने में बदल सकते हैं। कुछ दिन हुए टिनावली से एक ख़त आया जिसमें एक नौजवान मद्रासी योगी साहब का कुछ हाल लिखा था। वे योगी साहब दावा करते हैं कि उनको रसायनविद्या खूब आती है। दो एक सत्सङ्गी भाइयों ने आपसे मुलाक़ात की और बात चीत करते समय दर्याफ़्त किया कि उनको परमार्थ के सम्बन्ध में भी कुछ ज्ञान है? योगी साहब ने जवाब में राधास्वामीमत के ऊपर कुछ एतराज़ (आक्षेप) कर दिये। आपका सबसे ज़बरदस्त एतराज़ यह है कि सत्सङ्गी दूसरे दुनियादारों के समान धन की कठिनाइयों में गिरफ़्तार हैं, इससे प्रकट है कि राधास्वामी दयाल में ऐसी शक्ति नहीं है कि असाधारण रीति से अपने भक्तों की आर्थिक ज़रूरतें पूरी कर सकें। यह एतराज़ साबित करता है कि योगी साहब को अपनी रसायनविद्या का बड़ा अहङ्कार है और सच्चे परमार्थ से बिल्कुल अनजान हैं। अगर

वास्तव में उनको रसायनविद्या आती है तो उनका यह घमण्ड ठीक व दुरुस्त है और चूंकि इस ज़माने के वैज्ञानिक लोग यह स्वीकार करते हैं कि पारा व सीसा के अन्दर बिजली के द्वारा रासायनिक परिवर्तन करने से सोना व चाँदी बनाये जा सकते हैं इसलिये रसायनविद्या के दावा की निस्बत कोई शख़्स मुँह खोलने का अधिकारी नहीं है लेकिन यह बात अभी तहक़ीक़ करनी बाक़ी है, आया योगी साहब को सचमुच यह विद्या आती है। बहरहाल यह मान कर कि उनको यह विद्या आती है सत्सङ्गी भाइयों की वक़फ़ियत के लिये विचार करते हैं आया इस विद्या का परमार्थ से कोई सम्बन्ध है या नहीं और आया इस विद्या के जानने से परमार्थ की कमाई में जनता को सहूलियत हो सकती है या नहीं।

वाज़ह हो कि इस वक़्त सत्सङ्गियों की तादाद एक लाख के क़रीब है और प्रतिदिन बढ़ती जारही है। अगर हुज़ूर राधास्वामी दयाल सब सत्सङ्गियों को उनकी आर्थिक ज़रूरतें पूरी करने के लिये रसायनविद्या बतलावें और सबके सब भाई ख़ातिरख़्वाह सोना बनाने लगें तो सोना सोना न रहेगा। सोने की क़ीमत ज़्यादा इसलिये है कि यह कम मिलता है लेकिन अगर लाखों आदमी आसानी से घर बैठे सोना बनाने लगें तो सोने की क़ीमत लोहे से ज़्यादा न रहेगी और राधास्वामी दयाल का सब सत्सङ्गियों की आर्थिक ज़रूरतें पूरी करने के लिये रसायनविद्या सिखलाना व्यर्थ हो जायगा। इसके सिवा ख़्याल करें अगर जनता को यह मालूम हो गया कि सत्सङ्ग में शरीक होने पर हर किसी को रसायनविद्या सिखला दी जाती है तो ग़ालिबन् हर शख़्स की यही कोशिश होगी कि ज्यों त्यों सत्सङ्गमण्डली के अन्दर घुस जाय। जिसका

परिणाम झूठों की भीड़ भाड़ और सच्चों के अकाज के सिवा और कुछ न होगा।

नीज़ मालूम हो कि परमार्थ का उद्देश्य अमीरी हासिल करना नहीं है। परमार्थशब्द परम व अर्थ दो शब्दों से संयुक्त है। अगर इन्सान का परम अर्थ यानी उसकी ज़िन्दगी का ऊँचे से ऊँचा उद्देश्य संसारी सुख की प्राप्ति हो तो परमार्थ के मानी अमीरी हो सकते हैं लेकिन दुनिया के सभी समझदार इन्सानों ने इन्सानी ज़िन्दगी का आदर्श रूहानी तरक़्क़ी यानी अध्यात्मिक उन्नति स्वीकार किया है। आत्मोन्नति के लिये अमीरी की ज़रूरत नहीं है बल्कि सच पूछो तो अमीरी इस उद्देश्य की प्राप्ति में विघ्न-कारक है। मसलन् हज़रत मसीह का वचन है–"ऊँट के लिये सुई के नाके से गुज़र जाना इतना मुश्किल नहीं है जितना कि धन के लोभी के लिये ख़ुदा की बादशाहत में दख़ल पाना।"

यही वजह है कि सच्चे ऋषियों व साध, सन्त, महात्माओं ने कभी दुनिया के धन दौलत की तरफ़ न ख़ुद तवज्जुह फ़र्माई और न अपने शिष्यों व सेवकों को उनके जमा करने के लिये आज्ञा दी। इसपर एतराज़ करने वाला कह सकता है कि इसके तो ये मानी हुए कि परमार्थ का अभि-लाषी अपनी बुद्धि व साहस के अनुसार हाथ पाँव पीटता रहे और दुनियवी मुसीबतों व कष्टों का शिकार रहे, सच्चे परमार्थ व साध, सन्त का उस ग़रीब की इन बातों से कुछ तअल्लुक़ नहीं। मगर ये ऐतराज़ बिल्कुल व्यर्थ हैं। अगर योगी साहब को उनके गुरू साहब ने सोना बनाने का रसायन देकर रुपये पैसे की फ़िक्र से आज़ाद कर दिया है तो हुज़ूर राधास्वामी दयाल ने भी अपने हर एक शरणागत बच्चे को नाम-

रसायन देकर निहाल व मालामाल फ़र्माया है और जैसा कि कहा गया है "जिसके पास नामरसायन है उसके सामने दूसरी सब रसायनें हाथ बाँधे खड़ी रहती हैं।" अगर कोई ऐसा अभागी सत्सङ्गी है कि जो नामरसायन का इस्तेमाल नहीं करता और दुनियवी तकलीफ़ में फँसा रहता है तो यह उसका अपना क़ुसूर है। चुनाँचे अगर योगी साहब भी उस रसायन का, जो उनको आता है, इस्तेमाल न करें तो अपनी दुनियवी ज़रूरतें पूरी करने में असमर्थ रहेंगे। जिन भाइयों ने नाम की क़दर पहचानकर मुनासिब तरीक़े से अभ्यास किया है अगर उनसे दर्याफ़्त किया जाय कि आया वे उस रस व आनन्द व दया व प्रफुल्लता के तजरुबात के एवज़ सोना बनाने वाला रसायन लेना स्वीकार करेंगे तो अवश्य वे इसका जवाब नफ़ी में देंगे। दुनिया में सभी लोग ग़रीब नहीं हैं, सैकड़ों राजा महा-राजा और अमीर कबीर भी हैं जिनके पास रसायनविद्या के जाने बग़ैर बेशुमार दौलत मौजूद है लेकिन वे फिर भी हाजतमन्द और दुखी हैं इसलिये हर सच्चा परमार्थी बख़ूबी समझता है कि दुनियवी तकलीफ़ों के दूर करने के लिये सोना व चाँदी मुनासिब इलाज नहीं है। दुनियवी ज़रूरियात पूरी करने के लिये अलबत्ता हर शख़्स को रुपये पैसे की ज़रूरत है लेकिन अगर कोई शख़्स मध्यचाल से ज़िन्दगी व्यतीत करे और अपने मन व इन्द्रियों पर मुनासिब रोक थाम रक्खे तो उसकी ज़रूरतें बहुत कम रह जाती हैं जिनके पूरा करने के लिये मामूली आमदनी की ज़रूरत है और इस क़दर आमदनी मामूली कारोबार या मेहनत मज़दूरी करने से आसानी से हो सकती है। यह दुरुस्त है कि इस ज़माने में इल्म व हुनर का बड़ा ज़ोर है और इल्म व हुनर के जानकार ही आसानी से

रुपया कमा सकते हैं लेकिन वाज़ह हो कि हुज़ूर राधास्वामी दयाल ने अपने शरणागत बच्चों की इस विभाग में सहायता फ़र्माने के लिये कॉलिज व कारख़ानाजात जारी फ़र्मा दिये हैं। जो भाई चाहें सत्सङ्ग के इन्तिज़ामात से लाभ उठा सकते हैं।

अब योगी साहब के दूसरे एतराज़ों के जवाब दिये जाते हैं। आप कहते हैं कि राधास्वामीमत में जिस क़दर हृदय की पवित्रता व शुद्धता दरकार है साधारण मनुष्यों से बन पड़नी नामुमकिन है इस-लिये साधारण मनुष्य राधास्वामीसत्सङ्ग के अन्दर प्रचलित योगसाधनों से लाभ नहीं उठा सकते। योगी साहब का यह एतराज़ निहायत तुच्छ है। आत्मा व परमात्मा के दर्शन के लिये जितने भी प्रसिद्ध योगमार्ग हैं उन सब में यमों व नियमों का पालन पहली सीढ़ी क़रार दिया गया है। चंचल व मलिन चित्त आत्मदर्शन के क़तई नाक़ाबिल है। चित्त से यह दोष दूर रखने के लिये खान पान व जगत् के सङ्ग व्यवहार में ख़ास दर्जे की सावधानी निहायत ज़रूरी है। इसलिये अगर राधास्वामीमत में शराब व मांस वग़ैरह से परहेज़, हक़ व हलाल की कमाई का खाना खाने के लिये ताक़ीद, मनसा, वाचा, कर्मणा किसी को दुख न देने की तालीम और मन व इन्द्रियों को घट में रोकने के लिये हिदायत की जाती है तो क्या आश्चर्य है? हिन्दुस्तान में सैकड़ों बल्कि हज़ारों ऐसे पुरुष हैं जो किसी क़िस्म का योगसाधन भी नहीं करते और जो सत्सङ्गी भी नहीं हैं लेकिन फिर भी इन उसूलों पर अमल करते हैं। मुश्किल यह है कि जनता में शब्द अभ्यास के मुतअल्लिक़ बहुत सी ग़लतफ़हमियाँ फैली हुई हैं और जिस शख़्स ने कुछ दिनों शब्द अभ्यास करके अमली तजरुबा हासिल

नहीं किया वह इस अभ्यास की महिमा का पूरा अन्दाज़ा हरगिज़ नहीं लगा सकता। यह जरूर है कि—"बुलहवसी और कपटी जन को नेक न धुन पतियाई" यानी संसार की वासनाओं से सना हुआ व कपटी मन शब्द अभ्यास के अयोग्य है लेकिन जिस शख़्स के दिल में सच्चा शौक़ चित्त की निर्मलता हासिल करने के लिये मौजूद है वह सुमिरन ध्यान का साधन करके पहले अपने मन को सावधान करता है और ज़रा सी सावधानता यानी तबियत में क़रार आते ही फ़ौरन् शब्द अभ्यास में जुट जाता है। शब्दधार के प्रकट होते ही उसके मन की मलिनता एक-दम दूर होजाती है। जिन भाइयों को इस क़िस्म के तजरुबे हासिल हैं वे अच्छी तरह समझते हैं कि इस तरीक़े से बिगड़ा व फैला हुआ मन कैसी सहूलियत से क़ाबू में आजाता है और चित्त से मलिनता दूर होकर किस क़दर जल्द प्रेम अङ्ग प्रकट होजाता है। हम योगी साहब को सलाह देंगे कि उनको इख़्तियार है कि जिस रास्ते पर चाहें चलें और अगर उनको कोई ऐसा योगसाधन आता है कि जिसकी कमाई के लिये ज़्यादा शुद्धता व निर्मलता की ज़रूरत नहीं है तो ख़ुशी से उसका फ़ायदा उठावें लेकिन ख़्वाहमख़्वाह राधास्वामीमत पर कटाक्ष न करें जबकि उन्हें सन्तमत के अन्दर प्रचलित योगसाधनों से क़तई वाक़फ़ियत नहीं है।

इन एतराज़ों के अलावा आप फ़र्माते हैं कि राधास्वामीमत में जो रिवाज छठे चक्र से अभ्यास शुरू करने का है वह नामुनासिब है। अभ्यास शुरू स्थान में होना चाहिये। एकदम सीढ़ी के ऊँचे डंडे पर पैर धरने के लिये हिदायत करना ग़लत है।

यह सच है कि पिछले ज़माने में योगाभ्यास प्रायः मूलाधार

य़ानी पहले चक्र के मुक़ाम से शुरू किया जाता था लेकिन बाज़ लोग नाभिचक्र या हृदयचक्र से भी अभ्यास शुरू करते थे और सन्तों ने अभ्यास छठे चक्र के मुक़ाम ही से शुरू कराया। वजह यह है कि मनुष्यशरीर के अन्दर छठा चक्र ही सुरत यानी रूह की बैठक का मुक़ाम है इसलिये इस मुक़ाम ही से सुरत की चढ़ाई होती है। सुरत छठे चक्र के मुक़ाम पर ठहर कर निचले चक्रों व जिस्म के अन्दर फैली हुई है इसलिये छठे चक्र के स्थान पर अभ्यास करने से थोड़े ही अर्से में उसका सिमटाव उस मुक़ाम पर होने लगता है और कुछ अर्से बाद काफ़ी सिमटाव होने पर अभ्यासी के अन्दर आगे बढ़ने के लिये क़ाबिलियत पैदा हो जाती है। पस यह एतराज़ कि "छठे चक्र के मुक़ाम से अभ्यास शुरू करना नामुनासिब है" मूर्खता की बात है।

योगी साहब ने ये तीन ही एतराज़ किये थे जिनके जवाब संक्षेप में दिये गये। अब सत्सङ्गी भाइयों को सलाह दी जाती है कि महज़ रँगे हुए वस्त्र देखकर या योगाभ्यास व रसायन वग़ैरह के सम्बन्ध में बातें सुनकर किसीसे उलझ जाना मुनासिब नहीं है। जो लोग रसायन वग़ैरह का ज़िक्र करते हैं वे उमूमन् अपना सिक्का जमाने की ग़रज़ से गृहस्थों की कमज़ोरी का फ़ायदा उठाते हैं यानी वे यह जानते हुए कि चूँकि हर गृहस्थ को आर्थिक ज़रूरतें रहती हैं इसलिये वह रुपया कमाने की सहल तरकीब की बात चीत सुनकर ख़्वाहमख़्वाह श्रद्धा में आजावेगा, इस क़िस्म की बातें बनाते हैं और मौक़ा देखकर अपना दाव खेलते हैं। सीधे सादे लोग उनके धोके में आजाते हैं और धोका मालूम होने पर अर्से तक सिर धुनते हैं।

वचन (४०)

क्या हम हिन्दू हैं ?

राधास्वामीमत में यह तालीम दी जाती है कि सभी जीव कुल मालिक राधास्वामी दयाल के बच्चे हैं। ज़ात पाँत के भेद, मुल्की व भूगोल की सीमा, मज़हब व मिल्लत की तफ़रीक़ (भिन्नता) सब खुदग़रज़ इन्सानों की ईजादें हैं। ज्यों ही कोई शख़्स खुदग़रज़ी व तङ्गदिली के दलदल से निकलकर मानुषिक आदर्श की चट्टान पर चढ़ जाता है उसको दुनिया और ही तरह की नज़र आने लगती है, उसके दिल से ये सभी भेद दूर होजाते हैं और उसे प्राणीमात्र अपने भाई दरसते हैं। यही वजह है कि हुज़ूर स्वामी जी महाराज के वक़्त से लेकर आज तक हर क़ौम व मिल्लत के लोग सत्सङ्ग में बिला किसी रोक टोक के शरीक होते रहे हैं और आज दिन सत्सङ्गमण्डली में हिन्दू, मुसलमान, ईसाई व जैन और ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र सभी मज़हबों व वर्णों से आये हुए भाई दिखलाई देते हैं और सबके सब एक दूसरे के साथ भाइयों के समान पेश आते हैं और यही वजह है कि परम गुरु हुज़ूर साहब ने सत्सङ्गियों में इन्टर मेरेज का रिवाज़ क़ायम करने का इरादा ज़ाहिर फ़र्माया और परम गुरु महाराज साहब ने इस मुबारक इरादे को अमली जामा पहनाया और अब आम तौर पर सत्सङ्गी भाई इस उसूल के क़ायल हो गये हैं और पिछले चन्द सालों के अन्दर सत्सङ्गमण्डली में काफ़ी तादाद शादियाँ बिला लिहाज़ ज़ात पाँत के की गई। यह दुरुस्त है कि इस क़िस्म की तालीम सिर्फ़ राधास्वामीमत ही में नहीं है बल्कि बहुत सी

दूसरी मज़हबी जमाअतें भी ज़ात पाँत वग़ैरह के बखेड़ों के ख़िलाफ़ हैं लेकिन वे लोग जो कट्टर हिन्दू कहलाते हैं इन क़ैदों की सख़्ती के साथ पाबन्दी करते हैं और अगर इन भाइयों से दर्याफ़्त किया जाय या इनके नुक़्तए निगाह से देखा जाय तो हम हिन्दू कहलाने के मुस्तहक़ नहीं हैं। मगर शुक्र है कि हिन्दुस्तान के इन्तिज़ाम की बागडोर इन लोगों के हाथ में नहीं है और इन्सान को इन्सान और अपना भाई क़बूल करने वाले पुरुषों की तादाद काफ़ी है।

मगर सवाल यह है—क्या हम सचमुच हिन्दू हैं? इस सवाल का जवाब देना आसान नहीं क्योंकि अभी तक यह तय नहीं हो सका कि लफ़्ज़ 'हिन्दू' का अर्थ क्या है? बहुत से हिन्दुस्तानी व अँगरेज़ों ने इस लफ़्ज़ की तारीफ़ क़ायम करने की कोशिश की लेकिन अभी तक किसी को इस शुभ कार्य में कामयाबी नहीं हुई। हिन्दू के लफ़्ज़ी मानी 'चोर' 'गुलाम' व 'सियाह' वग़ैरह हैं। अगर लफ़्ज़ी मानी लिये जायँ तो कोई भी समझदार इस नाम से कहलाना पसन्द न करेगा और अगर हिन्दू के मानी 'हिन्दुस्तान का रहने वाला' लिये जायँ तो हम ज़रूर हिन्दू हैं। मगर इस मानी में तमाम मुसलमान व अँगरेज़ भी, जिन्होंने इस मुल्क में रहन सहन इख़्तियार करली है या जिनके बाप दादा यहाँ बसते चले आये हैं, हिन्दू क़रार पाते हैं। चुनाँचे अरबिस्तान वग़ैरह में यहाँ के मुसलमानों को, जो हज्ज या सैर के लिये वहाँ जाते हैं, 'हिन्दू शेख़' कहते हैं। एक फ़ाज़िल अँगरेज़ ने दिक़ होकर लफ़्ज़ हिन्दू की यह तारीफ़ क़ायम की कि जो हिन्दुस्तानी, ईसाई व मुसलमान न हो, वह हिन्दू है। अगर यह तारीफ़ मंज़ूर कीजाय तो भी हम हिन्दू ठहरते

हैं। लेकिन इस हिसाब से तमाम चीनी, जापानी, यहूदी और पारसी वग़ैरह, जो मुसलमान व ईसाई मज़हबों में नहीं हैं, सभी हिन्दू क़रार पाते हैं।

बाज़ लोग कहते हैं कि हिन्दू वह है जो वेदों व ऋषियों में श्रद्धा रक्खे। हम लोग वेदों को वेद और ऋषियों को ऋषि मानने के लिये हर वक्त तैयार हैं लेकिन बहुत से ईसाई व मुसलमान भी इस बात के मानने वाले हैं इसलिये हिन्दू कहलाने के लिये वेदों को वेद, और ऋषियों को ऋषि मान लेना काफ़ी नहीं है, वेदों को ईश्वरकृत और ऋषियों को ब्रह्मदर्शी तसलीम करना भी लाज़िम है। लेकिन बहुत से ऐसे लोग हैं जो हिन्दू कहलाते हैं और न वेदों को ईश्वरकृत मानते हैं और न ऋषियों को ब्रह्मदर्शी तसलीम करते हैं। हम लोग यह बख़ुशी तसलीम करते हैं कि हिन्दुस्तान में कई एक ऋषि ब्रह्मदर्शी हुए और यह भी मानते हैं कि हमारे बुज़ुर्ग वेदों को आप्तवचन व ईश्वरकृत स्वीकार करते थे। हम यह भी यक़ीन रखते हैं कि वेदों के अन्दर ब्रह्मपुरुष तक का ज्ञान वर्णन किया गया है और यह भी एतक़ाद रखते हैं कि बहुत सी ऋचाएँ अनुभवी ऋषियों ने प्रकट की हैं और वे निहायत उत्तम व पवित्र ख़्यालात से भरपूर हैं। लेकिन हम यह मानने के लिये तैयार नहीं हैं कि वेदों के सभी मन्त्र इस पाये के हैं या वेद नित्य हैं और उनके मन्त्र हमेशा ईश्वर के दिमाग़ में क़ायम रहते हैं और वेदों के अन्दर लौकिक, पारलौकिक सभी विद्याएँ मौजूद हैं और कोई सत्य बात ज्ञान या विज्ञान के मुतअ़ल्लिक़ उनके बाहर हो ही नहीं सकती और यह कि प्रलय होने पर वेदों का ज्ञान ईश्वर में समा जाता है और दोबारा रचना होने पर यानी नई सृष्टि के आदि में वही मन्त्र ईश्वर से फिर प्रकट होते हैं। क्योंकि

अगर ऐसा हो तो यह क़रार पाता है कि ईश्वर सिर्फ़ वैदिक संस्कृत का प्रेमी है। बहुत से फ़ाज़िल यह तसलीम करते हैं कि ऋग्वेद दुनिया में सबसे प्राचीन पुस्तक है अगर्चे हाल में तूतन ख़ामन की क़ब्र से प्राप्त लिपियों के पढ़ने से यह ख़्याल संदिग्ध हो गया है मगर हमें ऋग्वेद को सबसे प्राचीन पुस्तक तसलीम करने में कोई कठिनाई नहीं है। अलबत्ता वेद की बाज़ प्रार्थनाएँ पढ़कर हम हैरत में पड़ जाते हैं और हमें संकोच होता है कि इन मन्त्रों को इज़्ज़त की निगाह से देखें। "वेदसर्वस्व" ग्रन्थ के प्रथम भाग के सफ़ा १३ पर लिखा है कि यह तो अवश्य है कि शत्रुओं के मार डालने, उनके अङ्ग तोड़ डालने तथा उनके धन आदि का विनाश कर देने की प्रार्थनाएँ वेद भगवान में की गई हैं परन्तु मनुष्य को कदापि ऐसे फल वाले योगों के अनुष्ठान की आज्ञा नहीं दी गई। मनुष्य का प्रार्थनामात्र करने में अधिकार है, उसका सुनना न सुनना ईश्वर के अधिकार में है। ग्रन्थकर्त्ता ने, जिनके दिल में वेदों के लिये कमाल इज़्ज़त व मोहब्बत है, इस तहरीर के ज़रिये एक ज़बरदस्त ऐतराज़ का ज़ोर हलका करने की कोशिश की है लेकिन उनको तसलीम करना पड़ता है कि दुश्मनों को नुक़सान पहुँचाने के मुतअल्लिक़ किस तरह की प्रार्थनाएँ वेदों में दर्ज हैं। अगर ईश्वर सृष्टि के आदि ही में इस क़िस्म की प्रार्थनाएँ जीवों को सिखलाता है तो दुश्मनों को माफ़ करने और संसार में बिरादराना मोहब्बत का सिलसिला क़ायम होने के ख़्यालात को नमस्कार कह देना चाहिये। हम नमूने के तौर पर दो चार मन्त्रों के अर्थ पेश करते हैं ताकि हमारा मतलब प्रकट हो जावे—

"ऐ शत्रुओं के नाश करने वाले! उन लुटेरे लड़ने वालों के

सिर जमा करके अपने पाँव के तले कुचल दे। तेरे पाँव खूब चौड़े हैं। इन्द्र आर्य भक्तों की युद्ध में रक्षा करता है। वह यज्ञ न करने वालों को आर्यों के लाभ के लिये उनसे पराजित करवाता है। वह शत्रुओं की स्याह खाल उधड़वाता है और उसे जलाकर राख कर देता है। ऐ अश्विनी कुमारो! उन लोगों को, जो कुत्तों की तरह चीखते हैं और जो हमसे लड़ना चाहते हैं, नष्ट करदो और जो तुम्हारी स्तुति करते हैं उन्हें धन प्रदान करो। हमारी इस प्रार्थना को मंज़ूर करो।"

हमें अफ़सोस है कि हमारी तबिअत यह क़बूल करने से इन्कार करती है कि इस क़िस्म की प्रार्थनाएँ सिखलाना ईश्वर अपना फ़र्ज़ समझता है।

इसके सिवा मुश्किल यह है कि न तो यही तय है कि कौन कौन ग्रन्थ वेद कहलाने के योग्य हैं और न ही यह तय है कि किस बुज़ुर्ग का भाष्य या तर्जुमा मानने योग्य है। कहने के लिये वेद चार हैं—ऋग, यजुर, साम व अथर्व। लेकिन यजुर्वेद दो हैं—एक शुक्ल, दूसरा कृष्ण। उत्तरी हिन्द में शुक्ल यजुर्वेद का प्रचार है और दक्षिणी हिन्द में कृष्ण का। दो यजुर्वेद मानने से कुल वेद पाँच होजाते हैं। अलावा इसके ऋग्वेद की २१ शाखाएँ (शाखें) हैं, यजुर्वेद की १०१, सामवेद की १००० और अथर्ववेद की ९, यानी चारों वेदों की ११३१ शाखें हैं। अब किस शाख को मानें और किस को न मानें ? अव्वल तो सबकी सब वेद की शाखें मिलती ही नहीं हैं, दोयम् शाखों की तादाद के मुतअल्लिक़ भी इत्तिफ़ाक़राय नहीं है। स्वामी दयानन्द जी ११२७ शाखें बतलाते हैं,

पतञ्जलि महाराज ११३१, कूर्म पुराण के रचयिता ११३० और चरणव्यूह के कर्ता व्यास जी ११६।

स्वामी दयानन्दजी ने पुस्तक ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका (दूसरा एडीशन) के सफ़ा २६२ पर लिखा है—"मन्त्रभाग की चार संहिता कि जिनका नाम वेद है वे सब स्वतः प्रमाण कही जाती हैं और उनसे भिन्न ऐतरेय, शतपथ आदि प्राचीन सत्य ग्रन्थ हैं वे परतः प्रमाण के योग्य हैं तथा ग्यारह सौ सत्ताईस (११२७) चार वेदों की शाखा वेदों के व्याख्यान होने से परतः प्रमाण।"

ग़ालिबन् स्वामी जी ११३१ की मीज़ान में से ४ इस लिये कम करते हैं कि चार मूल ग्रन्थ हैं और बक़िया ११२७ शाखाएँ हैं। लेकिन मुश्किल यह है कि जो जो शाखाएँ इन दिनों प्राप्त होती हैं उनके पढ़ने से मालूम होता है कि वे किसी मूल ग्रन्थ के व्याख्यान नहीं हैं। इन शाखाओं में जहाँ तहाँ पाठ में लफ़्ज़ी तब्दीलियों और कुछ मन्त्रों की कमी बेशी के सिवा ज़्यादा बाहम फ़र्क़ नहीं है। फिर किसको मूल कहें ? और मंत्रभाग की वे चार संहिता कौन हैं जिन्हें स्वतः प्रमाण माना जावे ? स्वतः प्रमाण ग्रन्थ के दूसरे सब सत्य ग्रन्थ आश्रित होते हैं और स्वतःप्रमाण वचनों के प्रकाश ही से वे प्रकाशवान् होते हैं। इसलिये जब सभी प्रचलित संहिता शाखाएँ हैं तो किसको स्वतः प्रमाण कहें और किसको परतः प्रमाण मानें। अगर स्वामी दयानन्द जी जैसे फ़ाज़िल शाखाओं को मूल ग्रन्थों का व्याख्यान कहने की ग़लती कर सकते हैं, हालाँकि उन सब का पाठ क़रीबन् यकसाँ है और ख़ुद भी जिस यजुर्वेद का उन्होंने भाष्य किया है वह भी माध्यन्दिनी शाखा के नाम से मशहूर है न कि मूल

संहिता के नाम से, तो फिर दूसरों का क्या ठिकाना है! वेदसर्वस्व ग्रन्थ में लिखा है—"जब यह प्रत्यक्ष देखने में आता है कि सब शाखाग्रन्थों में कोई ग्रन्थ व्याख्यान और व्याख्येय नहीं है किन्तु काचित्क पाठभेद और पाठ-न्यूनाधिक को छोड़ सब एक दूसरे के समान हैं तब ११३१ में ४ व्याख्येय और शेष ११२७ व्याख्यान हैं यह कल्पना करना और मानना कैसे समंजस कहा जा सकता है।" ग्रन्थकर्ता की राय में अध्यापक या अध्येता के भेद से पाठ के भेद या मन्त्रों की कमी बेशी का नाम शाखा है क्योंकि शाखाग्रन्थों में इनके सिवा कोई दूसरा फ़र्क़ मालूम नहीं होता। ख़ैर! शाखा का अर्थ कुछ भी हो लेकिन यह तसलीम करना होगा कि न मूल वेदों का मुआमला तय है, न उनकी शाखाओं का और न उनकी तादाद का। इसी तरह भाष्यों के मुतअल्लिक़ हर कोई जानता है कि महीधर भाष्य में वैदिक मन्त्रों को सख़्त गन्दे मानी पहनाये गये हैं। सायणाचार्य एक अर्थ करते हैं और स्वामी दयानन्द जी दूसरे; किसे सही मानें किसे ग़लत मानें। ईश्वर ने सृष्टि के आदि में वेद भगवान् प्रकट करने की तो कृपा फ़र्माई लेकिन अफ़सोस! उनके असली मन्त्र व अर्थ दुनिया में सदा प्रचलित रखने के लिये इन्तिज़ाम न फ़र्माया।

हमारी राय है कि अगर वाक़ई वेद ईश्वरीय ज्ञान हैं तो उनके अर्थों को कोई ईश्वरकोटि मनुष्य ही समझ व समझा सकता है। अगर श्रद्धालु भक्त वेद के ग्रन्थ मोल लेकर उनकी पूजा किया करें तो हरचन्द ऐसा करना पाप नहीं है लेकिन ऐसा करने से उन लोगों को वेदों के अन्दर बयान किये हुए रहस्य का न कुछ पता चल सकता है और न कुछ लाभ हो सकता है। वेदों का ईश्वरकृत मानना उसी शख़्स का

सही व मुफ़ीद है जो अपने हृदय को काफ़ी शुद्ध करके किसी असली वेदज्ञ या मन्त्रद्रष्टा ऋषि की शरण लेकर अपनेतई वेदों के ज्ञान से वाक़िफ़ करे और बाद में उस ज्ञान को अमल में लाकर अपना मनुष्य-जन्म सफल करे। महज़ वेदों में श्रद्धा रखना या अपनी बुद्धि या दूसरे साधारण बुद्धि वाले मनुष्यों के अर्थों को पढ़ना वेदों का ईश्वरकृत मानना नहीं कहा जा सकता।

इस मानी में हम तसलीम करते हैं कि हम हिन्दू नहीं हैं लेकिन साथ ही आज दिन हिन्दुस्तान भर में एक भी हिन्दू नहीं है क्योंकि कोई भी यथार्थ वेदज्ञ नहीं है। बावजूद वेदज्ञ न होने के सन्तमतकी तालीम से व हुज़ूर राधास्वामी दयाल की दया से आम सत्सङ्गी भाई बखूबी समझते हैं और दिल व जान से मानते हैं कि वेदों में ब्रह्म पुरुष का ज्ञान भरा है। उस ब्रह्म पुरुष का नाम 'ओम्' है। उसका निज स्थान त्रिकुटी है और त्रिकुटी से नीचे ब्रह्माण्ड व पिण्ड देशों में उसकी शक्ति काम कर रही है। पिछले ज़माने में कुछ लोग मन्त्रों द्वारा और कुछ लोग यज्ञों द्वारा उसकी पूजा करते थे और कुछ बुज़ुर्ग योगसाधन करके उसका साक्षात्कार करते थे, ऐसे बुज़ुर्ग ही ब्रह्मदर्शी ऋषि कहलाते हैं। सबके सब ऋषि ब्रह्मदर्शी न थे और न ही सबके सब लोग योगसाधन करते थे। हम सब लोग उन बुज़ुर्गों की औलाद हैं। वेद, षड्दर्शन, स्मृतियाँ वग़ैरह उन बुज़ुर्गों की यादगारें हैं। अपने बुज़ुर्गों की छोड़ी हुई चीज़ों का हमें किसी हालत में निरादर नहीं करना चाहिये अलबत्ता यह ज़रूरी नहीं है कि हम लकीर के फ़क़ीर बनकर उनकी हर एक बात को सत्य मानें। बिला जानकार व पहुँचे हुए गुरू के न वेद और न ही ऐसे ग्रन्थ, जिनमें

अन्तरी भेद बयान किये गये हैं समझ में आ सकते हैं। इसलिये सबसे अव्वल ज़रूरत पहुँचे हुए कामिल पुरुषों की है । वे अगर भाग्य से मिल जायँ तो हमें रफ़्ता रफ़्ता क़ाबिल बनाकर ऋपियों के उपदेश का रहस्य सहज में समझा सकते हैं। सन्तमत में जो कुछ अन्तरी भेद बयान किया गया है और ऋपियों के उपदेश में ब्रह्मपद तक जो कुछ हाल बयान है उसमें कुछ भी अन्तर नहीं है। अलबत्ता ब्रह्मपद से आगे सत्य देश या सच्चखण्ड का भेद सिर्फ़ सन्तों ने बयान किया है।

हमारी यह भी राय है कि 'हिन्दू' किसी ख़ास मज़हब या रास्ते का नाम नहीं है बल्कि लफ़्ज़ 'हिन्दू' निहायत वसी है और हिन्दूमज़हब के अन्दर वे सब ख़्यालात शामिल हैं जो प्राचीन काल से लेकर आज तक आर्य पुरुषों और उनकी सन्तान के दिमाग़ में परमार्थ की निस्बत पैदा हुए। दूसरे लफ़्ज़ों में हिन्दूमज़हब किसी ख़ास उसूलों के मजमुआ का नाम नहीं है बल्कि प्राचीन समय से प्रचलित सभ्यता का नाम है। इस अर्सए दराज़ के अन्दर आर्य बुज़ुर्गों ने परमार्थ के मुतअल्लिक़ हरजानिब ख़्यालात दौड़ाये और परमार्थ के लिये तड़पती हुई आत्माओं को शान्ति देने के लिये अनेक मार्ग यानी तरीक़े दर्याफ़्त किये। जब किसी बुज़ुर्ग या मुनि ने कोई नया रास्ता या उसूल क़ायम किया तो उस वक़्त और नीज़ एक अर्से तक यानी जब तक उस बुज़ुर्ग की असली तालीम से वाक़िफ़ पुरुष मौजूद रहे उसके अनुयायियों यानी मानने वालों का एक अलग फ़िर्क़ा क़ायम रहा और पुराने ख़्यालात के लोग उनकी मुख़ालिफ़त करते रहे। लेकिन जब असली भेद से वाक़िफ़कार पुरुष न रहे तो वह फ़िर्क़ा टूटकर हिन्दूसम्प्रदाय में शामिल होगया और पुराने

ख़्यालात के लोगों ने उस बुज़ुर्ग की बड़ाई को तसलीम कर लिया। चुनाँचे महात्मा बुद्ध और जैनो के ऋषभदेव ने, जो कि वेदों और शास्त्रों का ज़ोर शोर से खण्डन करते थे, अलहदा फ़िर्के क़ायम किये लेकिन कुछ मुद्दत गुज़रने के बाद महात्मा बुद्ध की हिन्दुओं के दस अवतारों में और ऋषभदेव की हिन्दुओं के चौबीस अवतारों में शुमार होने लगी। इसी तरह उन्नीसवीं शताब्दी के आख़िरी हिस्से में आर्य-समाजी भाई हिन्दू नाम से सख़्त परहेज़ करते थे लेकिन अब चन्द साल से अपनेतईं बखुशी हिन्दू तसलीम करते हैं। यह सच है कि लफ़्ज़ हिन्दू के मानी चोर, लुटेरा, गुलाम और नौकर हैं और नामुमकिन नहीं है कि मुसलमान बादशाहों ने यह नाम भारतवासियों को दिली नफ़रत के इज़हार में इनायत किया हो लेकिन तवारीख़ बतलाती है कि जहाँ बहुत से नाम रफ़्ता रफ़्ता गिरते जाते हैं वहाँ बाज़ नाम रफ़्ता रफ़्ता चढ़ते भी जाते हैं। मसलन् लफ़्ज़ 'गँवार' के असली मानी गाँव का रहने वाला है लेकिन रफ़्ता रफ़्ता इस लफ़्ज़ के मानी गिर कर बेवकूफ़ हो गये। 'हलाल-ख़ोर' के मानी हलाल रोज़ी खाने वाला और 'मेहतर' के मानी बहुत बड़ा है, लेकिन अकबर बादशाह ने भंगियों पर तरस खाकर उनका नाम हलाल-ख़ोर और मेहतर रख दिया तब से ये शब्द उन्हीं के लिये नियत हैं। 'हरजाई' के मानी हर जगह रहने वाला है और यह लफ़्ज ख़ुदा के लिये इस्तेमाल किया जाता था, मगर अब व्यभिचारिणी औरत को कहते हैं। बरख़िलाफ़ इसके लफ़्ज 'शोख़' के मानी दरअसल ढीठ, गुस्ताख़ थे लेकिन अब चढ़कर माशूक़ेहक़ीक़ी (ख़ुदा) की शान में आता है। इसी तरह लफ़्ज़ 'बंगाली' से पहले डरपोक व यन्त्र मन्त्र जानने वाला समझा

जाता था लेकिन अब उसके मानी अक़्लमन्द, होशियार और बहादुर समझे जाते हैं। अगर हम लोग अपनी रहनी गहनी अच्छी बनायें और अपने शरीर को तन्दुरुस्त और मन को निर्मल बनाकर सच्चे परमार्थियों की सी ज़िन्दगी बसर करने लगें और सब बुरी और निन्दनीय रस्में छोड़कर सच्चे भाइयों व प्रेमी जनों की तरह ज़िन्दगी बसर करने लगें तो लफ़्ज़ हिन्दू के मानी भी चढ़ सकते हैं।

वचन (४१)

बन्धन व फ़र्ज़ में बड़ा फ़र्क़ है।

दुनिया का अजीब इन्तिज़ाम है। इधर तो क़ुदरत ने माँ बाप के दिल में औलाद की चाह धर दी है, उधर यह क़ायदा कर रक्खा है कि बहुत से वाल्दैन के क़तई औलाद (सन्तान) नहीं होती और जिनके होती है तो अक्सर छोटी उम्र में या कुछ बड़ी हो कर मर जाती है। जिन शख़्सों के औलाद नहीं होती वे उसके लिये जहान भर की कोशिशें करते हैं। कोई दवा दारू ऐसी नहीं जिसे वे खाने के लिये तैयार न हों, कोई हकीम डाक्टर ऐसा नहीं जिसके दरवाजे की हाज़िरी से उन्हें इन्कार हो और मालिक से लेकर भूत पलीत तक कोई ऐसी गुप्त शक्ति नहीं जिसका दरवाजा खटखटाने में उन्हें शर्म हो। "बेचारे गरज़बस बावले" होकर तरह तरह की मुसीबतें व नुक़्सान उठाते हैं और जब तक उनका मनोरथ पूरा नहीं हो जाता अपनेतई जीते जी मरा समझते हैं।

दवा इलाज या पूजा पाठ कराने पर जब किसी ग़रीब की आरज़ू पूरी हो जाती है तो बेतरह खुशियाँ मनाता है और जिस देवता की पूजा करते करते औलाद हुई है उसी को सच्चा करतार और कुल मालिक समझने लगता है। अर्से तक उसके खान्दान में बल्कि उसके जुम्ला सङ्गी साथियों के घर में उसी देवता का सेवन रहता है और इस तरह समझ बूझ का कहना एक तरफ़ रख कर लोग क़िस्म क़िस्म के इष्ट धारण करते हैं और जब कुछ अर्से बाद उनकी औलाद मर जाती है तो जो कष्ट उनको होता है उसका अन्दाज़ा लगाना हर इन्सान के लिये कठिन है। ऐसे शख़्सों के अलावा बहुत से ऐसे लोग भी हैं जिनके औलाद मामूली तौर से हो जाती है और वे लड़का या लड़की के मर जाने पर सख़्त दुख महसूस करते हैं। खास कर बुढ़ापे की उम्र में औलाद का सदमा सख़्त रंज का बायस होता है।

आज कल इस मुल्क में, जहाँ बच्चों की मौतों की तादाद बहुत ज़्यादा है, क़रीबन् हर वाल्दैन को इस मुसीबत का सामना करना पड़ता है। क्या यह इन्सान पर सरासर जुल्म नहीं है कि पहले उसके दिल में औलाद की ख़्वाहिश डालना, फिर उसे औलाद न देना और अगर देना तो अचानक उससे रोते पीटते और चिल्लाते बिल्लाते छीन लेना ? ज़ाहिरन् जुल्म ज़रूर है मगर ग़ौर करो कि इन्सान को किसने कहा था कि औलाद में मोह व ममता क़ायम करो। शादी की ख़्वाहिश ज़रूर क़ुदरत ने उसके अन्दर पैदा की मगर इसलिये कि दूसरी सुरतों (आत्माओं) को इन्सानी चोले में अवतार लेने का मौक़ा मिले। लेकिन इसकी वजह से सिर्फ़ इस क़दर इजाज़त है कि इन्सान बखुशी शादी करें और जिस वाल्दैन के घर औलाद

पैदा हो वे उसकी मुनासिब पर्वरिश करें लेकिन यह इजाज़त नहीं है कि जिनके घर औलाद पैदा न हो वे उसके लिये हद से ज़्यादा कोशिशें करें या अगर बावजूद हर तरह की खबरगीरी के औलाद मर जाय तो नाहक़ परेशान खातिर हों। इन्सान खुद ही मोह व ममता में पड़कर अपने लिये आयन्दा मुसीबत के सामान इकट्ठा करता है और कुदरत को इलज़ाम लगाता है। छोटी उम्र में बच्चे की भोली सूरत और सादे बोल चाल से माँ बाप के दिल में गहरी मोहब्बत क़ायम हो जाती है और बड़े होने पर उससे उम्मीदें बाँध लेने से ज़बरदस्त ग़रज़मन्दी पैदा हो जाती है और नतीजा यह होता है कि औलाद के गुज़र जाने पर माँ बाप दोनों की ज़िन्दगी तलख हो जाती है। काश जिस क़दर मोहब्बत इन्सान अपनी औलाद के साथ करता है उसका आठवाँ हिस्सा भी सच्चे मालिक के चरणों में करे तो न सिर्फ़ दुनियवी दुख सुख उसके नज़दीक फटकने न पावेंगे बल्कि वह हँसता खेलता हुआ जन्म मरण के चक्र से बाहर हो कर अमर व अविनाशी आनन्द को प्राप्त होगा।

यह दुरुस्त है कि आम इन्सान के लिये इस उसूल पर चलना ग़ैर मुमकिन है लेकिन सत्सङ्गी भाइयों के लिये, जिन्हें सत्सङ्ग के अन्दर जन्म लेने के वक़्त से दुनिया की नाशमानता और तुच्छता और सच्चे मालिक के चरणों के प्रेम की महिमा व समर्थता के मुतअल्लिक़ उपदेश सुनाये जाते हैं और जो खुशी से सच्चे कुल मालिक के चरणों से मेल हासिल करना अपनी ज़िन्दगी का उद्देश्य क़ायम करते हैं, अपनेतई औलाद के मोह से बचाना और अपना प्रेम सच्चे मालिक के चरणों में क़ायम करना मुश्किल न होना चाहिये। मगर अफ़सोस है कि कुछ

पुराने संस्कारों के कारण और कुछ सत्सङ्ग की तालीम काफ़ी तौर पर जज़्ब न करने की वजह से वाज़ भाई आज़मायश में पड़ने पर घबरा जाते हैं। चुनाँचे वाज़ मौतें इस क़िस्म की हुई कि परमार्थी लिहाज़ से जिन्हें निहायत ही उत्तम कहना चाहिये लेकिन वाल्दैन का थोड़ी देर के लिये चित्त डोल गया। एक नौजवान लड़के ने अपने मरने से चार दिन पहले अपने वाल्दैन से साफ़ अलफ़ाज़ में कह दिया कि मेरे लिये हुक्म रवानगी का आगया है, आप दवा इलाज की तकलीफ़ न उठावें बल्कि अपनेतई होने वाली वात के लिये तय्यार करें। मरने के दिन लड़के ने अपनी माता से कहा कि मुझे चरन छूने की इजाज़त दीजिये और मेरे सब क़ुसूर माफ़ फ़र्माइये। इसी तरह अपने भाई व दीगर रिश्तेदारों से रुख़सत माँगी। रिश्तेदारों ने उसकी ख़्वाहिश पूरी कर दी लेकिन तअज्जुब में आकर दर्याफ़्त किया कि ऐसी बातें क्यों करते हो? लड़के ने जवाब दिया कि मुझे राधास्वामी दयाल बुलाते हैं लेकिन आप अपनी जानिब खींचते हैं, मुझे जाने के लिये ख़ुशी से इजाज़त दें। मैं हरचन्द एक नया सत्सङ्गी हूँ लेकिन सफ़र के लिये तैयार हूँ और आप लोग कम-ज़ोरी दिखलाते हैं यह वक़्त कमज़ोरी दिखलाने का नहीं है, वग़ैरह वग़ैरह। थोड़ी देर के वाद वह हुज़ूर राधास्वामी दयाल का नाम लेता हुआ और मुस्क-राता हुआ नाशमान शरीर से अलहदा हो गया। इसी तरह एक और भाई की लड़की की मौत हुई। वह लड़की वमुश्किल सात या आठ साल की होगी लेकिन उसने भी अख़िरी वक़्त पर बयान किया कि मुझे हुज़ूर राधास्वामी दयाल का दर्शन मिल रहा है। उसके माँ वाप व दादा देख रहे थे कि वह कम उम्र का बच्चा इधर से वेहोश बराबर राधास्वामी नाम का जप कर रहा है। इस निर्दोष बच्चे ने

भी पवित्र नाम ज़बान से लेते हुए दुनिया से रुख़सत हासिल की। यह दुरुस्त है कि अलावा दूसरी मुहब्बतों के माँ बाप को ख़ून के रिश्ते की वजह से भी औलाद के साथ मोहब्बत होती है और यह भी दुरुस्त है कि किसी यार दोस्त के मामूली सफ़र के लिये रवाना होने पर भी आम लोगों का दिल भर आता है और यह भी सही है कि बाज़ औलाद उत्तम संस्कारी होने से ग़ैर मामूली अच्छी लगती है मगर सन्तमत की तालीम यह इजाज़त नहीं देती कि किसी गोश्त के लोथड़े के साथ प्रेमीजन अपना इतना बन्धन पैदा करे कि उसके अलहदा होने पर उसका दिल अर्से तक डाँवाडोल रहे। औलाद की मुनासिब पर्वरिश करना और बीमारी की हालत में उसकी सेवा करना और उसे सुख पहुँचाना हर सतसङ्गी वाल्देन का फ़र्ज़ है लेकिन औलाद के रुख़सत होने पर, यह देखते हुए कि औलाद हँसते खेलते रुख़सत हो रही है और मालिक की खास दया उसके शामिले हाल है, अपनेतई दुखी महसूस करना नामुनासिब है। इस क़िस्म का बन्धन मोह व ममता का नतीजा होता है और परमार्थ में नुक़्सानदेह है। औलाद के साथ बन्धन पैदा करना हमारा फ़र्ज़ नहीं है, हमारा सदा क़ायम रहने वाला व गहरा रिश्ता सिर्फ़ सच्चे मालिक से होना चाहिये। वही हमारे असली माँ बाप व मित्र हैं और उन्हीं के चरणों में पहुँचना हमारी जिन्दगी का उद्देश्य है। दूसरे सब रिश्ते और काम महज़ चन्दरोज़ा हैं। हमें उनके साथ कार्यमात्र के लिये सम्बन्ध रखना मुनासिब है। हमारी तरह हमारी औलाद भी खास उद्देश्य लेकर दुनिया में आती है और अगर वह हमारे उद्देश्य को क़बूल करे तो उसे भी हमारे साथ मोह व बन्धन से परहेज़ करना मुनासिब है।

बचन (४२)

असली पवित्रता क्या है ?

आपने पवित्र, पवित्रता, शुद्ध, शुद्धता, Holy, Sacred वग़ैरह अलफ़ाज़ हज़ारों मौक़ों पर इस्तेमाल किये होंगे और इस्तेमाल होते सुने होंगे लेकिन ग़ालिबन् आपको कभी यह इत्तिफ़ाक़ न हुआ होगा कि यह तहक़ीक़ करें कि पवित्रता किस चीज़ या वस्तु का नाम है या कोई चीज़ पवित्र क्यों कही जाती है? मिसाल के तौर पर देखिये— गङ्गाजल पवित्र कहा जाता है और वजह यह बतलाई जाती है कि गङ्गा जी स्वर्ग से उतरकर संसार में आई हैं इसलिये पवित्र हैं और इसीलिये गङ्गाजल भी पवित्र है। लेकिन और भी बहुत सी नदियाँ, जो स्वर्ग से नहीं उतरीं, पवित्र मानी जाती हैं। इसपर जवाब दिया जाता है कि वे सब नदियाँ, जिनका ज़िक्र प्राचीन शास्त्रों में है, बवजह इसके कि पूर्व काल में ऋषियों व बुज़ुर्गों ने उनके किनारे विश्राम किया, पवित्र मानी जाती हैं। लेकिन ऐसी भी बहुत सी नदियाँ हैं जिनका शास्त्रों में कहीं ज़िक्र नहीं लेकिन फिर भी पवित्र मानी जाती हैं। चुनाँचे 'राजाबरारी' में काजल व गंजाल नदियों के सङ्गम का मुक़ाम पवित्र समझा जाता है और सूर्य्य व चन्द्र ग्रहण के मौक़ों पर और ख़ास ख़ास तिथियों पर हज़ारों लोग अपने शहर या क़स्बे के क़रीब नदियों में पवित्रता हासिल करने के लिये स्नान करते हैं। इसपर कहा जाता है कि शास्त्रों में बहता जल पवित्र माना गया है इसलिये सब नदियों का जल पवित्र है। लेकिन जो जल बोतलों या गागरों में बन्द करके रक्खा जाता है वह तो बहता

जल नहीं है। नीज़ पंजाब में आम तौर पर देखा जाता है कि स्त्रियाँ व पक्के सनातन धर्मी भाई जब दरिया या तालाब से नहाकर आते हैं तो अक्सर एक लोटा भरकर साथ लाते हैं और चूँकि रास्ते में हर क़िस्म के लोगों से स्पर्श हो जाता है इसलिये अपने मकान की दहलीज़ से गुज़रने से पहले उस लोटे से पानी लेकर कुछ छींटें अपने बदन पर इस ख़्याल से डालते हैं कि उन छींटों के पड़ने पर लोगों के स्पर्श करने से लगी हुई अपवित्रता धुल जाती है। इससे साफ़ ज़ाहिर है कि 'बहते हुए जल' के अलावा बोतल व लोटे वगैरह के अन्दर बन्द पानी भी पवित्र माना जाता है। दूसरी मिसाल बर्तनों की लीजिये—अगर किसी हिन्दू का मिट्टी का बर्तन कोई मुसलमान या चमार छू दे तो वह हमेशा के लिये अपवित्र मानकर फेंक दिया जाता है लेकिन अगर पीतल वगैरह का बर्तन छू दिया जाय तो आग में तपाकर शुद्ध कर लिया जाता है मगर काँसे का बर्तन चूंकि आग में डालने से फट जाता है इसलिये मिट्टी से मलकर और जल से धोकर साफ़ कर लिया जाता है। इसी तरह हम लोग अपने हाथ भी मिट्टी या साबुन व पानी से धोकर साफ़ करते हैं मगर चाँदी का बर्तन चूंकि मिट्टी से मलने पर घिसता है और चाँदी एक महँगी धातु है इसलिये चाँदी के बर्तन सिर्फ़ जल से धो लेने पर शुद्ध माने जाते हैं और सोना चूंकि और भी बेशक़ीमत धातु है इसलिये विश्वास है कि सोना हवा ही से शुद्ध होजाता है। तीसरी मिसाल वर्णों की लीजिये--ब्राह्मण सब से पवित्र कहे जाते हैं, क्षत्रिय व वैश्य दर्जे बदर्जे उतरकर और शूद्र अपवित्र माने जाते हैं और चाण्डाल व अछूत निहायत अपवित्र। इसकी वजह अक्सर यह बतलाई जाती है कि ब्राह्मणों का

ख़ून चूँकि निहायत ही पवित्र है इसलिये वे सबसे बढ़कर पवित्र माने जाते हैं। लेकिन सैकड़ों ब्राह्मण गोश्त खाते हैं और होटलों वग़ैरह में मुसलमानों व अछूतों का पकाया हुआ खाना इस्तेमाल करते हैं। आप कहेंगे कि इस क़िस्म के ब्राह्मण, जो भ्रष्टाचारी हैं, पवित्र नहीं हैं लेकिन उनकी औलाद अगर सनातन रीति पर चलने लगे तो वह फिर पवित्र होजाती है। अलावा इसके हर सोसायटी के अन्दर हज़ारों मर्द व औरत दुराचारी होते हैं और दरपर्दा बिला लिहाज़ ज़ात या वर्ण के नाजायज़ तअल्लुक़ पैदा करते हैं और इसी वजह से हर वर्ण के अन्दर वर्णसङ्कर पैदा होते हैं जिनकी असलियत का इल्म अवाम को क़तई नहीं होता। इन वाक़िआत की मौजूदगी में ख़ून की पवित्रता को आदर्श मानकर किसी जमाअत या बिरादरी को आम तौर पर पवित्र मानना ग़लत होजाता है। इसके सिवा ख़ून उस ख़ूराक का निचोड़ ही तो है,जो इन्सान रोज़ाना इस्तेमाल में लाता है और ऊँची ज़ात के लोग आसमान से उतरी हुई किसी ख़ास चीज़ का इस्तेमाल नहीं करते बल्कि वही चीज़ें, जो आम बाज़ार से हर ज़ात के लोग बर्तते हैं,इस्तेमाल में लाते हैं। फिर ख़ास जिस्मों के अन्दर पवित्रता के क्या मानी ? यह नहीं हो सकता कि पवित्रता ख़ून की वजह से हो और खून ख़ूराक से पैदा हो और वही ख़ूराक एक जिस्म में पवित्र खून पैदा करे और दूसरे में अपवित्र। और अगर ऐसा है तो पवित्रता खून में न हुई बल्कि जिस्म में ठहरी। जिस्म की बुनियाद इन्सान का वीर्य है और वीर्य यक़ीनन् ख़ूराक से बनता है। आप कहेंगे कि वीर्य के अन्दर रूहानियत भी रहती है। आपका यह कहना बिल्कुल दुरुस्त है लेकिन अछूत के वीर्य के अन्दर भी रूहानियत रहती है। अगर

उसमें रूहानियत न हो तो अछूत के औलाद कैसे पैदा हो? आप यह कहेंगे कि अछूत के वीर्य के अन्दर बुरे संस्कारों से सनी हुई रूहानियत रहती है और ऊँची जात वालों के वीर्य में उत्तम संस्कारों वाली रूहानियत रहती है। अगर ऐसा होता तो अछूत लोगों की औलाद होश आने पर उमूमन् बदचलन और सब दुर्व्यसनों से भरी हुई होती और ऊँची ज़ात वालों की औलाद सद्धर्मी और पुण्यकर्मी होती लेकिन क्या ऐसा देखने में भी आता है? इसका जवाब देने की ज़रूरत नहीं । इसलिये वीर्य के अन्दर संस्कारों के भेद की दलील भी बेकार है। ग़ालिबन् इसी वजह से ब्रह्माण्ड पुराण के एक श्लोक में बयान किया गया है—"जन्म से हर शख़्स शूद्र ही होता है, संस्कारों की वजह से द्विज कहलाता है, वेदों के पढ़ने से विप्र हो जाता है और जो ब्रह्म को जानलता है वह ब्राह्मण हो जाता है।" अगर इस श्लोक की तालीम सच मान ली जाय तो न सिर्फ़ जन्म की समानता का उसूल क़ायम हो जाता है बल्कि जितने संस्कारों से हीन और वेदों से अनभिज्ञ ब्राह्मण हैं वे सब शूद्रों की शुमार में आजाते हैं। अगर इस पर यह कहा जाय कि उपनयन संस्कार से मनुष्य द्विज हो जाता है तो अगर शूद्रों व अछूतों का भी उपनयन कर दिया जावे वे भी द्विज बन जायँ लेकिन इन ग़रीबों के उपनयन करने की स्मृतियों में इजाज़त ही नहीं है।

इन सब बातों पर ग़ौर करने से मालूम होता है कि पवित्रता की हक़ीक़त से आम लोग नावाक़िफ़ हैं और जैसे मज़हब के मुतअल्लिक़ और बहुत सी बातों में अन्धपरम्परा नक़ल की जाती है ऐसे ही पवित्रता के मुतअल्लिक़ भी ख़्यालात क़ायम हैं और ये बातें महज़ हिन्दू

भाइयों पर नहीं घटतीं बल्कि मुसलमान व ईसाई भाइयों पर भी वैसी ही घटती है। कुछ साल हुए आगरे में हीविट् पार्क के अन्दर एक साहब के दान से पब्लिक लाइब्रेरी की बुनियाद रक्खी गई। वे साहब पक्के रोमन कैथलिक हैं। उन्होंने इस मौक़े पर आगरे के आर्चबिशप साहब को निमन्त्रित किया। आर्चबिशप साहब ने पानी का एक प्याला लेकर अपने विश्वासों के कुछ मन्त्र पढ़े और इसके बाद उस प्याले से पानी लेकर, जिसे Holy water यानी पवित्र जल कहा जाता है, जगह जगह बुनियादों पर छिड़का। इसी तरह (यानी हिन्दू भाइयों के तरीक़ के बमूजिब) जार्डन नदी व चश्मए ज़मज़म का पानी ईसाई व मुसलमान भाइयों के नज़दीक पवित्र है। हमारी मंशा किसी जमाअत के मज़हबी क़ायदों के मुतअल्लिक़ बहस करने की नहीं है बल्कि इस अम्र की जाँच से है कि अवाम के दिल में पवित्रता के मुतअल्लिक़ क्या क्या ख़्यालात बैठे हुए हैं। सन्तमत यह सिखलाता है कि पवित्रता सिर्फ़ आत्मा यानी सुरत के अन्दर है और जो हाल रोशनी का है वही पवित्रता का है यानी जैसे रोशन चीज़ अपने सम्बन्ध में आने वाली प्रकाशहीन चीज़ों को रोशन कर देती है इसी तरह पवित्रात्मा भी अपवित्र से अपवित्र चीज़ को भी, जो उसके सम्बन्ध में आवे, पवित्र कर देती है। मगर जैसे बावजूद सूर्य की एक ही क़िस्म की किरणें चमकने के दुनिया के अन्दर सबके सब पदार्थ एक रंग के नहीं हैं बल्कि मुख़्तलिफ़ रंग के हैं, क्योंकि उनकी बनावट इस क़िस्म की है कि मुख़्तलिफ़ पदार्थ किरणों के मुख़्तलिफ़ अंशों को जज़्ब व reflect करते हैं यानी अक्स डालते हैं इसी तरह आत्मा के सम्बन्ध में आने पर मुख़्तलिफ़ पदार्थ मुख़्तलिफ़

दर्जे की पवित्रता हासिल करते हैं। इसलिये अगर किसी पुरुष के अन्दर आत्मशक्ति का भरपूर इज़हार है और उसका मन व शरीर उसकी आत्मशक्ति की किरणों से रोशन है तो हरचन्द उसका मन और शरीर आत्मा के बराबर चैतन्य व पवित्र नहीं हो सकते लेकिन बमुक़ाबिले दूसरे मनुष्यों के मन व शरीर के पवित्र समझे जायँगे। सन्तमत की पवित्रता की तारीफ़ से एक यह भी नतीजा निकलता है कि जो शख़्स, हिन्दू हो या मुसलमान, ऊँची जात का हो या शूद्र व अछूत, अपनी आत्मशक्ति के जगाने का साधन करता है वह पवित्र है और उन लोगों से, जो दूसरे कारणों से अपनेतईं पवित्र समझते हैं, हज़ारहा दर्जे बढ़कर है। खुशी का मुक़ाम है कि ब्रह्माण्ड पुराण के उस श्लोक का रचयिता जिसके अर्थ ऊपर दर्ज किये गये, सन्तमत की शिक्षा के साथ सहमत है। असल श्लोक नीचे लिखा जाता है:—

'जन्मना जायते शूद्रः, संस्काराद् द्विज उच्यते।
वेदपाठाद् भवेद् विप्रो, ब्रह्म जानाति ब्राह्मणः ॥'

वचन (४३)

असली त्याग क्या है ?

हिन्दुस्तान में बहुत से ऐसे फ़िर्के हैं जिनमें दुनियवी सामान के त्याग पर अज़हद ज़ोर दिया जाता है। इसमें शक नहीं कि शुरू में इन फ़िर्कों में ज़्यादातर सच्चे त्यागी हुए। चूँकि उनकी दृष्टि एक दर्जे

तक अन्तर्मुख थी और उन्हें अन्तरी आनन्द प्राप्त था इसलिये कुदरतन् उनकी तवज्जुह इन्द्रियभोग की जानिब न जाती थी। वे मोटा झोटा कपड़ा पहनकर या मृगछाला वग़ैरह से बदन ढककर और रूखा सूखा टुकड़ा खाकर या कन्द मूल से पेट भरकर ज़िन्दगी बसर करते थे और चूँकि उनकी रहनी गहनी निहायत उत्तम थी और उनका मन बहुत कुछ निर्मल था इसलिये जो लोग उनके तअल्लुक़ में आते थे उनके श्रद्धालु हो जाते थे और बहुत से श्रद्धावान् प्रेमी तन, मन, धन से उनकी सेवा करके अपना भाग सराहते थे। लेकिन चूँकि ये बुज़ुर्ग तन, मन, धन के बन्धनों से बहुत कुछ आज़ाद होते थे इसलिये संसारी पदार्थों के बिला-तलब सामने आने या भोगने से उनपर ज़्यादा असर न होता था और वे निर्विघ्न अपनी परमार्थी धुन में लगे रहते थे। मगर बहुत से लोभी व कमीनादिल लोग इन बुज़ुर्गों का आदर सत्कार देखकर सोचते थे कि आराम से ज़िन्दगी बसर करने के लिये यह सबसे आसान नुस्ख़ा है। चुनाँचे हर ज़माने में मक्कार व नाममात्र के त्यागी होते रहे हैं और आज-कल भी उनकी कोई कमी नहीं है और लुत्फ़ यह है कि उन मक्कारों में अजब ढंग का मुक़ाबिला है। एक शख़्स सिर्फ़ गजभर वस्त्र से तन ढकता है, दूसरा मुक़ाबिले में सिर्फ़ चार इञ्च लँगोटी से काम लेता है, तीसरा लँगोटी भी उतार फेंकता है, चौथा बदन पर ख़ाक मलता है, पाँचवा चारो तरफ़ आग जला कर बैठता है, छठा उलटा लटकता है, सातवाँ हाथ सुखा लेता है, आठवाँ कीलों पर लेटता है, नवाँ अनाज छोड़ देता है, दसवाँ पेशाब व पाख़ाना चख कर दिखाता है, वग़ैरह वग़ैरह। इन लोगों की आश्चर्यजनक हालत देखकर अक्सर भोले

लोग मोहित होजाते हैं और उन्हें सच्चा त्यागी समझकर तन, मन, धन से उनकी सेवा करते हैं।

"रत्नकरण्डकश्रावकाचार" नाम की पुस्तक के अङ्गरेज़ी अनुवाद में जैन साधुओं के नंगा रहने की फ़िलॉसफ़ी पर पुरज़ोर बहस कीगई है जिसमें बतलाया गया है कि कर्मों के नाश करने के लिये निहायत ज़रूरी है कि चित्तवृत्ति या तवज्जुह शरीर व इन्द्रियों से ज्ञान में आनेवाले संसार से भरपूर हटाकर अन्तरात्मा में मज़बूती के साथ जोड़ी जावे और अगर किसी शख़्स का मन लँगोटी की प्राप्ति की फ़िक्र में उलझा है तो वह कैसे इस कोशिश में कामयाब होसकता है ? इसलिये किसी मोक्ष के तलबगार को यह शोभा नहीं देता कि जैन साधुओं के नंगा रहने की निस्बत हल्के लफ़्ज़ इस्तेमाल करे। अगर कोई यह कहे कि नंगा रहना ख़िलाफ़ तहज़ीब है तो जवाब यह है कि जबकि मज़हब व शिल्प (आर्ट) के सिल्सिले में इस क़िस्म का एतराज़ नहीं किया जाता तो मोक्ष के मुतअल्लिक़ लबकुशाई करना कैसे जायज़ होसकता है ? हर कोई जानता है कि दुनिया की बहुत सी पवित्र पुस्तकों में इस क़िस्म की बातें दर्ज हैं जो अगर मामूली किताबों के अन्दर दर्ज होतीं तो निहायत बुरी समझी जातीं और कोई शख़्स इससे इन्कार करने की हिम्मत नहीं कर सकता कि मर्दों व औरतों की नंगी तसवीरों व मूर्तियों की न सिर्फ़ बतौर शिल्पकार्य (works of art) के आम नुमायश की जाती है बल्कि हर दर्जे की सोसायटी के मोअज़्ज़िज़ व नेकस्वभाव ख़ान्दानों की आम व ख़ास बैठकों में उन्हें शोभा दीजाती है। इसके सिवा हर एक नया पैदा हुआ बचा नंगा ही होता है। अगर वाल्दैन बवजह इसके कि बच्चा

नंगा होता है उसकी पर्वरिश से इन्कार करने लगें तो जल्द ही दुनिया का ख़ात्मा होजाय। इसी तरह अगर नर्सें बीमारों की इसी एतराज की बुनियाद पर खबरगीरी से जवाब देने लगें या पुरुष और स्त्री इस एतराज़ से घबराने लगें तो भी दुनिया का कहाँ ठिकाना है ?

इन दलीलों के अन्दर किस क़दर जान है वह ज़ाहर है लेकिन अब तो मुहज़्ज़िब कौमों की तबिअत भी नंगेपन की तरफ़ मायल है। चुनाँचे फ्रान्स, जर्मनी व अमरीका में ऐसी सोसायटियाँ क़ायम हो रही हैं जो नंगेपन का रिवाज क़ायम करने के दर पै हैं। शनैश्चर के दिन उनमें से बाज़ सोसायटियों के मेम्बर (मर्द व औरत) झीलों या समुद्र के किनारे चले जाते हैं और दो दिन तक वहीं नंगे धूप लेते हैं और वर्ज़िश करते हैं। पुलिस या कोई और शख़्स किसी क़िस्म की मनाही नहीं करता और सैकड़ों आदमी उनका तमाशा देखते हैं। अगर यह रोग कुछ दिनों के अन्दर ज़ोर पकड़ गया तो मुहज़्ज़िब दुनिया का क़तई मुँह बन्द हो जायगा और त्यागी लोग बेख़ौफ़ शहरों के बाज़ारों में इच्छानुसार घूम सकेंगे।

लेकिन हमारा सवाल यह है कि चीज़ों के छोड़ने को त्याग कहना मुनासिब है या उनके भोग की वासना छोड़ने को ? क्या गृहस्थावस्था में रहकर इन्सान अपनी तवज्जुह संसार के भोग विलास की जानिब से नहीं हटा सकता ? सब लोग जानते हैं कि जब नट अपनी कला दिखलाने के लिये रस्से पर चलता है उस वक़्त नीचे ढोल बजता है, हज़ारों आदमी शोर मचाते हैं लेकिन उसकी तवज्जुह अपनी स्थिरता क़ायम रखने में रहती है। ऐसे ही पनिहारी घड़े पर घड़ा रक्खे हुए रास्ता चलती है,

मुँह से बातें करती है लेकिन उसकी तवज्जुह घड़ों की स्थिरता क़ायम रखने में लगी रहती है। जो काम नट या पनिहारी कर सकते हैं वह दूसरे इन्सान भी कर सकते हैं अलवत्ता उसके लिये अभ्यास या महावरा की जरूरत है। वाज़ह हो कि सन्तमत यानी राधास्वामीमत में इसी क़िस्म के त्याग की तालीम दी जाती है। त्याग वही उत्तम है जो सच्चे अनुराग का परिणाम हो यानी हमारा प्रेम सच्चे मालिक के चरणों में ऐसा क़ायम हो कि सदा हमारे अन्तर में चरणरस की अमृतधार जारी रहे और हमारा मन उसे पीकर संसार के विषयभोग के लिये कभी ख़्याल तक न उठावे। हम अपने सब दुनियवी फ़रायज़ अदा करते रहें और फ़रायज़ अदा करते वक़्त सब जायज़ व मुनासिब सामान का इस्तेमाल करें लेकिन हमारी तवज्जुह हमारे बस में रहे और हमारा मन चरणरस में रत रहे। हुज़ूर राधास्वामी दयाल फ़र्माते हैं:—

ऐसी सुरत प्रेम रँग भीनी,
तिनकी गति क्या कहूँ सुनाय।
बड़भागी कोइ विरला प्रेमी,
तिन यह न्यामत मिली अधिकाय॥

वचन (४४)

प्रार्थना के मुतअल्लिक़ विचार ।

दुनिया में जितने आस्तिक यानी मालिक की हस्ती में विश्वास रखने वाले मत जारी हैं उन सबमें प्रार्थना की आवश्यकता पर ज़ोर

दिया गया है। अलबत्ता सब मतों की प्रार्थनाएँ समान नहीं हैं और न ही उनके पेश करने के तरीक़े यकसाँ हैं लेकिन सब प्रार्थनाओं में मालिक को निहायत प्यार व अदब के वचनों से याद करके थोड़े से शब्दों में ज़िन्दगी की ज़रूरियात पेश कीगई हैं। मुक़र्ररा प्रार्थनाओं के अलावा मुख़्तलिफ़ फ़िर्क़ों के लोग अपने अपने ढंग से अपनी रोज़ाना ज़रूरियात भी पेश करते हैं। चुनाँचे हिन्दू भाई सन्ध्या, सिक्ख भाई अरदास और मुसलमान भाई नमाज़ के बाद अपने अपने अलफ़ाज़ में अपने उपास्य के सम्मुख अपना दुख सुख अर्ज़ करते हैं। राधास्वामी-मत में भी चन्द प्रार्थनाएँ, जो बिनती के नाम से प्रसिद्ध हैं, प्रचलित हैं जिनका सत्सङ्ग हो चुकने पर सब सत्सङ्गी मिलकर पाठ करते हैं। इन बिनतियों के पाठ के अलावा बहुत कम भाई प्रार्थना से काम लेते हैं क्योंकि सन्तमत में ज़्यादा ज़ोर नाम के सुमिरन या जप पर दिया जाता है। जिसकी एक ख़ास वजह है जो नीचे बयान कीजाती है:—

आम लोग जो नाम का सुमिरन करते हैं वे सुमिरन करते वक़्त तस्बीह या माला से काम लेते हैं और विश्वास रखते हैं कि पवित्र नाम का ख़ास तादाद में जप करने से दिली मुराद पूरी होजाती है। इनमें जो लोग संसार से किसी क़दर लापरवा हैं उनका विश्वास किसी क़दर मुख़्तलिफ़ है। उनका एत-क़ाद यह है कि पवित्र नाम का ख़ास वक़्तों पर और ख़ास तादाद में जप करने से उपास्य की प्रसन्नता हासिल होती है और आपसे आप स्वार्थ और परमार्थ दोनों की बख़्शिश मिलती है। इन लोगों के लिये मुक़र्ररा वक़्तों पर नाम का जप करना एक मज़हबी फ़र्ज़ है, जिसे वे मरते दम तक

अदा करते हैं और जिसके अदा करते वक़्त वे अपनी किसी ख़ास दुनियवी ज़रूरत को ध्यान में नहीं रखते। सन्तमत यानी राधास्वामीमत में बजाय वक़्त और तादाद की ख़ुसूसियत के ज़ोर पवित्रता व चित्त की स्थिरता पर दिया जाता है।

प्रार्थना का मतलब यह नहीं है कि "कोई चाहे सुने या न सुने हम कहते ही जायँगे" के उसूल पर काम करते हुए आँखें बन्द करके अपनी रामकहानी पेश कर दी जावे। प्रार्थना दिल से उठनी चाहिये और प्रार्थना करने वाले के दिल में अपने उपास्य के लिये सच्चा प्रेम भाव मौजूद होना चाहिये। कभी कभी अचानक मुसीबत आजाने पर लोग पुकार प्रार्थना करने लगते हैं। मसलन् कार्डिनल मर्शेर अपनी मशहूर व प्रसिद्ध चिट्ठी में तहरीर करते हैं—"बहुत से लोग, जिन्होंने मुद्दत से अदाए नमाज़ छोड़ दिया था, अब (गुज़श्ता जंग यूरोप के दर्मियान का ज़िक्र है) ख़ुदा की जानिब रुख़ करने लगे हैं। क्या फ़ौजों में, क्या सिविल मुहक्माजात में, क्या आम मजमुओं में और क्या लोगों के दिलों में जिधर देखो प्रार्थनाएँ निकल रही हैं और ऐसा नहीं है कि लोगों के मुँह में महज़ याद किये हुए चन्द कलमे सुनाई देते हैं बल्कि दुखिया दिलों से निकलती हुई दर्दभरी आवाज़ें सुनने में आती हैं। इस क़िस्म की प्रार्थनाएँ हरचन्द अपना फ़ायदा ज़रूर रखती हैं लेकिन प्रार्थना करने वालों को इस अमल का असली फ़ायदा नहीं दिला सकतीं। शेक्सपियर ने अपने मशहूर ड्रामा टेम्पेस्ट (Tempest) में एक जगह तूफ़ान आने का दृश्य पेश किया है। जब तूफ़ान ज़ोरों पर हो गया और जहाज़ ग़र्क़ होने लगा तो मल्लाहों को सब बातें भूल गईं और उनके मुँह

से यही अलफ़ाज निकले—"सब कुछ जाता रहा! प्रार्थना करो! प्रार्थना करो! सब कुछ जाता रहा!" ग़ौर का मुक़ाम है कि जिन लोगों ने सारी उम्र खेल कूद में गुज़ारी हो वे ऐसी घबराहट के वक़्त क्या प्रार्थना कर सकते हैं? इसी तरह हिन्दुस्तान में मन्दिरों में मूर्तियों के रूबरू और समाधों और क़ब्रों पर सिर रखकर हज़ारों हिन्दू व मुसलमान भाई व बहनें रो रोकर मुक़द्दमात में फ़तह और बीमारी से छूटने के लिये पुकार करते हैं। इस पुकार से इतना फ़ायदा ज़रूर होता है कि रोने वाले का ग़म हलका होजाता है लेकिन साथ ही ऐसे लोगों के दिलों में यह गड़ जाता है कि उनका उपास्य या क़ब्र व समाधि के अन्दर लेटा हुआ बुज़ुर्ग एक ऐसी ताक़तवर हस्ती है जो रोने व चिल्लाने पर उनकी मदद कर देती है और बक़ौल ल्यूथर "इस क़िस्म के ख़्यालात के लोग सिर्फ़ उसी वक़्त अपने इष्ट देवता की जानिब रुजू लाते हैं जब उनकी टाँगों या सिर में दर्द हो या उनकी जेब ख़ाली हो।" राधास्वामीमत की तालीम इस क़िस्म की स्वार्थसिद्धि के क़तई ख़िलाफ़ है। प्रेमीजन के हृदय में अपने भगवन्त के लिये सच्ची मोहब्बत होनी चाहिये और उसे हर्गिज़ दुनियवी ऐश व आराम के लिये प्रार्थना न करनी चाहिये और उसका भगवन्त सच्चा कुल मालिक होना चाहिये और उसे किसी देवी, देवता या पिछले ज़माने के बुज़ुर्ग से सरोकार नहीं रखना चाहिये। राधास्वामी दयाल फ़र्माते हैं कि प्रेमीजन को मुनासिब है कि मालिक से मालिक ही को माँगे। अलबत्ता जब कभी किसी के सिर पर ऐसी आफ़त आजाय जो बर्दाश्त न होसके तो उसके लिये इजाज़त है कि मुनासिब सहारे व बर्दाश्त के लिये प्रार्थना करे लेकिन अपनी मर्ज़ी के

मुवाफ़िक किसी नतीजे के हासिल करने के लिये हर्गिज़ अर्ज़ न करे। चौथी सदी सन् ईसवी के सेन्ट आगस्टायन ने अपनी एक प्रार्थना में लिखा है—"ए खुदा! तू मुझे अपनी ही बख़्शिश दे। उसके सिवा अगर मुझे सारी दुनिया भी दे दीगई तो मेरी तमन्ना हर्गिज़ पूरी न होगी।" ऐसे ही टामस ए केम्पस्, जो पन्द्रहवीं सदी में हुए हैं, कहते हैं:— "ए खुदा! अपने सिवा जो कुछ आप बख़्शिश फ़र्माते हैं वह सब नाकाफ़ी व नाक़ाबिले इतमीनान है।" सच है:—

'मज़हबे इश्क़ अज़ हमा दींहा जुदास्त।
आशिक़ाँ रा मज़हबो मिल्लत खुदास्त॥'

जो लोग इस क़िस्म की माँग माँगते हैं उनके चित्त को प्रार्थना करने पर बल्कि सच्चे मालिक का चिन्तवन करते ही कमाल दर्जे की शुद्धता हासिल होजाती है और उनका मन स्थिर होकर एक तरफ़ लग जाता है। यह हालत वाक़े होते ही उन्हें सिवाय पवित्र नाम के और सब बातें तुच्छ दरसने लगती हैं और प्रेमीजन नाम के सुमिरन में लीन होकर अमृतधार का रस पान करता है। ख़्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती फ़र्माते हैं:—

'रवद जानो दिलम रा जमाले नामे खुदा।
नवाज़द तिश्ना लबाँ रा ज़ुलाले नामे खुदा॥'

यानी नाम का अमृत ऐसा मीठा है कि नाम की धारा के रवाँ होने से प्यासों की प्यास फ़ौरन् रफ़ा होजाती है। यही वजह है कि राधास्वामीमत में ख़ास ज़ोर ऐसी हालत के पैदा करने पर दिया जाता है

कि जिससे प्रेमीजन के अन्तर में नाम की धारा रवाँ होजाय। इस हालत के थोड़ी ही देर बाद प्रेमीजन शब्दाभ्यास में लगने के क़ाबिल होजाता है और फिर "मालिक दे और बन्दा ले" वाली बात क़ायम होजाती है।

बचन (४५)

प्यार और मोहब्बत के बर्ताव से बेगाने भी अपने हो जाते हैं।

संसार में जितने भी भक्तिमार्ग जारी हैं उन सबमें शिक्षा दी जाती है कि इन्सान कमज़ोर व भूलनहार है, बार बार ग़लती करता है और बावजूद आगाह किये जाने व पक्का इरादा करने के भी नामुनासिब काम कर डालता है। मानो गुनाह करना इन्सान के स्वभाव ही में दाखिल है इस लिये अगर महज़ इन्सान की करनी करतूत पर भरोसा किया जावे तो उसके लिये जन्म मरण के चक्र से छुटकारा हासिल करना या सच्चे मालिक के हुज़ूर में दाख़िल होना क़तई नामुमकिन है। मगर जहाँ इन्सान के स्वभाव में कमज़ोरी व गुनाह का माद्दा दाखिल है वहाँ मालिक के जौहर के अन्दर बख़्शिश व दया का अङ्ग मौजूद है इसलिये कमज़ोर इन्सान का निर्वाह सहज में ही हो जाता है यानी मालिक की दया व मेहर इन्सान के शामिले हाल होकर उसकी सब कसरें पूरी कर देती है। उसके झुरने और पछताने पर जन्म जन्म के पाप और बार बार की ग़लतियाँ सहज में साफ़ हो जाती हैं। इस क़िस्म की तालीम पाकर भक्तजन के दिल में उम्मीद बँध जाती है कि उसके भगवन्त की बख़्शिश के वसीले से उसकी नाव भी एक दिन पार लग जायगी। इस तरह की उम्मीद दिल

में क़ायम होते ही भक्तजन का हृदय बार बार प्रेम व शुकराने के ख़्यालात से भर जाता है और मालिक की निस्बत दयालु, रहमान, ग़रीबनिवाज़, परमपिता वग़ैरह अलफ़ाज़ बार बार उसकी ज़बान पर आते हैं और उसकी हर एक हरकत व बात के अन्दर दीनता, प्रेम व श्रद्धा की झलक नमूदार होती है। लेकिन यह भी देखने में आता है कि इस क़िस्म की तालीम पाकर बहुत से अनसमझ बेलगाम जानवरों की सी ज़िन्दगी बसर करने लगते हैं। वे ख़्याल करते हैं कि जब कि ग़लतियाँ व क़सूर माफ़ी माँगने पर सहज में माफ़ हो जायँगे तो फिर डर किस बात का है? बजाय भगवन्त की प्रीति के अहंकार का और बजाय प्रेम व शुकराने के लापरवाई व बेहयाई का उनके दिलपर कब्ज़ा हो जाता है और उनके बोल चाल से निडरता, निर्लज्जता व ख़ुदी की बू आती है। ऐसे लोगों के दिल में न भगवन्त की कोई प्रतीति होती है और न ही जन्म मरण से छुटकारा हासिल करने या सच्चे मालिक के हुज़ूर में दाख़िल होने की कोई चाह रहती है इस लिये तअज्जुब नहीं कि उनकी रहनी गहनी देखकर अवाम के दिल में भक्तिमार्ग की तालीम के लिये नफ़रत के ख़्यालात पैदा हों। मगर वाज़ह हो कि बजाय इसके कि हम औरों के अन्दर इस क़िस्म के दोष तलाश करें या किसी भाई के अन्दर इस क़िस्म की कमज़ोरियाँ देख कर उसकी हँसी या निन्दा करके अपना दिल बहलाएँ, हमारे लिये मुनासिब है कि उलटकर अपने मन की हालत की निरख परख करें और ग़ौर करें आया ये सब दोष ख़ुद हमारे अन्दर तो मौजूद नहीं हैं। लेकिन मुश्किल यह है कि जैसे इन्सान को अपना चेहरा नज़र नहीं देता ऐसेही आम तौर पर लोगों को अपने ऐब भी नज़र नहीं आते और अगर दूसरा

शख़्स हमारे ऐब हमें बतलाता है तो हमें निहायत बुरा मालूम होता है और हम उसको ग़ुस्से व नफ़रत की निगाह से देखने लगते हैं इस लिये अपने मन की असली हालत की निरख परख करना हर इन्सान के बस की बात नहीं है। सच्चे प्रेमीजन ही दृष्टि उलटकर अपने मन के अवगुण देख सकते हैं। प्रेमीजनों की वाक़िफ़ियत के लिये हम एक सहज पहचान लिखते हैं जिससे आसानी से यह निश्चित हो सकता है आया हमारा मन इन दोषों से रहित है या नहीं। वह पहचान यह है कि हमें देखना चाहिये—आया माफ़ी माँगने पर हम अपने दोस्तों, आश्नाओं, रिश्तेदारों व नौकरों चाकरों के क़ुसूर ख़ुशी से माफ़ कर देते हैं या क्रोध व विरोध के भावों के अधीन होकर हम बार बार बदला लेने या सज़ा देने की ख़्वाहिश उठाते हैं। जो शख़्स अपनेतईं क़ुसूरवार और अपने भगवन्त को बख़्शनहार समझता है और अपने भगवन्त से माफ़ी व बख़्शिश की सच्ची उम्मीद बाँधता है वह क़ुदरती तौर पर अपने क़ुसूर-वारों को माफ़ करने के लिये मुस्तैद होगा क्योंकि उसको बख़ूबी मालूम है कि कमज़ोर इन्सान के लिये ख़ता करना एक मामूली बात है और बग़ैर बख़्शिश व रहम के किसी का भी गुज़ारा मुमकिन नहीं है।

वाज़ह हो कि महज़ ख़ुशनसीबों ही को दूसरों को सुख पहुँचाने का मौक़ा मिलता है और वे तो निहायत ही ख़ुशक़िस्मत हैं जिन्हें बदी के एवज़ नेकी करने का मुबारक मौक़ा मिलता है। जिन प्रेमीजनों को ज़िन्दगी में बदी के एवज़ नेकी करने का और अपने दुश्मनों को ज़रा सी दीनता करने पर माफ़ करके सच्चा मोहब्बताना सलूक करने का मौक़ा मिला है वही समझ सकते हैं कि ऐसा वर्ताव करने पर कैसी ग़ैरमामूली ख़ुशी

दिल को हासिल होती है। अगर दया से किसीको ऐसा मौक़ा मिले तो उसे हाथ से जाने न दे और ज़रूर आज़माकर देखे कि दूसरों के क़ुसूर माफ़ करने से क्या लुत्फ़ आता है।

इसमें शक नहीं कि जब कोई हमें नाहक़ दिक़ करता है या ख़्वाहमख़्वाह नुक़्सान पहुँचाता है तो हमें निहायत नागवार गुज़रता है और क़ुदरतन् हमारा दिल चाहता है कि विरोधी का मिज़ाज दुरुस्त करदें, और दुश्मन की मुनासिब दुरुस्ती करने के लिये अगर हमारी जानिब से सख़्ती का इज़हार हो तो वह नामुनासिब भी नहीं है। लेकिन चूँकि प्रेमीजन पर फ़र्ज़ है कि मनपर हरदम सवार रहे और मन के अङ्गों को कभी अपने ऊपर ग़ालिब न आने दे नहीं तो अन्तर में जो तार हुज़ूरी चरणों से लगा हुआ है वह टूट जायगा और बजाय पवित्र नाम की याद के दुश्मन के ख़राब अङ्गों का सुमिरन होने लगेगा। दुश्मन के साथ सख़्ती करते वक़्त हमें ख़्याल रखना होगा कि ज़रूरत से ज़्यादा सख़्ती अमल में न लाई जावे और जब हमारा दुश्मन अपनी ग़लती या क़ुसूर तसलीम करके ख़्वास्तगार मुआफ़ी या रहम का हो तो उस वक़्त किसी भी क़िस्म की सख़्ती का अमल में लाना हमारे लिये नामुनासिब होगा क्योंकि अब दुश्मन सीधी राह पर आगया है और किसी दुरुस्ती की ज़रूरत बाक़ी नहीं रही है। अगर ऐसी हालत में भी हम दुश्मन के साथ सख़्ती से बर्ताव करते हैं तो महज़ अपने मन की ग़ुलामी करते हैं और उस वक़्त मामूली दुनियादारों और हमारे में कोई फ़र्क़ नहीं है।

इसके सिवा याद रखना चाहिये कि दुश्मन के साथ सख़्ती करके हम सिर्फ़ उसे दिक़ कर सकते हैं और बेरहमी करके उसे ज़लील कर

सकते हैं लेकिन उसपर फ़तह हमें सिर्फ़ नर्मी व रहम करने ही से हासिल हो सकती है और इस तरह फ़तह किया हुआ दुश्मन अज़ीज़ से अज़ीज़ दोस्त से ज़्यादा मुफ़ीद साबित होता है। गोया, क्या बलिहाज़ परमार्थी नुक़्तए निगाह (आदर्श) के, क्या दुनियवी नफ़ा की मसलहत मद्दे नज़र रखने से, यही नतीजा निकलता है कि प्रेमीजन के लिये मुनासिब है कि मौक़ा आने पर नर्मी व रहमदिली के साथ बर्ताव करने से हर्गिज़ न चूकें।

बचन (४६)

सत्सङ्गी भाइयों के लिये एक ज़रूरी मश्वरा।

अपनी जमाअत की कमज़ोरियों से आगाह होकर मौक़ा मिलने पर उनके दूर करने के लिये कोशिश करना हर समझदार मेम्बर का ज़रूरी फ़र्ज़ है और अगर कोई शख़्स ऐसे मौक़े पर चश्मपोशी या सुस्ती व काहिली से काम लेता है तो वह अपना व नीज़ कुल जमाअत का नुक़सान करता है। हमें यह तसलीम करना होगा कि सत्सङ्गमण्डली के अन्दर अर्सा से भेद भाव की सूरत क़ायम है लेकिन हमें दृढ़ विश्वास है कि यह हालत ज़्यादा अर्से तक क़ायम न रहेगी। हुज़ूर राधास्वामी दयाल ज़रूर दया फ़र्माकर इस भिन्नता के ज़हरीले पौदे की जड़ काटने के लिये मुनासिब तजवीज़ व तदबीर अमल में लावेंगे और नीज़ उन प्रेमी भाइयों व बहनों की हर तरह व पूरी तौर से सहायता फ़र्मावेंगे जो सत्सङ्गमण्डली की इस मुबारक सेवा का बोझ अपने ज़िम्मे लेंगे।

वाज़ह हो कि इन्सान इस संसार के बाग़ीचे में मिस्ल एक पेड़ के है। इन्सान के गुण मिस्ल उस रस के हैं जो पेड़ के रग व रेशे के अन्दर हर वक़्त घूमता है और उसके शुभ कर्म बतौर उन फूलों व फलों के हैं जिनसे पेड़ की शोभा होती है और उसके दूसरे कर्म उन पत्तों और काँटों के समान हैं जो फूलों व फलों की हिफ़ाज़त करते हैं। नीज़ वाज़ह हो कि जो हाल एक इन्सान का है वही जमाअतों का है। जमाअतें आख़िर चन्द इन्सानों के मजमुए ही को कहते हैं। यह दुरुस्त है कि किसी फूल व फल देने वाले पौदे की पैदावार की हिफ़ाज़त के लिये एक हद तक पत्तों व काँटों का रहना मुफ़ीद व लाज़िमी है लेकिन अगर कहीं ऐसा हो कि वह पेड़ महज़ काँटों व पत्तों ही से लद जावे और फूल व फल उसके महज़ एक आध ही लगें या बिल्कुल न लगें तो वह पेड़ बाग़ीचे के अन्दर क़ायम रहने के लायक़ नहीं रहता। वह महज़ ईन्धन के तौर पर इस्तेमाल किये जाने के क़ाबिल हो जाता है। फूलों व फलों वाले बाग़ीचे में उसे कोई जगह न देगा और अगर किसी वजह से वह क़ायम भी रहा तो फूलों व फलों के किसी क़दरदान की तवज्जुह उसकी जानिब मुख़ातिब न होगी। अगर यह दुरुस्त है तो हर सत्सङ्गी भाई व बहन व नीज़ तमाम सत्सङ्गमण्डली यानी सत्सङ्गीजमाअत के ज़िम्मे फ़र्ज़ है कि निगहबानी इस बात की रक्खें कि वे कर्म, जो बमंज़िला काँटों व पत्तों के हैं, ऐसे हों कि जिनसे हमारे शुभ कर्मों की रक्षा या शोभा हो और अगर किसी वक़्त हममें से एक या ज़्यादा भाई इस क़िस्म के काम करने लगें कि जिससे फूलों व फलों के उगने में रुकावट पैदा हो तो हर किसी के लिये वाजिब है कि मुनासिब तदबीर अमल में लाकर इस बिगाड़ को

सूरत को दूर करे और हमारी खुशलियाक़ती इसी में होगी कि हम इस क़िस्म की तदबीरें अमल में लावें जिससे कोई पेड़ जड़ से उखाड़ना न पड़े बल्कि मामूली दवा इलाज से काँटों व पत्तों की तरक़्क़ी रुककर फूलों व फलों की पैदावार में इज़ाफ़ा हो और जिस पवित्र सेवा के सर-अंजाम देने के लिये सत्सङ्गमण्डली के पेड़ का संसार में जन्म हुआ है वह बआसानी खूबसूरती से बन आवे।

यहाँ पर यह तफ़सील के साथ बयान करने की ज़रूरत नहीं है कि वह पवित्र सेवा क्या है जिसकी निस्बत ऊपर इशारा किया गया। पेड़ की नज़ीर ध्यान में रखने से उसका बयान मुख़्तसिर अलफ़ाज़ में हो सकता है। जैसे पेड़ के नज़दीक आने वालों को उसके फूलों की खुशबू से ज़्यादा सुख मिलता है और जो पेड़ के पास आते हैं वे साया में बैठकर धूप की तपिश और बारिश वग़ैरह से अमान पाते हैं और जो पेड़ के साथ गहरा रिश्ता क़ायम करते हैं वे वक़्ते मुनासिब पर उसके मीठे फलों का रस लेते हैं। हुज़ूर राधास्वामी दयाल ने सत्सङ्गमण्डली का पेड़ कम व बेश इसी क़िस्म के फ़ायदे के लिये संसार में क़ायम किया है यानी जो लोग सत्सङ्ग की किसी क़दर नज़दीकी में आवें उनके दिल को शान्ति और दिमाग़ को तरावत सत्सङ्ग की पवित्र तालीम और सत्सङ्गियों की पवित्र रहनी गहनी के असर से हासिल हो और जो लोग सत्सङ्ग के ज़ेरेसाया आने की तकलीफ़ गवारा करें उन्हें काल, कर्म व मन, इन्द्रियों के उत्पात से अमान मिले और जो सत्सङ्ग के साथ गहरा रिश्ता क़ायम करें वे हुज़ूर राधास्वामी दयाल के चरणों की भक्ति, आत्मदर्शन व सच्चे मालिक के दरबार का लुत्फ़ उठावें।

ज़ाहिर है कि इस क़िस्म की सेवा बआसानी व बखूबी तभी अंजाम पा सकती है जबकि आम तौर पर सत्सङ्गी भाइयों व बहनों की रहनी गहनी सन्तमत की तालीम के मुताबिक़ हो। मन कमबख़्त का स्वभाव है कि थोड़ी सी बड़ाई पाकर या थोड़ा सा निरादर होने पर एक दम नीचता के गढ़े में गिर जाता है और फिर विकारी अङ्ग निहायत ज़ोर व शोर के साथ अपना इज़हार करने लगते हैं। मन की इस हालत से क्या इन्सान क्या जमाअतों को सख़्त नुक़सान पहुँचता है।

वचन (४७)

मज़हबों का बिगाड़ कैसे होता है।

इस ज़माने में चूँकि हर शख़्स को ज़मीर व ख़्यालात के लिये पूरी आज़ादी हासिल है इसलिये देखने में आता है कि हर मुल्क के अन्दर तालीमयाफ़्ता लोग अपने बुज़ुर्गों की क़ायम की हुई संस्थाओं और पुराने ज़माने से नस्लन् बाद नस्लन् चली आती हुई बातों पर बरमला नुक्ताचीनी कर रहे हैं। चुनाँचे मज़हब यानी परमार्थ के मज़मून के मुतअल्लिक़ भी, जो पिछले दिनों निहायत मुतबर्रिक ख़्याल किया जाता था और जिसके मुतअल्लिक़ बातचीत करने का हक़ महज़ पण्डितों, मौलवियों, पादरियों या इसी क़िस्म के और चुने हुए लोगों को हासिल था, खुल्लमखुल्ला रायज़नी हो रही है और मजबूरन् तसलीम करना पड़ता है कि इन दिनों पुराने ज़माने के बुज़ुर्गों व महात्माओं के कलाम के लिये पहले की सी ताज़ीम नहीं रही। ज़मीर व ख़्यालात के मुतअल्लिक़ आज़ादी

का प्रचार तो कोई बुरी बात नहीं बल्कि इन्सान को इन्सान बनाने के लिये निहायत ज़रूरी है मगर आज़ादख़्याली के ये मानी न होने चाहियें कि जिसके मुँह जो आये कह दे । बहुत सी बातें हैं जिनपर सरसरी नज़र डालने से एक राय क़ायम होती है लेकिन गहरा गोता मारने पर राय बिल्कुल मुख़्तलिफ़ हो जाती है । इसलिये बुज़ुर्गों की संस्थाओं व शिक्षा के मुतअल्लिक़ रायज़नी का हक़ महज़ ऐसे लोगों को हासिल होना चाहिये जिनके अन्दर मादा व क़ाबिलियत बुज़ुर्गों के नुक़्तए निगाह को समझने और उनके ख़्यालात की बुलन्दी तक पहुँचने की मौजूद हो। मगर अफ़सोस है कि सस्ती छपाई व बेदाम आम तक़रारी मैदानों की वजह से हर शख़्स बुज़ुर्गों की तालीम का बिलातकल्लुफ़ मज़हका उड़ाता है और नाहक़ मज़हब यानी सच्चे परमार्थ का नाम बदनाम करता है ।

एतराज़ करने वालों का सबसे बड़ा हम्ला किसी मज़हब के बाज़ मोअज़्ज़िज़ अनुयायियों की बदएतदालियों व अनुचित कारवाइयों पर होता है यानी वे कहते हैं कि जबकि फ़ुलाँ मज़हब के फ़ुलाँ फ़ुलाँ प्रतिष्ठित अनुयायी फ़ुलाँ फ़ुलाँ अनुचित काम करते हैं तो मामूली दर्जे के इन्सानों से क्या उम्मीद की जा सकती है और जबकि फ़ुलाँ बादशाह या बुज़ुर्ग ने, जो फ़ुलाँ मज़हब के परले दर्जे के पक्षपाती व प्रेमी थे मज़हब के नाम पर फ़ुलाँ फ़ुलाँ ज़लील व घृणित बातें रवा रक्खीं तो क्यों न यह नतीजा निकाला जावे कि मज़हबी तालीम के गहरे असर ही ने उनको ऐसा स्याहदिल व कठोर बनाया । एक एतराज करने वाला ज़ोर के साथ कहता है—ऐ मज़हब ! कौनसा ऐसा पाप कर्म है जो तेरे नाम पर नहीं किया गया ? दूसरा हठ के साथ कहता है कि मज़हब की

मुहब्बत ही ने हिन्दुस्तानियों को दीवाना बना रक्खा है। अगर मुल्के हिन्दुस्तान से आज मज़हब खारिज कर दिया जाय तो हिन्दू मुसलमानों के झगड़े, सिक्खों व उदासियों की लड़ाइयाँ, आर्यों व सनातन-धर्मियों के तनाज़े सब के सब ग़ायब हो जायँ और हिन्दुस्तानी एक दूसरे को भाई समझने लगें और आपस में बजाय लड़ने के मिलकर तरक़्क़ी के मैदान में क़दम रक्खें, वग़ैरह वग़ैरह ।

यह दुरुस्त है कि ये एतराज़ एक हद तक बजा हैं लेकिन साथ ही यह भी दुरुस्त है कि ये सब काररवाइयाँ, जिनकी बुनियाद पर मज़हब के खिलाफ़ लबकुशाई की जाती है, किसी भी महापुरुष की मज़हबी तालीम या शिक्षा का नतीजा नहीं है बल्कि उनके लिये ज़िम्मेवार उन लोगों की मूर्खता, खुदग़रज़ी या मनमुखता है जो इस क़िस्म की काररवाइयाँ करते हैं। मतलब प्रकट करने के लिये व नीज़ इस बयान के सुबूत में नीचे मुफ़स्सिल बहस की जाती है:—

इन्सान जब कोई नई ईजाद करता है तो क़ायदा है कि उसकी मार्फ़त कुदरत के किसी पोशीदा या आला क़ानून को इस्तेमाल में लाकर किसी ग़ैरमामूली या मुश्किल मगर मुफ़ीद नतीजे को बआसानी हासिल करके दिखलाता है। चुनाँचे रेल, तार, मोटर व हवाई जहाज़ वग़ैरह का, जो ज़मानए हाल की ईजादें हैं, ज़हूर इसी उसूल पर हुआ है। इन्सान के दिल में क़िस्म क़िस्म की ख़्वाहिशात उठती हैं और उनके पूरा करने के लिये दुनियवी सामान दरकार होते हैं और मेहनत मुशक़्क़त करनी पड़ती है लेकिन मुश्किल यह है कि न तो हर किसी को हर एक दुनियवी सामान बआसानी मुयस्सर हो सकता है और न ही हर किसी से मेहनत

मुशक्क़त बआशानी बन पड़ती है इसलिये ज़रूरतमन्द इन्सान अपनी मुश्किलें हल करने के लिये क़िस्म क़िस्म की ईजादें करते हैं और दूसरे इन्सान नक़द दाम देकर या खिदमत बजा लाकर खुद उन ईजादों से फ़ायदा उठाते हैं और नीज़ दूसरों को फ़ायदा उठाने का मौक़ा देते हैं। वाज़ह हो कि मुख़्तलिफ़ मज़ाहिब की तह में भी, जो मुख़्तलिफ़ वक़्तों पर मुख़्तलिफ़ बुज़ुर्गों की मार्फ़त प्रकट हुए, कम व बेश यही उसूल काम करते नज़र आते हैं। इन्सान को दुनिया के दुखों ने दबा रक्खा है, उसे प्यास सुख की है लेकिन प्याले दुखों के मिलते हैं। संस्कारी या कलाधारी आत्माएँ, जो इन्सान की मदद के लिये वक़्तन् फ़वक़्तन् जन्म लेती हैं, दुख से मुक्ति और सुख की प्राप्ति का आसान तरीक़ा दर्याफ़्त करके अवाम को दावत देती हैं। कुछ लोग सच्चे शौक़ से उनकी जानिब मुख़ातिब होते हैं और कुछ अर्सा के अन्दर सच्ची शान्ति व आला सुख का तजरुबा हासिल करके अपना भाग्य सराहते हैं और जिस बुज़ुर्ग की मार्फ़त उन्हें यह लाभ प्राप्त हुआ उनकी दिल व जान से खिदमत बजा लाते हैं। रफ़्ता रफ़्ता इसकी शोहरत हो जाती है और सैकड़ों हाजतमन्द रोज़ाना उस बुज़ुर्ग के दरवाज़े पर हाज़िर होते हैं। चूँकि उस बुज़ुर्ग को सचमुच क़ुदरत के किसी आला क़ानून का इस्तेमाल आता है और वह बखुशी हरएक तलबगार को अपनी युक्ति यानी अपना अमल बतला देता है और हर अमल करने वाले को इच्छानुसार कामयाबी हासिल हो जाती है इसलिये जल्द ही उस बुज़ुर्ग की तालीम एक नये मज़हब की शक्ल इख़्तियार कर लेती है और सच्चे भक्तों व सेवकों की एक बाक़ायदा जमाअत क़ायम होकर ज़ोर व शोर से आम बख़्शिश का सिल्सिला जारी

हो जाता है। सच्ची परमार्थी तालीम का अव्वल असर, जो भक्त जनों पर पड़ता है, यह है कि उनके दिल से दुनिया के सुखों व भोगविलास की बड़ाई उठ जाती है और दुनियवी तकलीफ़ात के लिये वे बहुत कुछ लापरवाई ज़ाहिर करने लगते हैं और जिस बुज़ुर्ग की बरकत से उन्हें दुनियवी दुखों व सुखों की ज़ंजीरें तोड़ डालने की ताक़त हासिल हुई है उसके क़दमों में गहरी मोहब्बत व ग़रज़मन्दी पैदा हो जाती है। गहरी मोहब्बत के इज़हार में श्रद्धालु लोग वक़्तन् फ़वक़्तन् तोहफ़े व नज़राने पेश करते हैं और इनाम में गहरी परमार्थी बख़्शिश हासिल करते हैं। चूँकि वे बुज़ुर्ग, जो इस रूहानी फ़ैज़ का सिलसिला क़ायम फ़र्माते हैं, अपने मन पर सवार रहते हैं और उनका दिल दुनियवी ख़्वाहिशात से पाक व साफ़ रहता है इसलिये तलबगारों की भीड़ या दौलत व इज़्ज़त की कसरत उनका व उनके निकटवर्तियों का कुछ हर्ज व नुक़सान नहीं कर सकते। लेकिन चूँकि कोई भी इन्सान हमेशा ज़िन्दा नहीं रह सकता इसलिये वक़्त मुनासिब पर वे बुज़ुर्ग दुनिया से कूच कर जाते हैं। उनके बाद अगर लायक़ व क़ाबिल जानशीन मौजूद नहीं हैं तो सबका सब कारख़ाना थोड़े ही अर्से में उलट जाता है और वे सब बातें, जिनसे दुनिया तंग आरही है और जिनसे मज़हब का नाम बदनाम होरहा है, ज़हूर में आती हैं।

बचन (४८)

सन्तमत में शरीक होने के लिये अन्तर में तब्दीली की ज़रूरत है।

सन्तमत यह बतलाता है कि रचना में तफ़रीक़ का इज़हार चेतन-शक्ति के दर्जों की तफ़रीक़ की वजह से हुआ। दूसरे लफ़्ज़ों में, सृष्टि के अन्दर जो तरह तरह की सूरतें व चीज़ें देखने में आती हैं वे दरअसल चेतनशक्ति का मुख़्तलिफ़ दर्जों में इज़हार हैं। इससे मालूम होता है कि जीवधारियों, वनस्पतियों व धातु, पत्थर आदि की रचना के अन्दर ख़ास फ़र्क़ चेतनशक्ति के इज़हार ही का है यानी हैवानों में आला दर्जे का, वनस्पतियों में दर्मियाना दर्जे का, और धातु, पत्थर आदि में अदना दर्जे का इज़हार हो रहा है। इसी वजह से इन सबके स्वभाव व गुणों में भेद नज़र आता है और यही वजह है कि हरचन्द हैवानों व वनस्पतियों के अन्दर एक ही चेतन जौहर यानी सुरत मौजूद है लेकिन दोनों की आदतों, सूरत, शक्ल व रहनी में प्रकट फ़र्क़ है। अगर यह ख़्याल दुरुस्त है तो यह नतीजा निकालना ग़लत न होगा कि मुख़्तलिफ़ इन्सानों की आदतों व स्वभावों में जो फ़र्क़ देखने में आता है उसका बाइस भी वही चेतनशक्ति का मुख़्तलिफ़ दर्जे का इज़हार है। सुरत यानी रूह मन व शरीर के ग़िलाफ़ों के अन्दर लिपटी हुई अपने निज स्वभावों का इज़हार करती है और मन व शरीर के गिलाफ़ एक तरफ़ तो सुरत के स्वभावों के इज़हार का ज़रिया या पर्दा बनते हैं और दूसरी तरफ़ उसके स्वभावों के इज़हार में रुकावट डालते हैं। जैसे अगर

कोई रोशन लैम्प कम्बल से ढाँक दिया जाय तो एक तरफ़ तो कम्बल लैम्प की रोशनी के इज़हार का ज़रिया बनता है यानी लैम्प की रोशनी कम्बल के सूराखों की मारफ़त बाहर कमरे में फैलती है (अगर कम्बल की बनावट इस क़िस्म की हो कि उसमें कोई सूराख़ न रहे तो कम्बल के बाहर रोशनी का इज़हार क़तई नहीं हो सकता) दूसरी तरफ़ कम्बल लैम्प की रोशनी के इज़हार में रुकावट डालता है क्योंकि रोशनी कम्बल के सूराखों से सिर्फ़ छनकर बाहर निकलती है और पूरे तौर पर अपना इज़हार नहीं करने पाती। अगर यह भी ख़्याल दुरुस्त है तो क़रार पाता है कि महज़ लेक्चरों व उपदेशों के सुनने या सभ्यता व आचरण व रहनी गहनी के मुतअल्लिक़ बुज़ुर्गों के कलाम का मुताला करने से किसी इन्सान की आदतों व स्वभावों में प्रकट फ़र्क़ पैदा नहीं हो सकता। प्रकट फ़र्क़ तभी पैदा हो जब उसके शरीर व मन की बनावट में ऐसी तब्दीली होजाय कि उसकी रूह उनकी मार्फ़त बमुक़ाबिला पहले के अपना इज़हार बेहतर कर सके। यही वजह है कि हज़ारों लाखों इन्सान, जो ज़ाहिरन् निहायत सभ्य व तालीमयाफ़्ता हैं और ज़बान से निहायत आला दर्जे के ख़्यालात बयान करते हैं, बलिहाज़ अमल (कर्म) के महज़ पशु हैं। इन बेचारों को यह इल्म ही नहीं है कि दुनिया के अन्दर दूसरे जानदारों के लिये हमदर्दी, सच्चे मालिक के लिये प्रेम व प्रतीति व रूहानी शक्तियों के जगाने के लिये साधन भी ऐसी नेमतें हैं कि जिनकी बरकत से रफ़्ता रफ़्ता जीव मनुष्य से देवगति व हंसगति व सच्ची मुक्ति को प्राप्त होजाता है। इन ग़रीबों को महज़ तन व मन के पालने से काम है और जैसे जानवर ख़ुद अपने मालिक के खेत में घुसकर

'जो दिल व जान से उनकी पर्वरिश व हिफ़ाज़त करता है' महज़ अपने पेट भरने की सोचते हैं और अपने मालिक के नफ़ा नुक़्सान के मुतअल्लिक़ ख़्याल उठाने में असमर्थ हैं ऐसे ही ये इन्सान भी अपने तन व मन के आराम व आसायश के सिवाय दूसरे ख़्याल उठाने में मजबूर हैं और मुश्किल यह है कि दुनिया की आबादी में इस दर्जे के इन्सानों की अधिकता है। यही वजह है कि मुख़्तलिफ़ वक़्तों पर मुख़्तलिफ़ महापुरुषों ने नरशरीर धारण करके यह कोशिश की कि लोगों को आला ज़िन्दगी व चेतन आनन्द व ज्ञान की महिमा व उत्तमता जतलाकर उन साधनों की कमाई की तरफ़ मायल (आकृष्ट) करें जिनके ज़रिये उनके जिस्म व मन के अन्दर मुनासिब तब्दीली वाक़े हो और वह जीते जी आला ज़िन्दगी के लुत्फ़ का कुछ तजरुबा हासिल कर सकें। लेकिन महज़ इने गिने लोगों को उनका उपदेश पसन्द आया और जब वे बुज़ुर्ग अपना काम करके वापिस होगये तो आम लोगों ने इन थोड़ों को पाँव तले रौंदकर पशुवत् भावों व संसार के भोग विलास की महिमा इस ज़ोर व शोर से ज़ाहिर की कि रूहानी ज़िन्दगी के प्रेमी व तलबगार या तो ख़ामोश होगये या आम लोगों के ख़्यालात के अनुयायी बनकर अपने आदर्श से गिर गये। इसलिये कोई तअज्जुब नहीं है कि आजकल हरचन्द लाखों बल्कि करोड़ों आदमी अपनेतई ऐसे बुज़ुर्गों व महापुरुषों का अनुयायी बतलाते हैं कि जिन्होंने महज़ रूहानी ज़िन्दगी की तालीम का प्रचार करने व इन्सान को हैवानियत के दर्जे से उठाकर उच्च गति दिलाने के लिये जन्म धारण फ़र्माया था लेकिन उनमें से न कोई रूहानी साधन की तरफ़ तवज्जुह देता है और न किसी को रूहानी ज़िन्दगी व सच्चे मालिक

के लिये सच्ची मोहब्बत व विश्वास है। ऐसी सूरत में अन्दाज़ा किया जा सकता है कि सच्चे परमार्थ की तालीम और अन्तरी साधनों की कमाई के लिये अवाम के दिलों में शौक़ पैदा कराना कैसा मुश्किल काम है और सत्सङ्गी भाइयों का यह ख़्वाहिश उठाना कि हुज़ूर राधास्वामी दयाल का सन्देश जल्द से जल्द अवाम के दिल में उतार दिया जाय कहाँ तक जायज़ व दुरुस्त है? सच पूछो तो यह कठिन काम महज़ इन्सानी कोशिश से अञ्जाम पाना क़तई नामुमकिन है। अगर सत्सङ्गी भाई अपनी कोशिश से खुद अपने को सन्तमत के आदर्शों पर क़ायम रख सकें तो भी ग़नीमत है। अवाम की तवज्जुह संसार के भोग बिलास की जानिब से यकदम हटकर रूहानी ज़िन्दगी या आध्यात्मिक आनन्द की ओर आकृष्ट होना सिर्फ़ सच्चे मालिक की दया व मेहर ही से मुमकिन है।

यह दुरुस्त है कि अपने भाइयों को नाहक़ मुश्किलों में फँसा और सच्चाई के रास्ते से गुमराह देखकर हर प्रेमीजन को तरस आता है लेकिन बहुत से बीमारों व ग़रीबों व कँगलों को मुसीबतों में गिरफ़्तार देखकर भी तो रहम आता है। उस सूरत में इन्सान सिवाय इसके कि दुखिया लोगों को हस्बेहैसियत आराम पहुँचावे और क्या कर सकता है। इसी तरह पहली सूरत में भी मुनासिब है कि हस्बेक़ाबिलियत अपने भाइयों को परमार्थी समझौती से सहायता की जावे और वक़्तन् फ़वक़्तन् हुज़ूर राधास्वामी दयाल के चरणों में वास्ते दया व बख़्शिश के अन्तरी प्रार्थना पेश करके मुआमला मौज पर छोड़ दिया जावे क्योंकि आख़िर सभी जीव उस मालिक दयाल के बच्चे हैं और अपने बच्चों की उससे ज़्यादा कौन फ़िक्र कर सकता है? असल तो यह है कि रफ़्ता रफ़्ता

सभी जीव तरक़्क़ी के रास्ते पर क़दम बढ़ा रहे हैं। कोई आगे है कोई पीछे है और यह अपने अपने संस्कारों का हिसाब है। इन्सानी कोशिश से संस्कारों में यकदम तब्दीली होजाना अनुमान से बाहर है। इसके लिये वक़्त दरकार है यानी यह तब्दीली आहिस्ता आहिस्ता ही होगी।

बचन (४९)

जिज्ञासुओं की दो कठिनाइयाँ ।

बहुत से ऐसे असहाब हैं जो राधास्वामीमत में शरीक नहीं है लेकिन उनके दिल में सन्तवचन व नीज़ हुज़ूर राधास्वामी दयाल की तालीम के लिये कमाल इज़्ज़त व प्रेम मौजूद है। दर्याफ़्त करने से मालूम हुआ कि ये प्रेमीजन ऐसी कठिनाइयों में फँसे हैं जो बआसानी दूर हो सकती थीं लेकिन चूँकि उन्हें कोई समझाने वाला न मिला इस लिये वे हुज़ूर राधास्वामी दयाल की तालीम के लाभ से महरूम रहे। यहाँ पर उनकी कठिनाइयों के मुतअल्लिक़ मुनासिब मश्वरा दिया जाता है:—

अव्वल मुश्किल यह है कि लोग साधन की युक्तियाँ सीखकर अमल करने के लिये तो दिल से ख़्वाहिशमन्द हैं लेकिन वे किसी ख़ास फ़िर्क़ों में शरीक होना या किसी फ़िर्क़े के अनुयायी कहलाना पसन्द नहीं करते यानी वे चाहते हैं कि उन्हें साधन की युक्तियाँ इस तरीक़े से बतला दी जावें कि उन्हें राधास्वामीसत्सङ्ग में शरीक होना या राधास्वामीमत का अनुयायी कहलाना न पड़े। ज़ाहिरा वजह इस ख़्वाहिश की यह

मालूम होती है कि चूँकि पैरवान् राधास्वामीमत की तादाद अभी कम है और मूर्ख व स्वार्थी लोगों ने राधास्वामीमत की निस्बत अनाप शनाप बातें मशहूर करके किसी क़दर बदनामी की सूरत पैदा कर रक्खी है इसलिये उनका दिल ख़्वाहमख़्वाह की पूछ पाछ में पड़ने से परहेज़ करता है। मगर वाज़ह हो कि अगर गुप्ततौर पर अभ्यास की युक्तियाँ बतलाकर उनकी यह ख़्वाहिश पूरी भी कर दी जावे तो भी उनका आयन्दा गुज़ारा होना मुमकिन नहीं है। साधन शुरू करने पर उन्हें रास्ते में बार बार अन्तरी मुश्किलें पेश आवेंगी जिनके पार करने के लिये उन्हें बार बार मश्वरा लेना होगा और मश्वरा लेने की खातिर उन्हें लाज़िमी तौर पर सत्सङ्ग के साथ गहरा रिश्ता रखना होगा। अगर सूरत यह होती कि एक बार अभ्यास की युक्तियाँ समझ लेने से आयन्दा काम खुद बखुद चलता रहता तो अलबत्ता उनका बआसानी गुज़ारा मुमकिन था लेकिन दिक़्क़त यह है कि सूरत ख़िलाफ़ वाक़ै हुई है। मगर हम सवाल करते हैं कि अगर कोई वाक़ई सचा जिज्ञासु है और उसे सन्मार्ग पर चलकर अपनी रूहानी शक्तियों के जगाने और अपने परम पिता सच्चे कुल मालिक के दर्शन करने की सच्ची अभिलाषा है और बिला किसी क़िस्म के दबाव या लोभ लालच के ख़्यालात दर्मियान में आये उसका दिल गवाही देता है कि हुज़ूर राधास्वामी दयाल की पवित्र तालीम से लाभ उठाने पर उसकी दिली अभिलाषा पूरी हो सकती है तो क्या ऐसे पवित्र कार्य के सरअञ्जाम देने या ऐसे भारी नफ़े का सौदा करने के लिये उसे मूर्खों की निन्दा के ख़्याल को बालाए ताक़ न रख देना चाहिये?

इसके सिवा ग़ौर करना चाहिये कि दुनिया में मज़हबी फ़िर्क़े क्योंकर क़ायम होते हैं। जब कभी कुल मालिक की दया होती है तो निर्मलचित्त सुरतें संसार में ऋषि, साध, सन्त व महात्मा रूप में प्रकट होती हैं और दुखिया व परमार्थ के शौक़ीन जीवों को सदुपदेश सुनाकर तसल्ली देती हैं और रास्ता व युक्ति संसारसागर से पार होकर ऊँचे सुख-स्थानों व निर्मल चेतन देश में पहुँचने की बतलाती हैं। दुनियादार उनके बचन सुनकर हँसी व दिल्लगी करते हैं लेकिन कुछ संस्कारी जीव उनके उपदेश से मुतासिर (प्रभावित) होकर उनके चरणों में लग जाते हैं। ये संस्कारी जीव आज्ञानुसार उनके साधन करते हैं और थोड़े ही दिनों के अन्दर अपने अन्तर में लाकलाम सुबूत उपदेश की सच्चाई की निस्बत पाकर गहरी उमङ्ग व उत्साह के साथ उनकी सेवा में लीन होते हैं और अपने अज़ीज़ों व रिश्तेदारों व दोस्तों से, जिस बुज़ुर्ग की बदौलत उन्हें ये ग़ैरमामूली तजरुबात हासिल हुए हैं, उनकी महिमा व तारीफ़ करते हैं जिससे उनके गिर्द रफ़्ता रफ़्ता श्रद्धालुओं का एक बड़ा हल्क़ा क़ायम हो जाता है और एक एक करके सैकड़ों, हज़ारों जीव उस बुज़ुर्ग के चरणों में लग जाते हैं और एक फ़िर्क़ा खड़ा हो जाता है। यह फ़िर्क़ा क्या है? यह फ़िर्क़ा दरअसल एक ऐसी जमाअत है जिसका मरकज़ (केन्द्र) एक ऐसी पाक हस्ती पवित्र व्यक्ति है। जो दुनियवी ख़्वाहिशात व गन्दगियों से पाक है, जिसकी रूहानी कुव्वतें जगी हैं और जिसका अन्तर में ब्रह्म, परब्रह्म, सत्यपुरुष या कुल मालिक से मेल है और जिसके मेम्बर ऐसी मुबारिक हस्तियाँ हैं जो दुनिया से मुँह मोड़कर अपनी रूहानी शक्तियों के जगाने व सच्चे मालिक के दर्शन प्राप्त करने के दरपै

हैं और जिन्हों ने साधन की युक्तियों की किसी क़दर कमाई करके लाकलाम अन्तरी सुबूत उस उपदेश की सचाई की निस्बत हासिल कर लिये हैं जो उनकी जमाअत की मरकज़ी हस्ती (केन्द्रिक व्यक्ति) ने बयान फ़र्माये और जिसका ज़िक्र सभी मज़हबों के बुज़ुर्गों ने अपनी पवित्र पुस्तकों में दर्ज फ़र्माया है। यह अमर बयान का मोहताज नहीं है कि उस मरकज़ी हस्ती की हरगिज़ यह ख़्वाहिश न थी कि कोई ख़ास फ़िर्क़ा क़ायम किया जावे और न ही इस सिल्सिले में किसी शख़्स ने कोई ख़ास कोशिश या यत्न किया। लेकिन चूँकि उनका उपदेश दुनियादारों की बातों से निराला था जो संस्कारी प्रेमियों को पसन्द आया और आम लोग उसकी क़द्र व क़ीमत जानने में लाचार रहे इसलिये संस्कारी प्रेमी आप से आप अवाम से अलहदा होकर इस मरकज़ी हस्ती के गिर्द जमा हो गये और आप से आप ख़ास ख़्यालात वाले लोगों का एक गिरोह या फ़िर्क़ा क़ायम हो गया। ऐसी सूरत में ज़ाहिर है कि इस फ़िर्क़े की क़ायमी की निस्बत किसी क़िस्म के एतराज़ दिल में उठाना क़तई नावाजिब है। कुल दुनिया इस क़ाबिल नहीं हो सकती कि किसी महापुरुष के उपदेश यकायकी ग्रहण करले। ऐसे लोगों की तादाद शुरू में व नीज़ एक अर्से तक लाज़िमी तौर पर थोड़ी ही रहेगी और ये बेचारे "अलहदा फ़िर्क़े" के नाम से नामज़द होते रहेंगे और हर शौक़ीन मुतलाशी को अपनी परमार्थी प्यास बुझाने के लिये इसी 'फ़िर्क़े' के अन्दर शामिल होना ही पड़ेगा। अलबत्ता यह ज़रूर है कि जब किसी ऐसे फ़िर्क़े के अन्दर से मरकज़ी हस्ती ग़ायब हो जाय और उसमें कोई शख़्स अन्तरी साधन जानने वाला न रहे तो अपना फ़िर्क़ा छोड़कर

उस फ़िर्क़े के अन्दर शामिल होना क़तई लाहासिल व नामुनासिब है। अब हम मुतलाशियों की दूसरी कठिनाई का ज़िक्र करते हैं:—

दूसरी कठिनाई यह है कि आम तौर पर यह मशहूर है कि एक गुरु छोड़कर दूसरा गुरु धारण करना पाप है। मसलन् कहा जाता है कि सिक्ख गुरुओं का वाक्य है कि "एक छोड़ दूजा गहे, डूबे से बंजारिया" इसलिये सिक्ख गुरू साहिबान् या दूसरे पैरवों की टेक रखते हुए वे कैसे राधास्वामी दयाल की शरण में आवें। यह कठिनाई भी अनसमझता की बुनियाद पर क़ायम है। इसमें शक नहीं कि जब किसी को एक सच्चे गुरु मिल गये तो उसके लिये मुनासिब है कि अपनी तवज्जुह चारों तरफ़ से हटाकर उनकी आज्ञा का पालन करे और जो साधन की युक्तियाँ वे बतलावें पूरा भरोसा रखकर उनकी कमाई करे। लेकिन अगर किसी को महज़ अधूरे गुरू मिले हों यानी उसने ऐसे शख़्स की शरण इख़्तियार की हो जिसका सच्चे मालिक से मेल नहीं है या अगर किसी को पूरे गुरु मिले हों लेकिन अब मौजूद न हों और उसका अभी काम पूरा न हुआ हो तो इन दोनों सूरतों में शौक़ीन परमार्थी के लिये मुनासिब है कि पूरे व ज़िन्दा गुरु की तलाश करे और मिल जाने पर उनके चरणों में पूरी श्रद्धा व प्रतीति लावे। वाज़ह हो कि गुरुपदवी सिर्फ़ उन महापुरुषों की है जिन्होंने सच्चे मालिक से वस्ल हासिल किया है और जो मालिक के दर्शन के तलबगार जीवों को रास्ता दिखलाने ही की ग़रज़ से संसार में रहते हैं। ऐसे महापुरुषों की शरण रस्म की अदायगी के तौर पर इख़्तियार नहीं की जाती बल्कि मन्शा यह रहती है कि उनसे हिदायत व मदद पाकर शौक़ीन परमार्थी जीते जी मञ्ज़िले मक़सूद पर पहुँचे यानी

खुद उनकी सी गति हासिल करे। अगर किसी ने अधूरे गुरू की शरण हासिल की तो न तो वह गुरू कहलाने का अधिकारी है और न उसको गुरू का दर्जा हासिल है इसलिये ऐसे शख़्स की शरण लेना गुरु की शरण लेना नहीं समझा जा सकता और ऐसी सूरत में परमार्थी के लिये पूरी इजाज़त है कि पूरे व सच्चे गुरु के मिल जाने पर उनकी शरण इख़्तियार करे। इसी तरह एक गुरू के शरीर त्यागने पर (अगर उस वक़्त तक उसका काम पूरा नहीं बना है) शौक़ीन परमार्थी को पूरी इजाज़त है कि दूसरे ज़िन्दा गुरू की नये सिरे से तलाश करे। पूरे गुरू सब एक ही होते हैं उनमें सिर्फ़ देहस्वरूप का फ़र्क़ रहता है। रूहानी जौहर व गति उनकी एक ही होती है इसलिये एक पूरे गुरू के गुप्त होजाने पर दूसरे पूरे गुरू की शरण लेना नाममात्र के लिये दूसरे गुरू की शरण लेना है। क्योंकि अन्तरी चेतन्य यानी रूहानी संयोग एक ही रहता है। इसलिये इस सूरत में भी "एक छोड़ दूजा गहे" वाला एतराज़ शौक़ीन परमार्थी पर आयद नहीं होता।

मुतलाशियों को मालूम हो कि अगर श्रीग्रन्थ साहब के ऊपर लिखे वाक्य के वे मानी होते जो आम लोग लगाते हैं तो खुद सिक्ख गुरू साहिबान् के ज़माने में इसके खिलाफ़ अमल न होता। तवारीख़ बतलाती है कि गुरू नानक साहब के गुप्त हो जाने पर सिवाय चन्द टेकियों के आम सङ्गत गुरू अंगद साहब के, और गुरू अंगद साहब के गुप्त होने पर गुरू अमरदास साहब के, और इसी तरह आयन्दा गुरुओं के चरणों में विश्वास लाती गई और उस वक़्त किसी को यह ख़्याल न आया कि गुरू नानक, गुरू अंगद व गुरू अमरदास साहब वग़ैरह मुख़्तलिफ़ हस्तियाँ हैं बल्कि

हर समझदार सिक्ख का यही विश्वास रहा और अब भी लाखों समझदार सिक्ख भाई यही एतक़ाद रखते हैं कि सब गुरू साहिबान् के अन्दर एक ही ज्योति या कला कारकुन थी और उनमें सिर्फ़ देहरूप का फ़र्क़ था। सिक्खतवारीख में बाबा बुड्ढा एक नामवर शख़्स गुज़रा है। उस ने अव्वल गुरू नानक साहब की चरणशरण इख़्तियार की और कई गुरू साहबान् के अहद में ज़िन्दा रहा और उन गुरू साहबान् की गद्दीनशीनी की रस्म के वक़्त तिलक लगाने का सौभाग्य उसी को हासिल हुआ। अगर गुरू नानक साहब के बाद दूसरे गुरू साहिबान् में गुरुभाव लाना क़ाबिले एतराज़ होता तो सबसे ज़्यादा क़ाबिले एतराज़ शख़्स बाबा बुड्ढा होता मगर जैसा कि तवारीख बतलाती है कि तमाम सिक्ख इस बुज़ुर्ग की कमाल इज़्ज़त करते थे और भक्तिभाव के मुआमले में उससे सहमत थे।

एतराज़ करने वाले असहाब इस पर कहते हैं कि दूसरे गुरू की शरण लेने की खबर पाकर पहले गुरू, जो गुप्त होगये हैं, ज़रूर नाखुश होंगे और कहेंगे कि यह शख़्स, जो हमारी ज़िन्दगी में इतनी श्रद्धा व भक्ति दिखलाता था और जिस पर हमने इतनी मेहरबानियाँ कीं, अब नाशुक्रा बनकर दूसरे दरवाज़े पर भीख माँगने लगा है। एतराज़ करने वालों का यह ख़्याल भी क़तई कोई वक़अत नहीं रखता क्योंकि अव्वल तो जब सच्चे गुरू इस संसार से वापिस होते हैं तो अपना रिश्ता दुनिया से बिल्कुल तोड़ देते हैं क्योंकि उनकी संसार से वापिसी उसी वक़्त होती है जब वह कार्य, जिसके निमित्त उनकी यहाँ आमद हुई थी, पूरा हो चुकता है। अगर यहाँ से लौटने पर उन्हें दुनिया के लोगों के

मुतअल्लिक़ ख़्यालात उठते रहे तो मानना होगा कि उन्हें अभी मुक्ति हासिल नहीं हुई। वापिस होने पर वे महापुरुष जिस अवस्था से निकलकर आये थे उसीमें जा समाते हैं और संसार से कोई तअल्लुक़ उनका नहीं रहता। दोयम् अगर उन्हें इत्तिला भी होजाय तो उनको यह मालूम करके निहायत खुशी होगी कि उनका फ़ुलाँ शिष्य बदस्तूर परमार्थ के रास्ते पर चल रहा है और ज़िन्दा गुरू की गोद में है। सच्चे गुरुओं को आपस में ईर्षा नहीं हुआ करती।

बचन (५०)

सेवा की ज़रूरत।

दुनिया में कोई ऐसी जमाअत या मुल्क न मिलेगा जिसके सभी मेम्बर या बाशिन्दे अपने भुजबल से अपनी दुनियवी ज़रूरियात पूरी करते हों बल्कि देखने में यही आता है कि ज़्यादा तादाद, चन्द आदमियों की मेहनत के आसरे ज़िन्दगी बसर करती है। आर्थिक विद्या के उसूलों के माहिर बख़ूबी जानते हैं कि दौलत पैदा करने वाले वे ही लोग होते हैं जो जिस्मानी मेहनत या अपनी अक़्ल को खर्च में लाकर ज़मीन से कच्ची चीज़ें और उनसे बेशक़ीमत व उपयोगी वस्तुएँ तैयार करते हैं। चुनांचे सबके सब काश्तकार, खानों में काम करने वाले, जंगल लगाने वाले जो मेहनत करके अनाज, फल, फूल, कपास, लकड़ी, लोहा, कोयला और गोंद वग़ैरह कच्चा माल पैदा करते हैं व नीज़ सूत कातने वाले, कपड़ा बुनने वाले, रबड़ बनाने वाले, लोहे वग़ैरह की चीज़ें

बनाने वाले सबके सब दौलत पैदा करने वाले मेम्बराने सोसायटी में शुमार किये जाते हैं। इनके अलावा बाज़ ऐसे लोग होते हैं जो खुद कच्ची या तैयारशुदा चीज़ें तो पैदा नहीं करते लेकिन चीज़ें पैदा करने वालों के सहायक बनकर काम करते हैं। मसलन् बढ़ई व लोहार, जो काश्तकारों के लिये हल व दूसरे औज़ार तैयार करते हैं और कपड़ा रँगने व धोने वाले, फ़स्ल काटने वाले और मवेशी चराने व पालने वाले वग़ैरह वग़ैरह। ये लोग भी एक मानी में दौलत पैदा करने वाले ही हैं क्योंकि बिला इनकी सहायता के पहली क़िस्म के आदमी दौलत पैदा करने में लाचार रहते हैं। इन दो के अलावा एक तीसरी क़िस्म के लोग हैं, जिनकी मौजूदगी हर मुल्क के अन्दर निहायत लाज़िमी है और जिनसे दौलत पैदा करने वालों को बहुत कुछ फायदा पहुँचता हैं। ये तिजारतपेशा हैं, जो एक जगह की चीज़ें दूसरी जगह भेजकर जिंस पैदा करने वालों के लिये बाज़ार या माँग पैदा करते हैं। अगर तिजारतपेशा न हों तो कच्ची चीज़ें पैदा करने वालों के लिये जीना निहायत दुश्वार होजाय व नीज़ तैयारशुदा चीज़ों की कुछ क़ीमत न रहे। इनके अलावा हकीम, डाक्टर, वैद्य, मुलाज़िमाने फ़ौज व पुलिस वग़ैरह हैं, जो अवाम की जान व माल की हिफ़ाज़त करके अपनेतईं मुल्क के लिये मुफ़ीद व कारआमद बनाते हैं। देखने में आता है कि इन सब पेशों में जिस क़दर आदमी लगे हैं ज़्यादातर औसत दर्जे की ज़िन्दगी बसर करने वाले हैं और इनमें थोड़े ही खुशहाल या अमीर हैं और दौलत ज़्यादातर उन लोगों के क़ब्ज़े में रहती है जो बड़े बड़े सौदागर हैं या दूसरों की कमाई हुई दौलत की हेरा फेरी करते हैं या जिनके हाथों

से दूसरों की दौलत या जायदाद का इन्तिज़ाम होता है और जिनको क़ानून ने यह मौक़ा दिया है कि जिंसों के भाव में और दौलत व जायदाद के क़ब्ज़े में इच्छानुसार तब्दीलियाँ करा सकें। ये लोग व नीज़ चोर व डाकू, बीमार, अपाहिज, भिखमंगे, बच्चे, स्त्रियाँ, बूढ़े, मुलाज़िमतपेशा वग़ैरह ऐसे मेम्बराने सोसायटी हैं जिनके गुज़ारे के लिये हर मुल्क के लोगों का मजबूरन् इन्तिज़ाम करना पड़ता है और जिनको निगाह में रखकर ही इस बचन के शुरू में बयान किया गया था कि हर मुल्क व जमाअत के अन्दर अपने भुजबल से गुज़ारा करने वाले थोड़े ही लोग हुआ करते हैं। अब अगर यह ख़्याल दुरुस्त है तो नतीजा निकलता है कि जबतक किसी जमाअत के अन्दर काफ़ी तादाद ऐसे लोगों की मौजूद न हो जो अपने भुजबल से अपना व दस बीस और का गुज़ारा करा सकें उस जमाअत के कुल मेम्बरों का ज़िन्दा रहना क़तई नामुमकिन है। इसके अलावा यह भी नतीजा निकलता है कि जिस जमाअत के मेम्बरों की ज़्यादा तादाद अपनी मेहनत से कमाया हुआ ही धन अपने लिये जायज़ व मुनासिब समझती है उसी जमाअत के अन्दर दूसरों के सिर पलने वालों की तादाद कम हो सकती है। सरकार हिन्द ने कई तरीक़ों से हिन्दुस्तान की फ़ी कस (प्रतिमनुष्य) आमदनी का हिसाब लगाकर क़रार दिया है कि हर एक हिन्दुस्तानी औसतन् ३६ रुपये फ़ी साल यानी तीन रुपये माहवार कमाता है और इसके मुक़ाबिले में अमरीका का हर शख़्स औसतन् १००० रुपये फ़ी साल कमाता है। इससे अन्दाज़ा हो सकता है कि दोनों मुल्कों के बाशिन्दों की आमदनी में कितना बड़ा फ़र्क़ है! यही वजह है

कि मुल्के हिन्दुस्तान निर्धनता के पञ्जे में गिरफ़्तार है और अच्छे अच्छे घरानों के लोग दस पाँच रुपये की नौकरी मिल जाने पर अपना भाग्य सराहते सुनाई देते हैं और मुल्क के बाशिन्दों की हालत दिन बदिन गिरती जा रही है। वाज़ह हो कि जिस मुसीबत में तमाम मुल्के हिन्दुस्तान गिरफ़्तार है उससे सत्सङ्गमण्डली बरी नहीं है और सत्सङ्गी भाइयों को भी अपनी ज़रूरतें पूरा करना मुश्किल होरहा है। सत्सङ्गी भाइयों की यह हालत देखकर हमारे लिये दो सूरतें हैं। अव्वल यह कि हम अवाम की तरफ़ से मुँह फेरलें और हर किसी को अपनी अपनी भुगतने दें। दोयम् यह कि कोई ऐसी तदबीर निकालें कि जिसपर चलने से सत्सङ्गमण्डली की फ़ी कस आमदनी में इज़ाफ़ा हो। पुरानी आदतें, सुस्ती व खुदग़रज़ी तो यही सलाह देती हैं कि तुम्हें औरों की क्या पड़ी है, हर कोई अपने अपने कर्मों का फल भोग रहा है, भोगने दो या। यह कि जब राधास्वामी दयाल की मौज होगी, आपसे आप सब ठीक हो जायगा, हम क्यों दुनिया का बोझ अपने सिर लें। लेकिन बिरादराना मुहब्बत व हमदर्दी कहती है कि अपने आराम व नफ़े को किसी क़दर छोड़कर ज़रूर ऐसी कोई तदबीर अमल में लानी चाहिये जिससे दुखिया भाइयों को नाहक़ की फ़िक्रों से छुटकारा मिले। चूँकि स्वभाव से इन दो मश्वरों में से हमें आख़िरी मश्वरा ही पसन्द आता है इसलिये हम मजबूरन् खुदग़रज़ी व सुस्ती के ख़्यालात को दिल से दूर करके दो चार ऐसी बातें पेश करते हैं जिनपर अमल करने से कुछ अर्से के अन्दर सत्सङ्गमण्डली की कायापलट हो सकती है। लेकिन पेश्तर इसके कि हम कोई अमली तजवीज़ें पेश करें यह बयान कर देना ज़रूरी समझते हैं कि हमें बख़ूबी

मालूम है कि ज़्यादा दौलत इन्सान के लिये वैसी ही नुक़्सानदेह है जैसी कि मुफ़लिसी व ग़रीबी। इसलिये हमारी यह ख़्वाहिश या कोशिश कभी न होगी कि सतसङ्गी भाई अमीर व कबीर बन जायँ। हमारी ख़्वाहिश सिर्फ़ इस क़दर है कि किसी तरह मौजूदा तंगी की सूरत दूर होकर सत्संगी भाइयों के लिये औसत दर्जे के गुज़ारे का इन्तिज़ाम हो जाय। ये ख़्यालात न लोभ व लालच की वजह से पैदा होते हैं और न दौलत फ़राहम करने व कराने के मन्सूबों से तअल्लुक़ रखते हैं। हमारी आरज़ू यह है कि हर सतसङ्गी भाई की माली हालत ऐसी हो जैसी कि कबीर साहब की नीचे लिखी हुई साखी में तजवीज़ की गई है:—

'साहब एती माँगहूँ जामे कुटुँब समाय।
मैं भी भूखा ना रहूँ साध न भूखा जाय॥'

सबसे अव्वल ज़रूरत इस बात की है कि सतसङ्गी आपस में एक दूसरे से बेग़रज़ लेकिन सच्ची मोहब्बत करें। इसकी पहचान यह है कि आपस में मिलने पर सतसङ्गियों में परस्पर प्यार पैदा हो और उनके दिल में एक दूसरे को आराम पहुँचाने के लिये ख़्वाहिश जागे। अगर दुनियवी लिहाज़ से या परमार्थी तरक़्क़ी के हिसाब से अपने से बढ़कर किसी भाई से मुलाक़ात हो तो उसका दिल व जान के साथ अदब व सत्कार किया जावे और अगर अपने से किसी छोटे भाई के साथ मुलाक़ात हो तो इस तरीक़े से बर्ताव किया जाय कि दूसरे भाई को यह महसूस हो कि आप उसको किसी तरह छोटा नहीं समझते और आपके दिल में उसके लिये काफ़ी जगह है। जब सतसङ्गी भाई आपस में मिलें तो कभी यह ख़्याल दिल में न आवे कि सतसंग के रूहानी रिश्ते का किसी तरह नाजायज़ फ़ायदा उठाया

जाय। अगर कोई सत्सङ्गी मुश्किल में गिरफ़्तार हो तो जहाँ तक मुमकिन हो वह ज़ब्त (संयम) से काम ले और अपने लिये किसी भाई को तकलीफ़ न दे और अगर बदर्जए मजबूरी उसे किसी भाई से मदद की ज़रूरत दरपेश हो तो मुआफ़ी माँगकर अपनी ज़रूरत पेश करे और उसके मुतअल्लिक़ कम से कम इम्दाद के लिये प्रार्थी हो। लेकिन अगर किसी सत्संगी को मालूम हो कि दूसरा भाई तकलीफ़ में है तो, इस बात का इन्तिज़ार न करते हुए कि मुसीबतज़दा भाई खुद आकर मदद तलब करे, खुद फ़ौरन् उस भाई की मदद के लिये मुनासिब कोशिश करे और अगर इस सिल्सिले में अपने तन,मन और धन को कुछ नुक़्सान भी पहुँचे तो परवा न करे। इसके ये मानी नहीं हैं कि उसकी मदद करने के लिये झूठ बोले या झूठी गवाही दे या नाहक़ क़ुश्तो खून करे। मतलब यह है कि सत्संग के उसूलों को सामने रखकर मुनासिब तरीक़े पर व हस्बहैसियत मुसीबतज़दा भाई की मदद की जावे।

वाज़ह हो कि जब तक इस क़िस्म की बेग़रज़ मोहब्बत सत्सङ्ग-मण्डली के अन्दर क़ायम न होगी खुदग़र्ज़ी व फूट का, जिन्होंने हिन्दुस्तानी अवाम के दिलों पर अधिकार जमा रक्खा है, हर्गिज़ सफ़ाया न हो सकेगा और बिला इन नाक़िस अङ्गों से रिहाई हासिल किये माली ज़रूरियात के लिये किसी इन्तिज़ाम का बड़े पैमाने पर क़ायम होना नामुमकिन होगा। इसलिये जिस क़दर जल्द यह सलाह सत्सङ्गी भाइयों के ज़ेहन नशीन हो जाय अच्छा है।

यह दुरुस्त है कि इस सबक़ का सीख लेना और इस पर चलना ऐसा आसान नहीं है जैसा कि इन अलफ़ाज़ से ज़ाहिर हो सकता है,

क्योंकि दूसरों को खुदगरज़ी के ज़रिये अपना काम निकालते और फ़िक्रों व चिन्ताओं से आज़ाद ज़ाहिरा खुश व सुखी देखते हुए ख़्वाह-मख़्वाह बेग़रज़ सच्ची मोहब्बत का सबक़ कड़ुवा प्याला मालूम होता है। लेकिन वाज़ह हो कि खुदगरज़ों का दिल हमेशा तङ्ग व तारीक रहता है और उन्हें कभी एक मिनट के लिये भी शान्ति या चैन नसीब नहीं होता और सच्चे परमार्थ की तालीम का उनके दिल पर बहुत ही कम असर होता है। मुख़्तसिर लफ़्ज़ों में खुदगरज़ इन्सान सच्चे परमार्थ की कमाई के लिये क़तई नामौज़ूँ हैं इसलिये सत्सङ्गी भाइयों को यह ख़्याल करके कि कड़वी दवा मर्ज़ को नाश करती है इस ज़ाहिरी कड़वे प्याले को खुशी से पी लें। आपस की मोहब्बत से वह ज़बरदस्त ताक़त पैदा हो सकती है जिसके सामने कोई दुनियवी रुकावट क़दम नहीं जमा सकती और इस क़िस्म का एतबार क़ायम हो सकता है कि आपस की लड़ाई व फूट के लिये कोई गुन्जायश ही न रहे और इस तेज़ी से तरक़्क़ी के मैदान में क़दम बढ़ाया जा सकता है कि बरसों का सफ़र दिनों के अन्दर अन्जाम पा जावे।

दूसरी सलाह यह है कि सत्सङ्गी भाई अपने फ़ालतू धन को एक जगह जमा करें और उसको अपनी ज़रूरियात के मुतअ़ल्लिक़ इन्तिज़ाम में सर्फ़ करें। अर्थशास्त्र के मुतअ़ल्लिक़ एक रिसाले में ज़िक्र है कि विलायत के एक क़स्बे के चन्द ग़रीब जुलाहों ने आपस में थोड़ी पूँजी जमा करके एक स्टोर क़ायम किया और सरमाया बहम पहुँचाने वाले (धन इकट्ठा करने वाले) मेम्बरों ने प्रतिज्ञा की कि जो चीज़ें इस स्टोर में होंगी वे वहीं से मोल लेंगे। शुरू में सिर्फ़ तीन चीज़ों की

फ़रोख़्त का बन्दोबस्त किया गया और ग़ालिबन् वे चीनी, चाय और आटा थीं। स्टोर में ये चीज़ें मुक़र्ररा नफ़े पर फ़रोख़्त होती थीं। रफ़्ता रफ़्ता क़स्बे के सब लोग इस स्टोर से ये चीज़ें ख़रीदने लगे और मुन्तज़िमाने स्टोर को हौसला हुआ कि उन तीन चीज़ों के अलावा और भी ज़रूरियाते ज़िन्दगी बहम पहुँचाने के लिये इन्तिज़ाम करें। होते होते यहाँ तक नौबत आगई है कि उस स्टोर में आज दिन करोड़ों रुपये का माल जमा है और उसकी दस ग्यारह शाखें मुख़्तलिफ़ शहरों में काम कर रही हैं। सत्सङ्गी भाई इस मिसाल से सबक़ लेकर बआसानी दयालबाग़ में इस क़िस्म का इन्तिज़ाम कर सकते हैं। इस इन्तिज़ाम से चन्द ही साल के अन्दर इस क़दर आमदनी हो सकती है कि न सिर्फ़ दयालबाग़ की संस्थाएँ बआसानी चलाई जा सकें बल्कि मुख़्तलिफ़ सूबों में इस क़िस्म की नई संस्थाएँ क़ायम की जा सकें। दया से सत्सङ्गी भाई आम तौर पर ईमानदार हैं, उनके लिये ऐसे स्टोर का चलाना व मुख़्तलिफ़ मुक़ामात में सत्सङ्गसंस्थाओं का क़ायम करना कोई मुश्किल बात नहीं है।

तीसरी सलाह यह है कि हर सत्सङ्गी भाई अपनी औलाद को किसी न किसी इल्म व फ़न में कमाल हासिल करने के लिये मजबूर करे। यह ज़माना इल्म व हुनर के माहिरों ही की तरक़्क़ी का है। ये ही लोग अपने मुल्कों के लिये पोशीदा ख़ज़ानों की कुंजियाँ मुहय्या करते हैं। जो माहिर मुहर तोड़कर क़ुदरत के छिपे रहस्य अपने देशवासियों के रूबरू धर देता है या सृष्टिनियमों का मुताला करके गुप्त शक्तियों पर क़ाबू हासिल करने और उनसे काम लेने की तदबीरें पेश करता है उससे बढ़-

कर मुल्क व जाति बल्कि मनुष्यमात्र का सेवक कौन हो सकता है? यह दुरुस्त है कि हर शख़्स किसी इल्म या फ़न का माहिर नहीं बन सकता लेकिन यह भी वाज़ह है कि जब तक हज़ारों, लाखों कोशिश न करेंगे माहिरों के पैदा होने के लिये मुनासिब वायुमण्डल क़ायम न होगा और अगर हज़ारों, लाखों की कोशिश से एक नौजवान भी किसी इल्म या फ़न का माहिर बन जावे या पैदा हो जावे तो बिलामुबालिग़ा हज़ारों, लाखों के परिश्रम का काफ़ी से ज़्यादा बदला पल भर में मिल जावेगा ।

चौथी सलाह यह है कि सत्सङ्गी बच्चों की तालीम व तरबियत का इन्तिज़ाम राधास्वामीसत्सङ्गसभा के ज़िम्मे किया जावे और हर एक सत्सङ्गी भाई बखुशीएतमाम हस्बे हैसियत क़ुर्बानी करके सभा को इस नेक काम के सरअंजाम देने में मदद दे । बच्चों की तालीम व परवरिश एक अहम ज़िम्मेवारी का काम है और यह हर शख़्स के बस की बात नहीं कि ज़माने की ज़रूरतों को सामने रखकर बच्चों की परवरिश कर सके। अगर यह सेवा चुने हुए क़ाबिल प्रेमी भाइयों के सुपुर्द करदी जावे तो न सिर्फ़ आयन्दा नस्ल की बेहतरी के लिये ख़ातिरख़्वाह बन्दोबस्त हो जावेगा बल्कि मौजूदा भाइयों के सिर से भी भारी बोझ उतर जावेगा ।

मगर सवाल होता है—आया सत्सङ्गमण्डली इन चारो हिदायतों पर अमल कर सकती है? हमारा जवाब है कि अगर सच्चे परमार्थियों की जमाअत इन "अपनी मदद अपने हाथ" के क़ायदों पर अमल नहीं कर सकती तो दुनिया की कोई भी जमाअत इनसे लाभ नहीं उठा सकती ।

बचन (५१)

अंशांशिभाव से क्या अभिप्राय है ?

राधास्वामीमत में सुरत यानी आत्मा और राधास्वामी दयाल यानी सच्चे मालिक में अंशांशिभाव माना गया है जिससे ज़ाहिर है कि दोनों का जौहर एक है और मन व माया के बन्धनों से आज़ाद होने पर यानी अपनी असली निर्मल चेतन अवस्था में लौटने पर सुरत का वही हाल होता है जो समुद्र में दाखिल होने पर नदियों व नालों का हुआ करता है यानी जबतक वे ज़मीन पर बहते हैं, नदी नाले कहलाते हैं और उनके जुदा जुदा नाम व रूप रहते हैं लेकिन जब वे समुद्र में दाखिल हो जाते हैं तो उनके नाम और रूप मिट जाते हैं और उनका पानी समुद्ररूप हो जाता है। वाज़ह हो कि नदी, नालों व समुद्र की मिसाल सुरत की निर्मल अवस्था के बयान पर हर पहलू से नहीं घटती क्योंकि पानी एक स्थूल चीज़ है और सुरत व सच्चा मालिक चेतन जौहर है इसलिये चेतन जौहर की हालत स्थूल पदार्थों की मिसाल से बयान करने में स्थूल पदार्थों के गुणों के दोष ख़्वाहमख़्वाह दर्मियान में आ जाते हैं। इस मिसाल को विचारते वक़्त नदी नालों के समुद्र में गिरने पर अपने नाम व रूप को खो देने और उनके जल का समुद्र के जल के साथ तद्रूप यानी हमज़ात हो जाने का अङ्ग ही ध्यान में रखना चाहिये।

बाज़ लोग लफ़्ज़ अंश के मानी टुकड़ा या जुज़ लगाकर और जुज़ का ख़्याल करते वक़्त लकड़ी के टुकड़ों या पानी की बूँदों की हालत सामने रखकर एतराज़ करते हैं कि सन्तमत की तालीम की रू से

यह मानना होगा कि मालिक टुकड़ों या जुज़ों में तक़सीम हो सकता है बल्कि यह कहना होगा कि रचना होने पर अनेक सुरतों यानी आत्माओं के ज़ाहर में, जो इस वक़्त संसार में देह धारण किये हुए नज़र आती हैं, मालिक के बेशुमार टुकड़े हो गये। मगर जैसा कि ऊपर इशारा किया गया यह एतराज़ चेतन जौहर व स्थूल मसाले के बाहमी फ़र्क़ को नज़र अन्दाज़ करने से पैदा होता है। अगर अंश का अनुमान करते वक़्त बजाय लकड़ी के टुकड़ों व पानी के क़तरों के सूर्य की किरणों की जानिब तवज्जुह मुख़ातिब कीजाय और सूर्य (जो कि अंशी भण्डाररूप है) और सूर्य की किरण (जो कि अंश रूप है) का बाहमी रिश्ता निगाह में रक्खा जावे तो सुरतों की हस्ती से मालिक के लातादाद टुकड़ों में तक़सीम होजाने का भ्रम आसानी से दूर हो सकता है। लेकिन मालूम हो कि चेतन जौहर सूर्य की किरणों से भी बदर्जहा लतीफ़ यानी सूक्ष्म है और जबतक किसी शख़्स को रूहानी मण्डल का वाक़ई तजरुबा न होजावे उसका इस जौहर की निस्बत अनुमान लाज़िमी तौर पर ग़लत होगा। इसलिये यह समझ में आना मुश्किल नहीं होना चाहिये कि सुरत मालिक का अंश कहलाते हुए मालिक से किसी हालत में जुदा नहीं होती और रचना होने से सिर्फ़ यह सूरत पैदा हुई है कि सुरत का रुख़ बाहर की तरफ़ यानी प्रकृति की जानिब होगया है लेकिन अन्तर में सुरत का मालिक के साथ झीना रिश्ता बराबर क़ायम है और अखण्डित है और उद्धार व मोक्ष के मानी यही हैं कि किरणरूपी सुरत का रुख़ बाहर की जानिब से हटकर अपने सूर्यरूपी निज भण्डार की जानिब क़ायम हो।

सन्तमत की इस तालीम को सुनकर दुखी से दुखी और कंगाल से कंगाल जीव को बड़ी ज़बरदस्त तक़वियत हासिल होती है और शरीर व मन सम्बन्धी सभी क्लेश निहायत बदहैसियत व कमज़ोर दिखलाई देने लगते हैं और शौक़ व हिम्मत पैदा होती है कि मुनासिब साधन करके मौजूदा जीवावस्था से पार होकर और दर्मियानी मंज़िलें तय करके जहाँ तक मुमकिन हो जल्द निर्मल चेतन यानी ख़ालिस रूहानी अवस्था या गति 'जो सुरत की असली हालत है' हासिल कीजावे । नीज़ समझ में आजाता है कि सन्तमत यानी राधास्वामीमत में साध, सन्त व सतगुरु की जो इस क़दर महिमा कीगई है वह निहायत जायज़ व दुरुस्त है क्योंकि जिस पुरुष ने शरीर व मन के बन्धनों पर फ़तह हासिल करके मन के घाट की जागृति के बजाय सुरत के घाट की जागृति हासिल करली है या दूसरे लफ़्ज़ों में जो नाला समुद्र में दाख़िल होगया है या जो किरण बजाय बहिर्मुख चमकने के अपने सूर्य में लौट गई है, उसमें और सच्चे मालिक में कोई भेद नहीं है ।

लेकिन साथ ही इस क़िस्म की बात सुनकर और असलियत को न समझकर बहुत से भाई, बड़े ज़ोर व शोर के साथ एतराज़ करते हैं कि आत्मा किसी हालत में परमात्मा नहीं बन सकता । मगर यह कौन कहता है कि आत्मा परमात्मा बन जाता है । सन्तमत की तालीम यह है कि क़तरा समुद्र में दाख़िल होकर क़तरा नहीं रहता बल्कि समुद्र से मिल जाता है और यह नहीं है कि क़तरा ख़ुद समुद्र बन जाता है । डाक्टर थीबो व मैक्समूलर ने वेदान्तसूत्रों पर विचार करते वक़्त यह नतीजा निकाला है कि दूसरे अध्याय के तीसरे पाद के ४३वें सूत्र के वही मानी दुरुस्त

हैं जो श्रीरामानुज जी ने बयान किये हैं और रामानुज जी के मानी यह हैं कि आत्मा यानी जीव ब्रह्म का अंश है।

अलावा इसके श्रीमद्भगवद्गीता में कृष्ण महाराज ने इस नुक्ते पर रोशनी डाली है। आप अध्याय १५ श्लोक ७ में फ़र्माते हैं कि खुद मेरा ही अंश इस जीवलोक में अविनाशी जीव बनकर इन्द्रियों को, जिनमें छठा (यानी छठी इन्द्रिय) मन है और जो प्रकृति में क़ायम हैं, अपनी ओर आकर्षण करता है। इस श्लोक में कृष्ण महाराज ने अपनेतई अंशी ब्रह्म और जीव को अपना अंश या जुज़ बयान किया है।

इसके अतिरिक्त जिन भाइयों ने उपनिषदों के 'तत्त्वमसि' सिद्धान्त पर विचार किया है या इस सिद्धान्त पर ऋषियों के विचारों का मुताला किया है वे बज़ोर कह सकेंगे कि पुराने ज़माने में वैदिक धर्म के मानने वाले और वैदिक धर्म का अनुशासन करने वाले और वेदज्ञ यानी वेदों का अर्थ जानने वाले ऋषियों का भी यही मत था।

'तत्त्वमसि' के मानी 'वह तू है' या 'वह तू हो जा' माने जाते हैं। दोनों में से कोई भी मानी सही मानने पर नतीजा निकलता है कि मनुष्य के अन्दर स्थित जीव यानी आत्मा को ब्रह्मगति या ब्रह्म की अवस्था प्राप्त हो सकती है।

उद्दालक ऋषि ने अपने बेटे श्वेतकेतु से, जब वह बारह वर्ष शिक्षा पाने के बाद गुरुकुल से वापिस आया और पूरे विद्वान् होने का घमण्ड

+ मुलाहिज़ा हो Collected works of Maxmuller जिल्द १९, सफ़ा १९० ।

करने लगा, सवाल किया—ऐ श्वेतकेतो! तू जो अपनी विद्या पर इतना घमण्ड करता है क्या तूने वह उपदेश भी सीखा है कि जिससे न सुना हुआ सुना हुआ हो जाता है, न समझा हुआ समझा हुआ हो जाता है और न जाना हुआ जाना हुआ हो जाता है? श्वेतकेतु ने हैरान होकर पूछा—हे भगवन्! वह उपदेश किस प्रकार का है? उद्दालक ने जवाब दिया—देखो! जैसे मिट्टी के ढेले के जानने से मिट्टी की हर एक वस्तु का ज्ञान हो जाता है और सोने के ढेले से सोने की हर एक वस्तु जानी जाती है और लोहे के नहरने से लोहे की हर एक वस्तु जानी जाती है इसी प्रकार का वह उपदेश होता है। यह सुनकर श्वेतकेतु ने जवाब दिया—निसन्देह यह उपदेश मेरे गुरु न जानते होंगे क्योंकि अगर वे जानते तो मुझे ज़रूर बतलाते इसलिये आप ही मुझे बतलावें। इसपर उद्दालक ऋषि ने बहुत से दृष्टान्तों के द्वारा श्वेतकेतु को समझाया कि इस संसार के अन्दर जो सद् वस्तु है और जो सूक्ष्मरूप से सबको जान दे रही है वह आत्मा है और वही 'तू' है। यह कथा छान्दोग्य उपनिषद् में बड़े विस्तार के साथ बयान की गई है।

बचन (५२)

आराम काम करने में है।

हर शख़्स चाहता है कि दुनिया का काम चलाने में उसे हर तरह की सहूलियत मिले बल्कि अगर मुमकिन हो तो उसे अपने व सम्बन्धियों

के मुतअल्लिक़ कोई फ़िक्र या चिन्ता न करनी पड़े और सबकी सब ज़रूरतें आप से आप पूरी हो जायँ या दूसरे लोग पूरी कर दें। अफ़सोस के साथ कहना पड़ता है कि बहुत से सत्सङ्गी भाई भी ऐसे ख़्यालात के शिकार हैं। उनमें से बाज़ तो यह कहते हैं कि जबकि उन्होंने हुज़ूर राधास्वामी दयाल की शरण लेली तो उनकी सब मुश्किलें दूर करना और ज़रूरतें पूरी करना हुज़ूर राधास्वामी दयाल का काम है और बाज़ यह ख़्याल रखते हैं कि घर बार छोड़कर सत्संग में जा पड़ें, हमारा काम शरण लेना है और जब हमने शरण लेली तो हमारी सब ज़रूरतें सत्सङ्ग पूरी करेगा। सत्सङ्ग में शामिल होने से हमारा हक़ हो जाता है कि हमें अपने मुतअल्लिक़ किसी क़िस्म की फ़िक्र न करनी पड़े और दूसरे लोग हमारे लिये सब इन्तिज़ाम करें। और तअज्जुब यह है कि इस क़िस्म के ख़्यालात इन भोले भाइयों के दिलों में ऐसे घर किये हैं कि समझाने बुझाने से उनका एकाएकी दूर होना ना मुमकिन है। यह बिल्कुल साफ़ है कि जिस जमाअत में इस क़िस्म के लोगों की कसरत होगी उसका थोड़े ही दिनों के अन्दर हर पहलू से गिराव शुरू हो जावेगा। देखो, जो खुराक इन्सान खाता है उसका बहुतसा जुज़ हज़्म होकर खून में बदल जाता है और खून के बढ़ने से जिस्म में ताक़त पैदा होती है। अगर इस ताक़त का मुनासिब इस्तेमाल न किया जाय यानी वह हाथ पाँव व दूसरे अङ्गों के हिलाने में सर्फ़ करके ख़ारिज न की जाय तो बुरे ख़्यालात पैदा करने लगती है जिनकी वजह से इन्सान सहज में बदी के रास्ते पर पड़ जाता है और रफ़्ता रफ़्ता उसका हाज़्मा कमज़ोर हो जाता है और तरह तरह के ज़हर जिस्म के अन्दर पैदा होने लगते हैं जिनसे क़िस्म क़िस्म की बीमारियाँ पैदा हो जाती हैं। गोल्ड-

स्मिथ ने एक जगह पर कहा है-"उस मुल्क पर भारी तबाही आती है और वह जल्द तबाही लाने वाली बुराइयों का शिकार बन जाता है जिसमें दौलत इकट्ठी हो जाती है और इन्सानों में तनज़्ज़ुल वाक़े होता है।" लेकिन मुल्क तबाह हो जाय, प्रजा का सत्यानाश हो जाय, परमार्थ व स्वार्थ दोनों मटियामेल हो जाय, मनुष्यजन्म धारण करना निष्फल हो जाय मगर इन आरामतलबों के आराम में फ़र्क़ न आये। वाज़ह हो कि जब तक हुज़ूर राधास्वामी दयाल की रक्षा का पंजा सत्सङ्ग-मण्डली के सिर पर है इस क़िस्म के ज़हरीले ख़्यालात सत्सङ्ग के हल्क़े के अन्दर मुस्तक़िल तौर पर जड़ पकड़ने न पावेंगे और हज़ार सूरत से उनके विनाश करने के लिये कोशिश की जावेगी।

इसपर सवाल किया जा सकता है-"तो फिर क्या हुज़ूर राधास्वामी दयाल की शरण लेने या अहातए सत्सङ्ग के अन्दर डेरा जमा लेने पर भी आराम न मिलेगा?" इसका जवाब यह है कि सच्चे मालिक की सच्ची शरण लेते ही आप से आप प्रेमीजन को सच्ची शान्ति मिल जाती है और उसके दिल में इस क़िस्म का सवाल पैदा होने के लिये गुञ्जायश ही नहीं रहती। इस क़िस्म के सवालात नाममात्र के लिये शरण लेने वालों ही के दिल में पैदा हुआ करते हैं। ग़ौर का मुक़ाम है कि जब किसी प्रेमीजन को यह यक़ीन हुआ कि सच्चे कुल मालिक हुज़ूर राधास्वामी दयाल ने उसे अपनी शरण में ले लिया है और वह जानता है कि वह मालिक परम सत्ता, परम चेतनता व परम आनन्द का भण्डार है तो क़ुदरती तौर पर उसका मन यह कहेगा कि ऐसे समर्थ पुरुष की गोद में बैठ जाने पर मेरे लिये अपनी ज़रूरतों के मुतअल्लिक़ फ़िक्रों में पड़ना

नामुनासिब है। मेरे लिये यही मुनासिब है कि एक आज्ञाकारी पुत्र की तरह अपने स्वार्थी व परमार्थी कर्तव्य पालन करता रहूँ और हर हालत में नतीजे को उन दयाल की मौज पर छोड़कर अपनी तवज्जुह अन्तर में उनके चरणों में जोड़ता रहूँ। उन दयाल की मौज से जो कुछ होगा वह ऐन मेरी बेहतरी के लिये होगा। उनसे बढ़कर न कोई समर्थ है, न समझदार है और न हितकारी है। अगर बावजूद मेरी मुनासिब कोशिश के नतीजा ख़िलाफ़ उम्मीद प्रकट होता है तो इसमें मेरा क्या क़ुसूर है और इससे ज़्यादा मैं कर ही क्या सकता था? यह नतीजा महज़ ज़ाहिरन् मेरे ख़िलाफ़ है, दरअसल यह मेरे लिये मुफ़ीद होगा क्योंकि यह नहीं हो सकता कि सच्चे कुल मालिक की दया शामिले हाल रहते हुए और मेरी जानिब से अदायगीए फ़र्ज़ के मुतअल्लिक़ किसी क़िस्म की कोताही न होते हुए भी मेरा अकाज हो जाय। उसकी ज़बान पर बेसाख़्ता कबीर साहब की नीचे की कड़ी आवेगी:—

'मैं सेवक समरत्थ का कभी न होय अकाज।
पतिव्रता नाँगी रहे वाहि पती को लाज।'

और इस कड़ी का भावार्थ ज़ेहन में आते ही चिन्ता व फ़िक्र और रञ्ज व ग़म के ख़्यालात एकदम उसके दिल से दूर हो जावेंगे और शान्ति व सब्र और उम्मीद व प्रेम के भावों का राज्य हो जावेगा।

इसके सिवा ग़ौर करना चाहिये कि जिस क़िस्म की सहूलियत 'आरामतलब' भाई राधास्वामी दयाल व सत्सङ्ग से चाहते हैं वह

दुनिया में बादशाहों को भी हासिल नहीं है। यह ज़रूर है कि जिन चीज़ों व बातों की ज़रूरतें ग़रीब ग़ुर्बा या मामूली हैसियत के इन्सानों को परेशान करती हैं उनसे बादशाह आज़ाद रहते हैं लेकिन बादशाहों को इस क़िस्म की ज़रूरतों से कहीं बढ़ चढ़ कर व तेज़ ज़रूरतें दिक़ करती रहती हैं जिनका अवाम को वहम व गुमान भी नहीं हो सकता। ऐसी सूरत में सत्सङ्गी भाइयों का आरामतलबी में ज़िन्दगी बसर करने की उम्मीद बाँधना सरासर नामुनासिब है। अगर कोई भाई दुनिया की तकलीफ़ों से बचना चाहता है तो उसे चाहिये कि अव्वल अपनी ज़रूरतें कम करे। ज़रूरतें कम करने से उसका सहज में हर क़िस्म के ग़ैर ज़रूरी मुआमलों से छुटकारा हो जायगा और उसे अपना वक़्त इच्छानुसार सर्फ़ करने के लिये बहुत कुछ फ़ुरसत मिल जायगी। दोयम् उसके लिये मुनासिब है कि अपनी बाक़ीमाँदा यानी मुनासिब ज़रूरियात पूरी करने के लिये एक लायक़ व क़ाबिल शख़्स की तरह कोशिश व यत्न करे। इस तरीक़े अमल के इख़्तियार करने का नतीजा यह होगा कि उस भाई को बहुत ही कम मौक़ा परमार्थ में विघ्न डालने वाले ख़्यालात से वास्ता रखने का होगा और उसकी स्वार्थी व परमार्थी ज़रूरतें आसानी से पूरी होती जायँगी और मुफ़लिसी, नाकामयाबी व सुस्ती कभी उसके दरवाज़े के अन्दर दाख़िल न होने पावेंगी।

वचन (५३)

वक़्तगुरू की ज़रूरत ।

सन्तमत में गुरुभक्ति पर कमाल दर्जे का ज़ोर दिया गया है चुनाँचे हुज़ूर स्वामी जी महाराज का वचन है:—

'परथम सीढ़ी है गुरु भक्ती ।
गुरुभक्ती बिन काज न रत्ती ॥'

यानी सन्तमत की तालीम के अनुसार परमार्थ के निशाने यानी मंज़िले मक़सूद पर पहुँचने के लिये पहला ज़ीना गुरुभक्ति है और बिना गुरुभक्ति से रत्ती भर तरक़्क़ी नहीं हो सकती । मगर हर कोई जानता है कि गुरुभक्ति की तालीम सिर्फ़ सन्तमत ही में नहीं है बल्कि और भी बहुत से मज़हबों में, जो भक्तिमार्ग कहलाते हैं, गुरुभक्ति की महिमा बयान की गई है । चुनाँचे करोड़ों इन्सान अपने अपने तरीक़े से अपने गुरुओं, मुर्शिदों, अवतारों व पैग़म्बरों की भक्ति में मसरूफ़ हैं लेकिन सन्तमत में बज़ोर हिदायत की जाती है कि भक्ति ज़िन्दा व पूरे गुरु की करनी चाहिये । जो गुरु हो चुके और अब ज़िन्दा नहीं हैं यानी जो इस वक़्त देहरूप में मौजूद नहीं हैं उनकी व नीज़ ऐसे शख़्सों की, जो हो चुके हैं या अब ज़िन्दा हैं लेकिन पूरे नहीं हैं यानी मंज़िले मक़सूद पर नहीं पहुँचे हैं, भक्ति करने में फ़ायदा नहीं है । हुज़ूर स्वामी जी महाराज ने फ़र्माया है:—

'गुरु तो पूरा ढूँड तेरे भले की कहूँ ।
पिछलों की तज टेक तेरे भले की कहूँ ।

वक़्तगुरू को मान तेरे भले की कहूँ।'

सन्तमत सिखलाता है कि हर एक जिज्ञासु पर फ़र्ज़ है कि किसी क़िस्म की पूजा-पाठ में लगने या किसी पन्थ या मार्ग पर पड़ने से पहले अपनी उम्र का एक हिस्सा सच्चे सतगुरु की तलाश में सर्फ़ करे और यहाँ तक फ़र्माया गया है कि अगर सच्चे सतगुरु की तलाश में किसी की सारी उम्र भी सर्फ़ हो जाय तो कोई हर्ज नहीं है। उसको आयन्दा फिर मनुष्यजन्म मिलेगा और सच्चे सतगुरु भी मिलेंगे। दूसरी मज़हबी जमाअतों में गुरू, मुर्शिद व अवतार वग़ैरह की पूजा व भक्ति का रिवाज तो क़ायम है लेकिन वक़्तगुरू के खोज के मुतअल्लिक़ सन्तमत की तालीम का कुछ लिहाज़ नहीं किया जाता। चुनाँचे हिन्दू, मुसलमान व ईसाई भाई आमतौर पर ऐसे बुज़ुर्गों की भक्ति में लगे हैं जिन्हें उन्होंने कभी आँख से नहीं देखा और जिनसे मुलाक़ात करना मौजूदा हालत में क़तई नामुमकिन है और जो लोग ज़िन्दा गुरू व मुर्शिद की महिमा समझते हैं वे बिला पूरी तहक़ीक़ात किसी गद्दीनशीन या वंशावली गुरू की भक्ति में मसरूफ़ हैं या किसी ऐसे साधू, ब्राह्मण या मौलवी वग़ैरह के प्रेमी होरहे हैं जिनकी ज़ाहिरा रहनी गहनी किसी क़दर ग़ैरमामूली है या जो ज्ञान, ध्यान के मुतअल्लिक़ अच्छा उपदेश सुना सकते हैं या जो दुख तकलीफ़ की हालत में यन्त्र, मन्त्र, तावीज़ या प्रार्थना के ज़रिये फ़ैज़ पहुँचा सकते हैं।

सन्तमत की यह तालीम कि गुरू ज़िन्दा और पूरा होना चाहिये, एक निहायत आला परमार्थी उसूल पर क़ायम है। अगर गुरू ज़िन्दा है तो जिज्ञासु अव्वल इच्छानुसार उनकी परख पहचान कर

सकता है और दोयम् परख पहचान होने पर उनके सङ्ग व सोहबत से भरपूर फ़ायदा उठा सकता है और सोयम् साधन की कमाई के सिल्सिले में मुश्किलें पेश आने पर सलाह व मदद हासिल कर सकता है। इन तीन बातों के अलावा बड़ा फ़ायदा यह है कि ग़ायब मालिक का न तो किसीसे ध्यान बन सकता है और न ही किसी का मन भय मानता है। हज़ारों इन्सान मालिक को हाज़िर व नाज़िर मानते हुए रोज़ाना ऐसे कर्म करते हैं जो एक बच्चे के सामने करते उन्हें शर्म आये। ज़िन्दा गुरू में श्रद्धा आने पर भक्तजन का मन बहुत कुछ डर मानता है क्योंकि उसे मालूम है कि गुरू महाराज से कोई बात छिपी न रहेगी और नाक़िस कर्म बन पड़ने पर उसे मर्दूद दर्बार होने की ख़्वारी व तकलीफ़ उठानी पड़ेगी। इसी तरह हज़ारों इन्सान खुदा या परमात्मा का ध्यान करते हैं और ध्यान के वक़्त कभी सूर्य की चमक और कभी बादलों या आकाश के फैलावकी जानिब तवज्जुह लेजाते हैं, जिसका नतीजा यह होता है कि मालिक का ध्यान करते हुए सारी उम्र बीत जाती है लेकिन एक छिन के लिये भी न कभी ध्यान जमता है और न मालिक का दर्शन प्राप्त होता है। सतगुरुभक्त अपने गुरू महाराज का भय, भाव व अदब लिये हुए ज़िन्दगी बसर करता है, जिससे उसका नाजायज़ व नामुनासिब बातों से बहुत कुछ बचाव रहता है और उसके मन के अन्दर प्रेम व प्रीति का दीपक हमेशा रोशन रहता है और हस्बहिदायत ध्यान जमाने पर उसको थोड़े ही अर्से में अन्तरी आँख के टिमटिमाने पर आला रूहानी घाट के दर्शन प्राप्त होजाते हैं। इस क़िस्म के दर्शन से कमर हिम्मत बँधकर वह इस क़ाबिल बन जाता है कि आसानी से आकाश-मार्ग पर चलता हुआ

सच्चे कुल मालिक के दरबार तक रसाई हासिल करे और एक दिन अमर व अविनाशी गति को प्राप्त हो । भगवद्गीता में एक जगह पर यह मज़्मून निहायत ख़ूबसूरती के साथ बयान किया गया है। फ़र्माया है:—

"ऐ अर्जुन ! सब द्रव्यों यानी पदार्थों के यज्ञों की निस्बत ज्ञान का यज्ञ श्रेष्ठ है क्योंकि जितने भी कर्म किये जाते हैं उन सबका फल या परिणाम ज्ञान ही होता है। यह ज्ञान तू गुरु के चरणों में गिरकर यानी उनका दीन शिष्य बनकर, उनसे प्रश्न पूछकर यानी जिज्ञासु होकर और उनकी सेवा करके हासिल कर। तत्त्वदर्शी यानी आत्मज्ञानी गुरु तुझको वह ज्ञान उपदेश करेंगे" (भगवद्गीता अध्याय ४ श्लोक ३३ व ३४।)

भगवद्गीता को आम तौर पर हिन्दू भाई पञ्चम वेद मानते हैं और रामायण से उतरकर हिन्दुस्तान में जिस पवित्र पुस्तक का सबसे ज़्यादा प्रचार है वह भगवद्गीता ही है। अगर इस पवित्र पुस्तक में श्रद्धा रखने वाले भाई इन श्लोकों के अर्थ पर तवज्जुह दें तो उन्हें साफ़ मालूम होगा कि और सब यज्ञों के मुक़ाबिले, जिनमें हिन्दू भाई बड़ी श्रद्धा रखते हैं, ज्ञान का यज्ञ सबसे श्रेष्ठ है और उनके लिये मुनासिब है कि आग जलाकर उसमें घी व दूसरी सामग्री होम करने के बजाय ज्ञानयज्ञ के रचने का इन्तिज़ाम करें और हस्बफ़र्मान कृष्ण महाराज के यह ज्ञान किसी तत्त्वदर्शी गुरु के चरणों में गिरकर और उनकी सेवा करके हासिल करें। ज़ाहिर है कि कृष्ण महाराज की इस हिदायत पर वही अमल कर सकता है जिसको ज़िन्दा और सच्चे तत्त्वदर्शी गुरु मिलें।

ज़रा सा निष्पक्ष ग़ौर करने पर मालूम होगा कि गुरुभक्ति के मुतअल्लिक़ सन्तमत और कृष्ण महाराज की तालीम बिल्कुल एक है और इसलिये अगर सन्तमत में सब देवी देवताओं की पूजा, यज्ञ कर्मों और वेदादि शास्त्रों की परस्तिश से हटाकर ज़िन्दा और पूरे गुरु की तलाश के लिये ज़ोर दिया जाता है तो यह तालीम हिन्दू भाइयों को हिन्दू मज़हब से हटाने वाली नहीं है बल्कि उन्हें उनके बुज़ुर्गों के बतलाये हुए रास्ते पर, जिससे वे अब कोसों दूर पड़ गये हैं, दोबारा डालने वाली है।

यह बयान पढ़कर बाज़ भाई, जो सन्तमत की तालीम से पूरी वाक़फ़ियत नहीं रखते, कह सकते हैं कि हम तसलीम करते हैं कि ज़िन्दा व सच्चे गुरु की तलाश करनी चाहिये लेकिन ख़ुद राधास्वामीमत के लोग भी तो सच्चे गुरु की तलाश नहीं करते। राधास्वामीमत में जो महापुरुष गुरू माने जाते हैं हरचन्द उनकी रहनी गहनी बहुत अच्छी थी लेकिन जबकि उन्होंने वेदादि शास्त्र नहीं पढ़े और उनको संस्कृत विद्या पर अधिकार हासिल नहीं था तो वे कैसे गुरुपदवी के अधिकारी हो सकते हैं वग़ैरह वग़ैरह।

वाज़ह हो कि एतराज़ करने वालों का यह ख़्याल कि बिला वेदादि शास्त्र पढ़े और संस्कृत विद्या पर अधिकार हासिल किये कोई पुरुष गुरुपदवी का अधिकारी नहीं हो सकता, बिल्कुल व्यर्थ है। यह एतराज़ ज़्यादातर वे भाई करते हैं जिन्होंने ख़ुद वेदादि शास्त्रों को तो पढ़ा नहीं लेकिन अपने दिल में प्राचीन पवित्र पुस्तकों की निस्बत अजीब व ग़रीब ख़्यालात रखते हैं। अगर ये भाई ज़रा तकलीफ़ उठाकर ख़ुद वेदादि शास्त्रों का मुताला

करें तो उनका यह एतराज़ आप से आप दूर हो जावे। उपनिषदों में जाबजा सच्चे गुरू की ज़रूरत व तलाश के लिये हिदायत फ़माई गई है। चुनाँचे कठोपनिषद् में एक जगह पर आता है:—

"उठो, जागो और चुने हुए गुरुओं से उपदेश हासिल करो। विद्वान् यानी ऋषि लोग कहते हैं कि वह रास्ता छुरे की धार सा तेज़ है और चलने के लिये कठिन और दुर्गम है।"

अलावा इसके मनुस्मृति के दूसरे अध्याय में गुरु की महिमा व सेवा के मुतअल्लिक़ मुफ़स्सिल हिदायतें दर्ज हैं। लिखा है—"जो शिष्य शरीर की समाप्ति यानी मरने तक गुरु की सेवा करता है वह ब्रह्म के अविनाशी स्थान में प्राप्त होता है यानी मरने के बाद ब्रह्म में लीन हो जाता है।" (श्लोक २४४)

"देह में बटना मलना, स्नान कराना, जूठा भोजन करना और पैरों का धोना इतनी बातें गुरु के पुत्र की न करे, सिर्फ़ गुरु ही की करे।" (श्लोक २०६)

इसके अलावा भगवद्गीता के दूसरे अध्याय में बयान फ़रमाया गया है:—

"वेदों का विषय तीन गुण हैं यानी वेदों में तीन गुणों का अर्थात् सत्, रज, तम की जहाँ तक पहुँच है, उपदेश है। ऐ अर्जुन! तू तीन गुणों की हद से पार हो और द्वन्द्वों से परे हो और नित्य यानी सदा क़ायम रहने वाली वस्तु में स्थित हो, प्राप्त और अप्राप्त वस्तुओं से लापरवा हो और आत्मवान् हो। (श्लोक ४५)

ज्ञानी ब्रह्मवित् पुरुष के लिये सारे वेद इतने ही कारआमद हैं

जितना कि किसी जल से भरपूर जगह में पानी का एक गढ़ा मुफ़ीद हो सकता है यानी जैसे समुद्र के सामने पानी का एक गढ़ा कोई हैसियत नहीं रखता ऐसे ही ज्ञानी पुरुष के सामने वेदों में बयान किया हुआ ज्ञान कोई वक़अत नहीं रखता। (श्लोक ४६)

इसके अलावा ग्यारहवें अध्याय में फ़रमाया है:—

"ऐ कौरवों में श्रेष्ठ! (अर्जुन!) न वेदों से, न यज्ञों से, न पढ़ने पढ़ाने से, न दानों से, न कर्मों से और न उग्र तप से इस नरलोक में (जिसमें मनुष्य बसते हैं) तुम्हारे सिवा कोई मेरा इस प्रकार का स्वरूप देख सकता है। (श्लोक ४८)

ऐ अर्जुन! मेरी कृपा से तुझे इस रूप का दर्शन हासिल हुआ है, वग़ैरह वग़ैरह। (श्लोक ४७)

इन सब प्रमाणों पर ग़ौर करने से अन्दाज़ा लगाया जासकता है कि एतराज़ करने वालों के इस बयान में किस क़दर जान है कि बिला वेदादि शास्त्र पढ़े कोई शख़्स गुरुपदवी का अधिकारी ही नहीं हो सकता और नीज़ समझ सकते हैं कि ब्रह्मज्ञानी यानी सच्चे गुरू के मुक़ाबिले वेदों की क्या हैसियत है और हमारे भूले भाई, जिनका दिल वेदादि शास्त्रों और संस्कृत विद्या की मोहब्बत से भरपूर है और जो बजाय सच्चे गुरू की तलाश के अपना वक़्त पुस्तकों के पढ़ने और प्राचीन ग्रन्थों की महिमा गाने में सर्फ़ करते हैं, हक़ कहाँतक सच्चाई के पक्ष पर हैं।

बचन (५४)

सत्सङ्ग की शिक्षा की श्रेष्ठता ।

विलायत के अख़बार 'पॉपुलर पिक्टोरियल' में एक लेखक ने, जिसको सोशल मज़ामीन से गहरी वाक़फ़ियत है, इंग्लिस्तान के बेरोज़-गारों के मुतअल्लिक़ एक हृदयविदारक लेख लिखा है। सरकारी मनुष्य-गणना से मालूम हुआ है कि इस वक़्त बारह लाख से ऊपर मर्द व औरत इंग्लिस्तान में बेरोज़गार बैठे हैं जिनके ज़िम्मे औसतन् तीन तीन ख़ान्दान के मेम्बरों की परवरिश का बोझ है। इस हिसाब से क़रीबन् पचास लाख आदमी बेकार व बेरोज़गार जैसे तैसे दिन काटते हैं। सरकार की तरफ़ से इन मुसीबतज़दगान् की इम्दाद के लिये बहुत कुछ इन्तिज़ाम है लेकिन सरकार इस क़िस्म की आबादी को कैसे ख़ुशहाल रख सकती है। ये बेचारे जैसे तैसे ज़िन्दगी बसर करते हैं और बक़ौले कि–'भूखा आदमी क्या क्या पाप नहीं करता' क़िस्म क़िस्म की बदियों की तरफ़ मुख़ातिब होते हैं। लेखक का बयान है कि इन बेकारों व बेरोज़गारों के अलावा विलायत में पचास लाख ऐसे और मर्द व औरत हैं जो बरसर रोज़गार हैं लेकिन जिनकी आमदनी उनके व उनके सम्बन्धियों के पेट भरने के लिये क़तई नाकाफ़ी है। मालिक की अजब शान है कि उसी इंग्लिस्तान में एक तरफ़ तो आस्मान तक पहुँचे हुए महलात और नाच रंग की मह-फ़िलें गरम करने के लिये आलीशान मकानात और भोग विलास के सामान क़सरत से मौजूद हैं और दूसरी तरफ़ एक करोड़ आदमी पेट से पत्थर बाँधकर दिन पूरे कर रहे हैं। हिन्दुस्तान के अन्दर तबाही व

ग़रीबी की वजह तो आपस की फूट बयान की जाती है लेकिन इन एक करोड़ दुखियाओं के सिर पर तबाही क्यों आई? अंग्रेज़ी कौम, जिसके संगठन की उपमा मिस्री के कूज़े से दी जाती है और जिसकी हुकूमत का झण्डा दुनिया के हर मुल्क के ऊपर लहराता है, इस क़ाबिल नहीं है कि अपने एक करोड़ बच्चों को मुफ़लिसी व बेकारी के पञ्जे से छुड़ा सके। हमारी राय में इस ज़बरदस्त तबाही का कारण अंग्रेज़ी कौम के दिल में दुनिया की मुहब्बत और मन की ग़ुलामी है। यूरोपियन अवाम ने अपनी ज़िन्दगी का आदर्श दुनियवी ऐश और चमक दमक के सामान का जमा करना बना रक्खा है और क्या मर्द, क्या औरत, सबके सब दीवानावार दुनियवी सामान के लिये दौड़ रहे हैं। ये एक करोड़ बेकार मर्द व औरत वे हैं जो दौड़ में पीछे रह गये हैं। लेखक की राय है कि इंगिलस्तान के माथे से यह स्याही का धब्बा सिर्फ़ इसी तरीक़े से मिटाया जा सकता है कि इंगिलस्तान की अशियाएखुरदनी के लिये ग़ैरमुल्कों की मण्डियाँ क़ाबू की जावें यानी इंगिलस्तान की बनी चीज़ों की बिक्री ग़ैरमुल्कों में ज़्यादा ज़ोर व शोर के साथ हो। इसके अलावा उसकी राय है कि हर मर्द व औरत को मजबूर किया जावे कि वह कोई न कोई काम करे और किसी तन्दुरुस्त मर्द व औरत को ख़ाली बैठे गुज़ारा न दिया जावे। जो लोग कारख़ानों या दफ़्तरों में काम न कर सकें यानी जो बढ़िया काम करने के नाक़ाबिल हों उन्हें घरों के अन्दर ख़िदमतगारी के काम सीखने व करने के लिये मजबूर किया जाय और जो लोग अपने तई पढ़े लिखे व शरीफ़ ख़्याल करके इस क़िस्म के कामों से इन्कार करें उनकी हिमाक़त जैसे तैसे दिल से दूर कराई जाय। जो वाक़ई शरीफ़ इन्सान हैं उन्हें हक़ व हलाल की कमाई

हासिल करने के लिये कोई भी काम करने में शर्म नहीं होती। सैकड़ों अमीरज़ादे जीविका के लिये बखुशी मुहक्मा रेलवे में इञ्जनड्राइवरी कर रहे हैं और खुश हैं कि वे अपनी और अपने सम्बन्धियों की परवरिश के लिये मुल्क, क़ौम या रिश्तेदारों के सिर बोझ नहीं डाल रहे हैं, फिर मामूली हैसियत के मर्द व औरतों का ख़िदमतगारी के कामों को हतक-आमेज़ कहकर बेकार रहना और अपनी जीविका का टैक्सदेहन्दगान के सिर बोझ डालना कैसे जायज़ व दुरुस्त हो सकता है।

इंग्लिस्तान के नेता अपने भाई व बहनों के लिये तो ये तजवीज़ें निकाल रहे हैं कि ग़ैरमुल्कों की तिजारती मण्डियाँ क़ाबू करके इंग्लिस्तान की तिजारत को तरक़्क़ी दी जाय और जहाँ जहाँ अंग्रेज़ों का राज्य या अधिकार है बराबर इस सिल्सिले में सिरतोड़ कोशिशें हो रही हैं लेकिन मुल्के हिन्दुस्तान में यहाँ के दुखियाओं की मदद का ख़्याल किसी को नहीं आता। हर साल हज़ारों नौजवान हरसूबे में इम्तिहान पास करते हैं और हज़ारों नौजवान कुल मुल्क में डिगरियाँ हासिल करते हैं लेकिन मुश्किल से दो सौ चार सौ खुशक़िस्मत सरकारी नौकरियाँ हासिल कर पाते हैं और बाक़ी तादाद महज़ नौकरी के लिये अर्ज़ियाँ भेजकर दिन काटती है। अमीर लोग दिन बदिन ग़रीब हो रहे हैं। ज़मींदार क़ाश्तकार और काश्तकार मज़दूर बन रहे हैं। न लोगों को पेटभर खाना मिलता है और न आँख भर सोना मिलता है। अपना व सम्बन्धियों का पेट भरने और बच्चों को तालीम दिलाने की फ़िक्र हरदम सिर पर सवार है। जिससे पूछो काफ़ी रक़म क़र्ज़े की अपने सिर बतलाता है, जिसे देखो चेहरा ज़र्द है और अनेक बीमारियों का शिकार

है। जिस किसी ने सरसरी नज़र से भी हिन्दुस्तानियों की आर्थिक दशा पर विचार किया है उसकी ज़बान से यही शब्द निकलते हैं कि मौजूदा ज़माने में हिन्दुस्तान की किश्ती भँवर में फँसी है । अगर वह समर्थ मालिक, जिसके सभी जीव बच्चे हैं, इस वक़्त हिन्दुस्तान की जानिब खास तवज्जुह फ़रमावें तभी इसका बचाव मुमकिन है। पिछले ज़माने के बुज़ुर्गों ने हिन्दुस्तानियों के लिये त्याग का आदर्श रक्खा लेकिन अवाम ने बुज़ुर्गों का असली भाव न समझते हुए आलस्य और सुस्ती में दिन काटना और दूसरों के सिर ज़िन्दगी बसर करना अपना आदर्श बना लिया और बरखिलाफ़ इसके, जैसा कि ऊपर बयान किया गया, पश्चिमी लोगों ने संसार में फैलना और पसरना अपनी ज़िन्दगी का आदर्श बनाकर खुद अपने कमज़ोर व दौड़ के नाक़ाबिल भाइयों, बहनों व नीज़ मुल्के हिन्दुस्तान के आरामतलब बाशिन्दों के लिये सख़्त कशमकश की सूरत पैदा करदी। सत्सङ्ग की तालीम यह है कि हर सत्सङ्गी भाई व बहन के लिये मुनासिब है कि अपने पसीने की कमाई से अपना पेट भरे और कोई भाई व बहन दूसरों के ज़िम्मे व नीज़ सत्सङ्ग के ज़िम्मे अपना बोझ न डाले और हुज़ूर राधास्वामी दयाल के दर्शन की प्राप्ति अपनी ज़िन्दगी का असली उद्देश्य क़ायम करे। ज़रा गौर करने से आसानी से समझ में आजायगा कि इन दो बातों पर अमल करने से न सिर्फ़ सत्सङ्ग-मण्डली के गुज़ारे के लिये शानदार नतीजे पैदा होंगे बल्कि उदाहरण क़ायम होकर हिन्दुस्तान और दूसरे मुल्कों के बाशिन्दों के लिये सबक़ होगा कि इन हिदायतों पर अमल कर के बेकारी व मुफ़लिसी के पञ्जे से छुटकारा हासिल करें। नीज़ मालूम होगा कि आर्थिक ज़रूरतों के

मुतअल्लिक़ सत्सङ्ग की तालीम व विलायती अखबार के लेखक के विचारों में कैसी ज़बरदस्त मुशाबहत है।

बचन (५५)

प्रेमी जनों के लिये यह वक़्त साधन करने का है।

मौसिम बरसात में जब बारिश हो जाने से ज़मीन ठण्डी हो जाती है तो सबके सब किसान खुशी खुशी अपने हल व बैलों की जोड़ियाँ लेकर खेतों में पहुँचते हैं और सुबह से शाम तक, चाहे मूसलधार बारिश हो, चाहे चमड़ी को झुलस देने वाली धूप पड़े, पिल कर काम करते हैं। भादों महीने की धूप और भाप की वजह से हर साल अस्सी फ़ीसदी किसान मलेरिया बुख़ार से बीमार हो जाते हैं और अर्से तक चारपाई या ज़मीन पर लेटे हुए एड़ियाँ रगड़ते हैं लेकिन आयन्दा बीज बोने का वक़्त आते ही फिर कमर बाँधकर मेहनत करने के लिये तैयार हो जाते हैं। सख़्त धूप या बारिश के अन्दर काम करते देखकर अगर कोई शख़्स उनके साथ हमदर्दी करे और तर्ग़ीब दे कि ये लोग काम छोड़कर साये में आ बैठें और धूप व बारिश के असर से अपनेतईं बचाएँ तो बिला-शुबह हर किसान की ज़बान से यही जवाब सुनने में आवेगा कि यह वक़्त उनके काम करने का है। इन महीनों का किया हुआ काम साल भर के आराम के सामान मुहय्या करेगा और इस वक़्त की आरामतलबी साल भर के लिये बायसे तकलीफ़ होगी। यह जवाब किसानों की ज़बान पर इस-लिये आता है कि वे जानते हैं कि ख़ास मौक़ों पर जुताई व बीज बोने से फ़स्लें पैदा होती हैं। इन ख़ास मौक़ों को छोड़कर खेती करने से सिवाय

घास फूस के और कुछ पैदा नहीं होता। काश सच्चे परमार्थ के तलबगार किसानों की इस दूरअन्देशी से सबक़ हासिल करें। हर कोई जानता है कि मन का हाल सदा यकसाँ नहीं रहता। जिस्मानी तन्दुरुस्ती में फ़र्क़ आने या हालात गिर्दो पेश में ख़िलाफ़ उम्मीद तब्दीली होने से हर शख़्स का मन दुखी हो जाता है और जिस्म के अन्दर साफ़ ख़ून के काफ़ी मिक़दार में दौड़ने और उम्मीद व क़यास से बढ़कर दिलपसन्द हालतें प्रकट होने से मन का दुनिया की जानिब बहाव ग़ैरमामूली तुन्दी व तेज़ी के साथ होने लगता है। परमार्थ के शौक़ीन ख़ूब समझते हैं कि रञ्ज व जोश की ग़ैरमामूली हालतें रूहानी साधनों की कमाई के लिये नामौज़ूं हैं। रूहानी साधनों की कमाई तभी मुमकिन है जब मन को किसी क़दर स्थिरता हासिल हो और मन को स्थिरता सिर्फ़ ऐसे ज़माने में रहती है जब औसत दर्जे की तन्दुरुस्ती और बेफ़िक्री हासिल रहते हुए परमार्थी के दिल में सच्चे मालिक के लिये प्रेम व प्रीति के ख़्यालात का ग़लबा हो इस-लिये जबतक किसी प्रेमी परमार्थी के दिल में प्रेम प्रीति के ख़्यालात क़ायम हैं और उनकी वजह से उसके मन को किसी क़दर स्थिरता प्राप्त है यही वक़्त उसके वास्ते रूहानी साधनों की कमाई के लिये मौज़ूं है और अगर परमार्थी ज़रा होशियारी व समझ बूझ से काम ले तो ऐसे समय में साधन की कमाई करके जन्मों का सफ़र बरसों में और बरसों का काम दिनों में अञ्जाम दे सकता है। लेकिन बरख़िलाफ़ इसके देखने में यह आता है कि ऐसी अवस्था प्राप्त होने पर अक्सर परमार्थी ख़्याल करने लगते हैं कि अब साधन करने की क्या जरूरत है, अब तो मन के अन्दर कोई विकारी अङ्ग पैदा नहीं होते और दुनिया के सामान के लिये ज़्यादा ख़्वाहिश

भी नहीं उठती और श्रद्धा व भक्ति के बादल कम व बेश हरदम हृदयाकाश में छाये रहते हैं। अब एकान्त में बैठकर अभ्यास करने की क्या ज़रूरत है ? कुल मालिक ने अति दया करके ये सब सामान आराम व आसायश के मुहय्या किये हैं, उन्हें छोड़कर मन व तन की रगड़ में लगना बेमसरफ़ होगा। नतीजा यह होता है कि थोड़े ही अर्से के बाद जिस्मानी तन्दुरुस्ती या हालातें गिर्दोपेश में फ़र्क़ आ जाने पर श्रद्धा व भक्ति के बादल ग़ायब हो जाते हैं और जिस्मानी या दुनियवी ख़्वाहिशों की गरम लू चलने लगती है और उस वक़्त सिवाय हाथ मलने और पछताने के कोई चारा नहीं रह जाता।

बचन (५६)

सत्सङ्गी भाइयों व बहनों की अहम ज़िम्मेवारी।

सत्सङ्गी भाई आम तौर पर यह ख़्याल करके ख़ुश होते हैं कि दया से उन्हें सहज में सत्सङ्ग की शिक्षा समझ में आ गई और उनकी तबिअत ने हुज़ूर राधास्वामी दयाल की चरणशरण धारण करना मंजूर कर लिया। अक्सर भाई अपना भाग्य सराहते हैं कि बिला ख़ास कोशिश करने या पिछले ज़माने की सी काष्ठा झेलने के उन्हें ऐसी बड़ी दौलत हासिल हो गई। सत्सङ्गी भाइयों का इस क़िस्म के ख़्यालात दिल में उठाकर ख़ुश होना या तसल्ली हासिल करना किसी तरह बेजा नहीं है लेकिन बहुत ही कम भाई ऐसे मिलते हैं जिनको ज्ञान इस बात का है कि इस दया व बख़्शिश की प्राप्ति के सङ्ग सङ्ग कैसी

ज़बरदस्त व अहम ज़िम्मेवारी उनके सिर पर है। ग़ौर का मुक़ाम है कि अगर वाक़ई हुज़ूर राधास्वामी दयाल कोई इन्सान या महदूद शक्ति नहीं हैं बल्कि परम चेतनशक्ति के निज भण्डार और कुल जगत् के आदि कारण व सच्चे माता पिता हैं और सभी जीव—क्या इन्सान, क्या हैवान, जो इस संसार में विचर रहे हैं, उन्हीं परम दयाल के बच्चे हैं और उन परम दयाल ने सन्तमत का प्रकाश इस संसार में जीवों के कल्याण ही की ग़रज़ से किया है तो यह मानना होगा कि एक दिन हुज़ूर राधास्वामी दयाल का परम पवित्र सन्देश मनुष्यमात्र के कानों तक पहुँचेगा यानी उन दयाल की तरफ़ से यह इन्तिज़ाम होगा कि हरमुल्क व हरक़ौम के बड़े व छोटे सभी लोग सन्तमत की तालीम से लाभ उठा सकें और ज़ाहिर है कि तमाम दुनिया की तवज्जुह सन्तमत की आला तालीम की जानिब मुख़ातिब करना और सन्तमत के उच्च आदर्श को मनवाना कोई आसान काम नहीं है। मुख़्तलिफ़ क़ौमें मुख़्तलिफ़ आदर्श रखती हैं और उनके दिल में मुख़्तलिफ़ ख़्यालात के लिये पच्च मौजूद है और वे ख़्यालात ऐसे हैं जो पुश्तहा पुश्त से उन क़ौमों के अन्दर चले आये हैं और जिनसे ख़ुद उन लोगों को बहुत कुछ तसल्ली और दीनी व दुनियवी तकलीफ़ों के दूर करने में मदद मिली है। ऐसी सूरत में वे लोग कैसे अपने आदर्श व ख़्यालात में तब्दीली करने के लिये रज़ामन्द हो सकते हैं। इसलिये यह नतीजा निकालना बेजा न होगा कि जिन प्रेमी भाइयों को इस वक़्त हुज़ूर राधास्वामी दयाल की चरणशरण हासिल है और जिनके दिल में सन्तमत की तालीम ने घर कर लिया है उनके सिर पर निहायत ज़बर-

दुरुस्त व अहम ज़िम्मेवारी आती है कि वे अपनी अमली ज़िन्दगी से दिखलायें कि सन्तमत के आदर्श व तालीम क़बूल करके उसपर चलने से उनकी ज़िन्दगी में उत्तम व प्रकट परिवर्तन हुआ है। यानी हम लोगों की रहनी गहनी, हमारे इन्तिज़ामात और हमारी संस्थाएँ इस क़िस्म की हों कि उनके अन्दर वे दोष और कमज़ोरियाँ, जिनकी वजह से दूसरी जमाअतें व क़ौमें आमतौर पर परेशान हैं, देखने में न आवें और हम लोगों की जमाअत अपनी माली, तालीमी, इन्तिज़ामी और रूहानी ज़रूरतों को ऐसी ख़ूबी व ख़ूबसूरती के साथ सरअंजाम दे कि दूसरे लोग और दूसरी क़ौमें हमारी रहनी गहनी का अपनी रहनी गहनी से मुक़ाबिला करके हमें बेहतर पायें और हमें बेहतर पाकर उनके दिल में शौक़ व जिज्ञासा हमारी इस कामयाबी का रहस्य दर्याफ़्त करने के लिये पैदा हो और जब वे हमारी चाल ढाल व संस्थाओं वग़ैरह का हाल दर्याफ़्त करने के लिये हमारे पास आयें तो हम उनके साथ स्वाभाविक तौर पर ऐसा अच्छा बर्ताव करें कि उन्हें यह प्रतीत हो कि हमारे दिल में उनके लिये पूरी जगह है और भूगोल की सीमा ने उन्हें हमारे दिल से दूर नहीं किया है। उनको यह मालूम हो कि सन्तमत की तालीम के असर से हम दूसरी ही क़िस्म के इन्सान बन गये हैं और न सिर्फ़ हम ख़ुद आला दर्जे की ज़िन्दगी बसर करते हैं बल्कि औरों को भी सुखी करने की फ़िक्र रखते हैं और हमारे दर्वाज़े हर क़ौम व मज़हब के जिज्ञासुओं के लिये हरवक़्त खुले हैं। सत्सङ्गी जमाअत के अन्दर आमतौर पर इस क़िस्म की बातें देखने पर क़ुदरतन् जिज्ञासुओं के दिल पर असर होगा कि ज़रूर कोई ग़ैरमामूली शक्ति हमारी जमाअत के अन्दर काम कर रही है

और जब उन्हें इल्म होगा कि वह शक्ति हुज़ूर राधास्वामी दयाल की दयाधार है तो अज़खुद उन्हें राधास्वामी दयाल और उनकी दयाधार का हाल जानने के लिये शौक़ पैदा होगा जिसके लिये उन्हें चार नाचार सन्तमत की तालीम में गहरा ग़ोता मारना होगा और ख़्यालात में तब्दीली होने पर वे बिला किसी क़िस्म के जब्र या लोभ के हमारे साथ भाईचारे का रिश्ता क़ायम करने के लिये तैयार होंगे।

ये बातें कहने और सुनने के लिये तो निहायत आसान हैं लेकिन अमल में लानी आसान नहीं हैं। हमारी रहनी गहनी में इच्छानुसार तब्दीली तभी हो सकती है जब हमारे दिल में संसार की जानिब से किसी क़दर सच्चा वैराग्य और हुज़ूर राधास्वामी दयाल के चरणों में सच्चा अनुराग आ जावे। जिस सत्सङ्गी भाई का हृदय इस वैराग्य और अनुराग से ख़ाली है उसकी रहनी गहनी आम दुनियादारों से किसी हालत में बेहतर नहीं हो सकती। ये वैराग्य व अनुराग कैसे पैदा हों? ख़ास क़िस्म के संस्कारों से। ख़ास क़िस्म के संस्कार कैसे हासिल हों? इसके लिये चेतकर सत्सङ्ग करना ही अकेला इलाज है। यह दुरुस्त है कि कामिलों, बुज़ुर्गों व प्रेमीजनों के रचित ग्रन्थों को पढ़ने और संसार में दुख सुख की ठोकरें खाने से भी इन्सान की समझ बूझ में बहुत कुछ तब्दीली होती है नीज़ ऐतिहासिक ग्रन्थों के पढ़ने, दुनिया की हालतों का मुशाहिदा करने और जवानी का दौर ख़त्म होकर अधेड़ अवस्था आने पर भी इन्सान के ख़्यालात बदल जाते हैं लेकिन जिस दर्जे का वैराग्य और जिस क़िस्म का अनुराग परमार्थी रहनी गहनी हासिल होने के लिये दरकार है वह इस तरीक़े से हासिल नहीं होता। योगदर्शन

में फ़रमाया गया है कि प्रत्यक् चेतन यानी आत्मदर्शन हासिल होने पर "पर वैराग्य" की प्राप्ति होती है। जिन महापुरुषों को आत्मदर्शन प्राप्त होकर पर वैराग्य हासिल हुआ है उनके चरणों में हाज़िरी देने, उनके अमृतवचनों व रहनी गहनी का असर लेने और उनकी दयादृष्टि व सहायता से जो संस्कार पैदा होते हैं वे और ही क़िस्म के होते हैं इसलिये सत्सङ्गी भाइयों पर फ़र्ज़ है कि जब दया से हुज़ूर राधास्वामी दयाल अपने चरणों की नज़दीकी इनायत फ़रमायें यानी उन्हें सत्सङ्ग में शामिल होने के लिये मौक़ा व सहूलियत बख़्शें तो वे उसका पूरा फ़ायदा उठायें और इस तरीक़े से चेतकर सत्सङ्ग करें कि उन्हें सत्सङ्ग का पूरा फ़ायदा हासिल हो और वे ख़ास संस्कार, जिनकी महिमा ऊपर बयान की गई, उन्हें भरपूर हासिल हों और कुछ अर्सा इस तरह सत्सङ्ग का असर लेकर सत्सङ्गी भाई अपनी हालत पर दृष्टि डालें और देखें आया उनकी रहनी गहनी में कोई ख़ुशगवार तब्दीली हुई है या नहीं। अगर हुज़ूर राधास्वामी दयाल हम जीवों को अपने चरणों की नज़दीकी का शुभ अवसर बख़्शिश फ़रमाते रहें और सत्सङ्गी भाई व बहनें इस तरह अमल करते रहें और इस तरह हमारे अन्दर तब्दीलियाँ वाक़ै हों तभी सत्सङ्ग का दुनिया में क़ायम होना और हमारा हुज़ूर राधास्वामी दयाल की चरणशरण लेना सफल हो सकता है और तभी सर्व साधारण की तवज्जुह सत्सङ्ग की तालीम और आदर्श की जानिब मुख़ातिब हो सकती है और तभी वह अहम ज़िम्मेवारी, जो औरों से पहले हुज़ूर राधास्वामी दयाल की चरण शरण मिलने की वजह से हम पर आयद होती है, पूरे तौर से व हुज़ूर राधास्वामी दयाल की मर्ज़ी के मुवाफ़िक़ अदा हो सकती है।

बचन (५७)

दुनिया के रूप रंग के धोखे से बचो।

इन्सान की आदत है कि किसी नई चीज़ के प्राप्त होने पर अव्वल उसे आज़माता है और मुफ़ीद साबित होने पर उसको बारहा इस्तेमाल करता है और कुछ अर्से बाद उसके मुतअल्लिक़ नई ईजादें करके नये इस्तेमाल निकालता है। मसलन् इन्सान ने शुरू में गाय से दूध हासिल किया और रफ़्ता रफ़्ता दूध से दही बनाना, मक्खन निकालना, पनीर व मिठाइयाँ तैयार करना और घी निकालना शुरू किया। जब किसी चीज़ के क़िस्म क़िस्म के इस्तेमाल निकल आते हैं तो क़ुदरतन् उस चीज़ की दुनिया में माँग बहुत ज़्यादा बढ़ जाती है और माँग ज़्यादा और पहुँच कम होने पर चीज़ की क़ीमत में बहुत बढ़ती हो जाती है। ऐसे मौक़े पर इन्सान क़ीमत सस्ती करने के लिये उस चीज़ में तरह तरह की मिलावटें करने लगता है या कम क़ीमत वाले नक़लें तैयार करके नफ़ा कमाता है। नतीजा यह होता है कि कुछ अर्से बाद मिलावटी व नक़ली चीज़ों का इस्तेमाल बड़े पैमाने पर होने लगता है और बजाय उस नफ़े के, जिसका असल चीज़ से तअल्लुक़ था, तरह तरह के नुक़सान ज़ाहिर होते हैं और हज़ारों लाखों इन्सान धोखा खाकर बजाय नफ़े के नुक़सान उठाते हैं। वाज़ह हो कि इन्सान ने परमार्थ के सिल्सिले में भी इसी क़िस्म की मिलावटें करके सच्चे परमार्थ का मटियामेल कर दिया है जिसकी वजह से लाखों करोड़ों इन्सान परमार्थ में श्रद्धा रखते हुए और अपनी जानिब से परमार्थ के लिये हाथ पाँव मारते हुए न सिर्फ़ परमार्थ के असली फ़ायदे से महरूम हैं

बल्कि निहायत परेशान और परागन्दादिल हैं और लुत्फ़ यह है कि आला दर्जे की क़ाबिलियत व समझ बूझ वाले असहाब तक इन ग़लतियों व कमज़ोरियों के कारण खुद अपना और अपने श्रद्धालुओं का भारी नुक़सान कर रहे हैं। चुनाँचे इस ज़माने में बाज़ भाई यह प्रचार करते सुनाई देते हैं कि न कहीं स्वर्ग है, न बहिश्त, सच्चा सुख इसी पृथ्वी पर हासिल हो सकता है बशर्ते कि इन्सान अपनी आँखें खोल कर संसार में विचरे और पुराने ज़माने के ख़्यालात साध सन्त की तलाश, साधन व भजन बन्दगी वग़ैरह की बाबत छोड़कर दुनिया के सामान के अन्दर अपने प्रीतम व उपास्य की तलाश करे। उनका बयान है कि जिनके आँख है वे सूरज की चमक, फूल की रंगत मुलाहिज़ा करने या परिन्दों की चहचहाहट और बादलों की गड़गड़ाहट के सुनने ही से मोहित हो जाते हैं और उस अवस्था में जो आनन्द और प्रीतम से नज़दीकी उनको हासिल होती है उसका लुत्फ़ वही लोग जानते हैं। चुनाँचे कविसम्राट् रवीन्द्रनाथ टागोर साहब एक जगह फ़र्माते हैं—"छोड़ो इस भजन गाने, कीर्तन करने और माला फेरने को। किवाड़ बन्द करके मन्दिर के इस अन्धकारमय एकान्त में किसकी पूजा कर रहे हो? तुम आँखें खोलो और उनसे देखो—क्या तुम्हारा भगवन्त तुम्हारे सामने मौजूद नहीं है?" इसी तरह इङ्गलिस्तान का मशहूर कवि वर्डज़्वर्थ कहता है—"मौसमे बहार में जङ्गल का नज़ारा (दृश्य) देखने से तुमको इन्सान और नेकी व बदी की निस्बत ज़्यादा सबक़ मिल सकता है बनिस्बत इसके कि दुनिया के सबके सब महात्मा दे सकें।" क्या सचमुच दुनिया के दृश्य देखने से इन्सान को मालिक का दर्शन और अपने सच्चे

प्रीतम से मुलाक़ात हासिल हो जाती है ? लोगों ने अक्सर मौसमे बहार में जङ्गल का नज़ारा मुलाहिज़ा किया होगा और नीज़ मन्दिर के बाहर यानी खुले मैदान में आँखें पसार कर देखा होगा लेकिन क्या कोई कह सकता है कि इस तरीक़े से उसकी मालिक के दर्शन की प्यास बुझ गई या उसके दिल को यक़ीन और सब्र आ गया कि उसकी मुलाक़ात सच्चे प्रीतम के साथ होगई ? क्या मौसमे बहार में सब्ज़ी व फूलों की रंगत महज़ सूरज की किरणों के चमकने और फूलों व पत्तों के अन्दर ख़ास धातुओं की मौजूदगी का नतीजा नहीं है ? क्या दुनिया के सब सामान ख़ूबसूरत व बदसूरत पाँच तत्त्वों की मिलावट का नतीजा नहीं हैं ? क्या वह परमात्मा, जिसकी महिमा ऋषियों व मुनियों ने वर्णन की और वह खुदा, जिसके नूर व जमाल की प्रशंसा रसूलों व औलियाओं ने बयान की और वह सत्यपुरुष, जिसकी स्तुति सन्तों की अमृतबाणी के अन्दर दर्ज है, यही कुछ है जो सूरज की किरणों की मदद से, फूलों व पत्तों की रंगत की शक्ल में या परिन्दों की आवाज़ और बादलों की गरज की सूरत में हमारे तजरुबे में आता है ? हम दर्याफ़्त करते हैं कि जैसे मौसमे बहार में बाज़ दरख़्तों के फूल और पत्ते ख़ूबसूरत मालूम होते हैं ऐसे ही जवानी की हालत में बाज़ इन्सानों के जिस्म और चेहरे भी ख़ूबसूरत मालूम होते हैं, अगर कोई शख़्स किसी ख़ूबसूरत नौजवान के चेहरे या जिस्म को देखकर यह कहे कि मैंने उसकी आत्मा या रूह का दर्शन कर लिया है तो क्या उसका यह कहना सत्य होगा ? और अगर एक ख़ूबसूरत नौजवान की शक्ल देखकर उसकी रूह तो दरकिनार, उसके मन का भी पता नहीं लग सकता तो फूलों और पत्तों और पहाड़ों और दरियाओं को देखकर सच्चे

परमात्मा की असलियत का पता लगजाना और भी मुश्किल बल्कि नामुमकिन होना चाहिये। दुनिया के अन्दर बाहरी इश्क़ के सैकड़ों क़िस्से मशहूर हैं जिनसे मालूम होता है कि अनसमझ नौजवान ज़ाहिरी हुस्न के जाल में गिरफ़्तार होकर दीन व दुनिया दोनों से जाते रहते हैं। मौसमे बहार में फूलों व फलों की ख़ूबसूरती देखकर या पहाड़ों व दरियाओं व दूसरे प्राकृतिक दृश्यों से प्रेरित होकर जो मोह की अवस्था इन्सान के चित्त में व्यापती है वह भी बाहरी इश्क़ का दर्जा रखती है और जो इन्सान इस मोह की अवस्था में अपनी उम्र गुज़ारते हैं वे सख़्त ग़लती पर हैं। आत्मा व परमात्मा का दर्शन बग़ैर दिव्य चक्षु यानी रूहानी आँख खुलने के न किसी को हुआ है और न हो सकता है । इस दिव्य चक्षु के खोलने के लिये मुनासिब साधन करना ज़रूरी है। बिला मुनासिब साधन के हमारी चर्मेन्द्रियाँ भी बेकार रहती हैं इसलिये जो लोग रूहानी आँख जगाने के मुतअल्लिक़ साधन करने से हिचकते हैं और जगत् का तमाशा देखकर दिल बहलाते हैं और अवाम को समझाते हैं कि यही सच्चे मालिक का दर्शन है और यही असली सरूर है वे साफ़ अपनी और अपने श्रद्धालुओं की हानि करते हैं । हर शौक़ीन परमार्थी को कुछ अर्सा एकान्त में बैठकर अपनी रूहानी आँख जगाने के लिये मुनासिब साधन करना होगा और साधन की युक्तियाँ सीखने के लिये किसी कामिल या उस्ताद की तलाश करनी होगी । बिला इस ढँग के इख़्तियार किये न अबतक किसी परमार्थी की आशा पूर्ण हुई है और न हो।

———

वचन (५८)

बहादुरी व बर्दाश्त की हक़ीक़त।

अक्सर लोग ख़्याल करते हैं कि बिला पसोपेश किसी ख़तरे के काम में हाथ डाल देना बहादुरी है मगर यह सही नहीं है। जब तक किसी काम के लिये अपने में अधिकार या क़ाबिलियत न हो दूसरों की देखा देखी या औरों के कहने सुनने से किसी काम में हाथ डाल देना इख़लाक़ी कमज़ोरी है जो स्वार्थ व परमार्थ दोनों में हर्ज व नुक़्सान करती है। मगर अक्सर न सिर्फ़ मामूली इन्सान बल्कि बड़ी बड़ी जमाअतें व क़ौमें इस कमज़ोरी की वजह से सख़्त ज़ेरबार होती हैं। प्रेमी परमार्थियों को ऐसे मौक़े आने पर ज़ब्त से काम लेना चाहिये। अगर सत्सङ्गी भाई ख़्वाहिशमन्द हैं कि सत्सङ्ग का इन्तिज़ाम बड़े पैमाने पर हो और लाखों व करोड़ों जीवों को हुज़ूर राधास्वामी दयाल की शरण और तालीम से लाभ उठाने का मौक़ा मिले तो इसके लिये यह मुनासिब नहीं है कि और लोगों या जमाअतों की देखा देखी एकदम बड़ी ज़िम्मेवारियाँ अपने सिर लें बल्कि चाहिये कि अव्वल सत्सङ्गी भाई अपने अन्दर इस बड़ी सेवा के अंजाम देने के लिये काफ़ी क़ाबिलियत पैदा करें यानी अपने अन्दर मुनासिब शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक बल पैदा करें। बिच्छू का मन्त्र न जानते हुए साँप के बिल में हाथ डाल देना नादानी है। अगर इस बल के जगाने के लिये हमें कुछ मुद्दत सब्र करना पड़े तो कोई हर्ज नहीं। बड़े बड़े कामों के लिये बरसों की तयारी की ज़रूरत हुआ करती है। मुनासिब है कि हम किसी क़िस्म

की जल्दबाज़ी न करते हुए रफ़्ता रफ़्ता अपनी सब कमज़ोरियाँ व नामुनासिब आदतें व रस्में छोड़ते जावें और शारीरिक,मानसिक व आध्यात्मिक उन्नति के लिये जो जो हिदायतें हमें मिली हैं या आयन्दा मिलें उनपर कारबन्द होते हुए और जो जो इन्तिज़ामात क़ायम किये गये हैं या आयन्दा क़ायम किये जावें उनसे फ़ायदा उठाते हुए क़दम बढ़ाते चलें और हमेशा याद रक्खें कि अपनी कसरों व कमज़ोरियों से वाक़िफ़ होने पर उनके दूर करने की कोशिश में लगना बहादुरों का काम है। दोयम् मुनासिब है कि क़ाबिलियत या बल पैदा होने पर उसके हज़्म करने की कोशिश करें। मसल मशहूर है कि हाथी की सी ताक़त पैदा करलेना आसान है लेकिन उसका हाथी की तरह सोच समझकर इस्तेमाल करना आसान नहीं है। ऐसा न हो कि हम शेर की सी ताक़त या सुक़रात की सी दिमाग़ी लियाक़त पैदा करके अपने से कमज़ोर या नाक़ाबिल भाइयों को दिक़ करने लगें। शारीरिक,मानसिक व आध्यात्मिक बल काफ़ी मिक़दार में पैदा होजाने पर उसका ज़ब्त करना परले दर्जे के बहादुरों का काम है। सोयम् मुनासिब है कि ठीक मौक़ा आजाने पर हम बिला किसी पसोपेश के अपनी क़ाबिलियत का भरपूर इस्तेमाल करें और ऐसे मौक़े पर अगर ज़रूरत हो तो तन, मन और धन से इन्कार न किया जावे। वाज़ह हो कि इस तरह मुनासिब अधिकार पैदा करके दर्मियानी अर्से में ज़ब्त व सब्र से काम लेते हुए मुनासिब मौक़ा आजाने पर उसका भरपूर इस्तेमाल करना ही आदर्श बहादुरी है। इस सिल्सिले में एक और बात का ज़िक्र करदेना ज़रूरी मालूम होता है:—

आम तौर पर मशहूर है कि इन्सान के लिये बर्दाश्त से काम लेना बड़ी तारीफ़ की बात है और रोज़ाना बोलचाल में बर्दाश्त की ताक़त के लिहाज़ से ग़ैरजानदारों व जानदारों को अच्छा व बुरा कहा जाता है। चुनाँचे किसी मकान की बुनियाद की तारीफ़ इसीलिये की जाती है कि वह दीवारों का बोझ मज़बूती से बर्दाश्त करती है। दीवारें तभी मज़बूत व अच्छी कही जाती हैं जब वे छत का बोझ आसानी से बर्दाश्त करती हैं और छत की तभी तारीफ़ की जाती है जब वह बरसात, गर्मी व सर्दी वग़ैरह का असर बर्दाश्त करते हुए बदस्तूर क़ायम रहती है। इसी तरह बैल या घोड़ा वही अच्छा कहा जाता है जो दिन रात की मेहनत व मुशक़्क़त आसानी से बर्दाश्त करे और साधू फ़क़ीर वही अच्छे समझे जाते हैं जो नंगे भूखे रहकर गर्मी सर्दी व भूख प्यास की हद से ज़्यादा बर्दाश्त करें। मगर वाज़ह हो कि ग़ैरजानदार चीज़ों व हैवानों के उसूल पूरे पूरे इन्सानों पर आयद नहीं होते और सच्चे साध व महात्मा फ़क़त शरीर व मन के अन्दर इस क़िस्म की बर्दाश्त की ताक़त पैदा करने के लिये तपस्या नहीं करते। तपस्या करके ये अपने मन व इन्द्रियों को क़ाबू में लाते हैं ताकि पुरानी आदतों या शारीरिक व मानसिक कमज़ोरियों से मजबूर होकर मन व इन्द्रियाँ आध्यात्मिक शक्तियों के जगाने और सुरत के चढ़ाने में विघ्न न डाल सकें। इस बयान से यह मतलब नहीं है कि बर्दाश्त की ताक़त किसी जमाअत या क़ौम के लिये ग़ैरज़रूरी या ग़ैरमुफ़ीद है बल्कि मतलब यह है कि फ़क़त यह ताक़त पैदा कर लेना या हर मौक़े पर बर्दाश्त व क्षमा से काम लेना नाकाफ़ी व हानिकारक साबित होता है। एक दुश्मन आपके ऊपर हम्ला करता है आप शौक़ से बर्दाश्त

करें लेकिन कोई शख़्स आपके बच्चों या सम्बन्धियों पर हम्ला करता है या आपके बुज़ुर्गों की बेइज़्ज़ती करता है उस वक़्त आपका फ़क़त बर्दाश्त से काम लेना नाकाफ़ी व नामुनासिब होगा। यह दुरुस्त है कि अगर आप कमज़ोर व नाक़ाबिल हैं तो उस वक़्त आपके लिये चुप रह जाना ही मुफ़ीद है लेकिन अगर आप में काफ़ी ताक़त व क़ाबिलियत मौजूद हैं तो आपका चुप रहना और बर्दाश्त की महिमा के राग अला-पना सरासर ग़लत व नामुनासिब है। सच्चा सेवक व बहादुर प्रेमीजन वही है जो अपने अन्दर मुनासिब शारीरिक,मानसिक व आध्यात्मिक बल पैदा करता है और हस्बेमौक़ा बर्दाश्त से काम लेता है लेकिन हमेशा बर्दाश्त ही पर निर्भर नहीं रहता। कोई मौक़ा पड़ जाने पर उसके दिल में फ़ौरन् सवाल पैदा होता है कि इस वक़्त क्या करना चाहिये ? जिस शख़्स के अन्दर यह सवाल पैदा नहीं होता वह कायर या मुर्दा है। वह इन्सान कहलाने का हर्गिज़ अधिकारी नहीं है। किसी भी मुश्किल या कठिनाई के सामने आने पर प्रेमी बहादुर का दिल फ़ौरन् उत्तर देता है और दिमाग़ मुनासिब तजवीज़ें पेश करता है और मुनासिब ग़ौर व फ़िक्र के बाद प्रेमीजन की ज़ात से मुनासिब अमल ज़हूर में आता है। वाज़ह हो कि दुनिया के अन्दर ऐसे बहुत से बहादुर हैं जिनके दिल व दिमाग़ ऐसे मौक़ों पर हाज़िरजवाबी से पेश आते हैं लेकिन अक्सर औक़ात तंगदिली व कमहिम्मती से काम लिया जाता है क्योंकि हर शख़्स अपने लिये उच्च आदर्श नहीं रखता। अवाम की तवज्जुह इस ज़िन्दगी की तरक़्क़ी व भोग विलास ही में लगी है और उनकी प्राप्ति ही उनके लिये ज़िन्दगी का आदर्श है लेकिन प्रेमीजन से उम्मीद की जाती

है कि वह उदारता व उच्च साहस से काम ले। जो तजवीज़ें उसके दिल व दिमाग़ पेश करें वे सन्तों के सेवकों की शान के लायक़ होनी चाहियें। दूसरे लफ़्ज़ों में प्रेमीजनों के लिये तीन गुण दरकार हैं—अव्वल बर्दाश्त की ताक़त, दोयम् मौक़ा पड़ने पर दिल व दिमाग़ से मुनासिब तजावीज़ की समझ बूझ और तीसरे तजावीज़ पर ग़ौर करते वक़्त उच्च परमार्थी आदर्श की याद। ये तीन गुण रखते हुए अगर हम अपने शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक बल का इस्तेमाल करेंगे तो हमारे यत्न व कोशिश से दिल-पसन्द नतीजे ज़हूर में आवेंगे वरना सिवाय दुनिया की परेशानियों में तरक़्क़ी के कुछ हासिल न होगा।

सवाल हो सकता है कि वह उच्च परमार्थी आदर्श क्या है जिसकी निस्बत अभी ऊपर ज़िक्र किया गया ? वह आदर्श यह है कि मनसा, वाचा, कर्मणा हमसे कोई ऐसी बात न बन आवे कि जिससे कुल मालिक राधा-स्वामी दयाल या गुरू महाराज की नाराज़गी हो यानी जो तजवीज़ें हम सोचें या अमल में लावें वे ऐसी हों कि जिनसे हमारे ऊपर हुज़ूर राधा-स्वामी दयाल व गुरू महाराज की प्रसन्नता यानी ख़ुशनूदी हो।

वचन (५९)

मरते वक़्त के कलाम ।

यहाँ पर दुनिया के चन्द मशहूर व मारूफ़ (प्रसिद्ध) असहाब के कलाम (वचन) लिखे जाते हैं जो उन्होंने दुनिया से रुख़सत होते वक़्त अपनी ज़बान से फ़र्मायें। उनके पढ़ने से मालूम होता है कि जो काम इन्सान ज़िन्दगी भर करता रहता है और जिन ख़्वाहिशात व

जज़्बात का उसके दिल पर अक्सर ग़ल्बा रहता है उनका असर आख़िरी वक़्त में ज़ोर के साथ प्रकट होता है।

सर हेनरी हैविलॉक, जिन्होंने ग़दर सन् १८५७ के दिनों में इस क़दर नाम पैदा किया, कानपुर का मुहासिरा छुड़ाने के बाद लखनऊ में घिर गये। आप छः हफ़्ते तक मुहासिरे में रहे और मुहासिरा उठने के चन्द ही दिनों बाद मर गये। मरते वक़्त आपने फ़र्माया—"मैं ख़ुशी व इत्मीनान के साथ मरता हूँ। देखो, एक ईसाई किस तरह मरा करता है।" इसके बाद आपने जनरल औट्रम से मुख़ातिब होकर कहा—"मैंने चालीस बरस से अपनी ज़िन्दगी का ऐसा दस्तूरुल्अमल (दिन-चर्या) बनाया कि जब मेरे कूच का वक़्त आवे मैं बिला किसी ख़ौफ़ के मौत का मुक़ाबिला कर सकूँ लेकिन मेरी समझ में नहीं आता कि गुज़श्ता चन्द दिनों से मुझपर हालते बुख़ार क्यों तारी (छाई हुई) है। मेरे मन और जिस्म दोनों के अन्दर क्यों बेचैनी पैदा हो रही है? क्या सोते, क्या जागते हर लमहे (पल) मुझे क़त्ल किये हुए लोगों की ख़ून से लिथड़ी हुई और निहायत किरीह (घृणित) लाशें दिखलाई देती हैं। काश मैंने बेक़ुसूरों और कमज़ोरों को क़त्ल न किया होता।" बरख़िलाफ़ इसके एक ख़ातून ने, जिसका नाम मारगेरेट टिल था और जो मशहूर व मारूफ़ क्वेकर ईसाई जार्ज फ़ॉक्स की अहलेख़ाना (स्त्री) थी, मरते वक़्त कहा—'मैं अमन में हूँ।' [क्वेकर ईसाइयों का एक फ़िर्क़ा है जिसमें लोग निहायत सच्चे व ईमानदार होते हैं और क़स्म खाने से इस क़दर परहेज़ करते हैं कि उनके बीस. लीडर अदालात में क़सम न खाने के जुर्म में सज़ायाब हुए

और आख़िर वृटिश गवर्नमेन्ट ने इस फ़िर्क़े को क़स्म उठाने के क़ानून से मुस्तस्ना (वरी) कर दिया ।] इसी तरह सर रिचर्ड ग्रैनिवल ने, जिन्हों ने सन् १५६१ ई० में अपने अकेले जहाज़ से हस्पानिया के एक सालिम जंगी वेड़े का चौदह घंटे तक मुक़ाविला किया, मरते वक़्त पुकार कर कहा—"मैं रिचर्ड ग्रैनिवल निहायत ख़ुशी और अमन के साथ दुनिया से रवाना होता हूँ क्योंकि मैंने अपनी ज़िन्दगी एक सच्चे सिपाही की तरह अपने मुल्क, अपनी मालिका, अपने मज़हव और इज़्ज़त के लिये लड़ते हुए ख़त्म की है और मेरी रूह ख़ुशी से जिस्म से जुदा होती है और मैं पीछे मुस्तक़िल क़ायम रहने वाली नामवरी छोड़ कर मरता हूँ कि मैंने एक वहादुर की तरह अपना फ़र्ज़ अदा किया ।" सत्सङ्गी भाई सर हेनरी हेविलॉक के अलफ़ाज़ का मारगेरेट टिल व सर रिचर्ड ग्रैनिवल के कलमात (वाक्यों) से मुक़ाविला करें और अपने लिये ख़ुद नतीजा निकालें ।

महात्मा वुद्ध ने शरीर छोड़ने से पहले फ़र्माया—"प्यारे भाइयो ! मेरी यह नसीहत ग़ौर से सुनो, संसार का जिस क़दर मायिक सामान है उस सवके अन्दर नाशमानता धरी हुई है लेकिन सत्य का कभी नाश नहीं होता ।" मिस्टर जान वाल्कट से, जो एक मशहूर शायर थे, मरते वक़्त एक दोस्त ने, जिनका नाम मिस्टर टेलर था, दर्याफ़्त किया—"ऐ दोस्त ! क्या मैं इस वक़्त आपकी कोई ख़िदमत कर सकता हूँ ?" वाल्कट ने जवाव दिया—"मेरी जवानी मुझे वापिस दिला दो ।" ज़ाहिर है कि चूँकि महात्मा वुद्ध की तवज्जुह ज़िन्दगी भर सत्य की तरफ़ रही और उन्हें संसार हमेशा नाशवान् दिखाई दिया इसलिये आख़िरी वक़्त में भी

उसी के मुतअल्लिक़ उपदेश उनकी ज़बान पर आया। बरख़िलाफ़ इसके जान वाल्कट जवानी के प्रेमी रहे इसलिये दुबारा जवान बनने की ख़्वाहिश के मुतअल्लिक़ कलमात ज़बान पर लाये।

कार्डिनल मज़ारन मरते वक़्त कहने लगे—"अफ़सोस! मेरे दोस्त! मुझे यह सब सामान छोड़ना पड़ता है। ख़ुदा हाफ़िज़ (मालिक रक्षा करे) ऐ मेरी तस्वीरो! मैं तुम्हारे साथ इसक़दर प्रेम करता रहा और तुमपर मैंने इसक़दर रुपया सर्फ़ किया।" ऐसे ही महमूद ग़ज़नवी की ज़बान से इसी क़िस्म के कलमात निकले—"अफ़सोस! सद अफ़सोस! इन ख़ज़ानों के हासिल करने के लिये मैंने कितने ख़तरे और कितनी जिस्मानी व दिमाग़ी परेशानियाँ बर्दाश्त कीं और उनकी हिफ़ाज़त के लिये किसक़दर दर्दसरी (तकलीफ़) उठाई लेकिन अब मुझे ये सब ख़ज़ाने यहीं छोड़ने पड़ते हैं।" सिराजुद्दौला जब मरने लगा तो उसने अपने क़ातिल (क़त्ल करने वाले) से कहा—"हुसेन कुली! मैंने तुम्हें क़त्ल किया और इस गुनाह के पादाश (फल) में मेरा क़त्ल होना भी ज़रूरी है। बस करो, बस करो, हुसेन कुली! तेरा एवज़ अब लिया जाता है।" सिराजुद्दौला ने हुसेन कुली को किसी वक़्त क़त्ल कराया था और अब ख़ुद क़त्ल होते वक़्त उसे अपने गुनाह की याद आई और इसलिये ये सब कलमात उसके मुँह से निकले। बरख़िलाफ़ इस क़िस्म के कलमात के मिस मारगेरेट नोबिल ने, जिनका स्वामी विवेकानन्द साहब ने सिस्टर निवेदिता नाम रक्खा था, मरते वक़्त फ़र्माया—"मेरी नाव डूब रही है लेकिन सूरज ज़रूर उदय होगा और मुझे दर्शन देगा।"

———

बचन (६०)

मज़हब का नाम किस तरह बदनाम हुआ ?

हिन्दुस्तान के प्राचीन ग्रन्थों का मुताला करने से मालूम होता है कि इस मुल्क में एक ऐसा ज़माना आया जबकि यहाँ आला दर्जे के ऋषि प्रकट हुए जिन्होंने बजाय पितृपूजा और देवताओं की परस्तिश के निर्गुण ब्रह्म की उपासना का उपदेश फ़र्माया। वह ज़माना हिन्दुस्तान के लिये, क्या बलिहाज़ परमार्थ और क्या बलिहाज़ स्वार्थ के, ज़बरदस्त तरक़्क़ी का था। शास्त्रों में निहायत दुरुस्त लिखा है कि हर इन्सान की बुद्धि निर्गुण की उपासना करने के लायक़ नहीं है। चुनाँचे ऐसे लोगों के गुज़ारे के लिये पूर्वजों ने सगुण ब्रह्म की उपासना का तरीक़ा जारी किया और उनको ध्यान जमाने में सहूलियत देने के लिये पत्थर या धातु की मूर्तियाँ बनाई। चुनाँचे एक अर्से तक मूर्तियों का दर्शन करके लोग अन्तर में विष्णु भगवान् का ध्यान करते थे जिससे उनको बहुत कुछ निर्मलता और रूहानी ताक़त हासिल होती थी और औसत दर्जे की बुद्धि वाले लोगों का इस तरीक़े से काफ़ी अच्छा गुज़ारा होजाता था लेकिन बिगड़ते बिगड़ते यह सगुण की उपासना मूर्तिपूजा में बदल गई और खुदमतलब या मूर्ख श्रद्धावान् लोगों ने क़िस्म क़िस्म की देवताओं की मूर्तियाँ बनाकर अपना और दूसरे भोले भक्तों की हानि करना शुरू किया लेकिन जब मूर्तियों की तादाद बेशुमार होगई और हर शहर और क़स्बे बल्कि गली कूचे में अलग अलग मन्दिर क़ायम होगये उस वक़्त क़ुदरतन् इन खुदमतलबों के रोज़गार में फ़र्क़ आने लगा

और उनमें आपस में मुक़ाबिला होगया। चुनाँचे हर शख़्स की यह कोशिश होने लगी कि नये क़िस्म का ढोंग या पाखण्ड रचकर अपने मन्दिर को शोहरत दे ताकि ज़्यादा से ज़्यादा तादाद में लोग पूजा के लिये आवें। बाज़ कामी पुरुषों ने वेश्याओं के नाच मुजरे का इन्तिज़ाम किया, बाज़ों ने आला क़िस्म के खाने और मिठाइयाँ बाँटने की युक्ति निकाली और बाज़ चालाक लोगों ने तरह तरह के करिश्मे और करामात मशहूर करने शुरू किये। इस क़िस्म में सोमनाथ के मन्दिर की असलियत क़ाबिले ज़िक्र है। इस मन्दिर की निस्बत यह शोहरत थी कि यहाँ की मूर्ति का सच्ची श्रद्धा से दर्शन करने पर इन्सान की हर लाइलाज बीमारी दूर होजाती है। इस मन्दिर में शिवलिङ्ग की मूर्ति स्थापित की गई और यह मशहूर किया गया कि यह मूर्ति चन्द्रमा के इष्ट देवता की है और इसीलिये इसका नाम 'सोमनाथ' यानी चन्द्रमा का नाथ यानी इष्ट रक्खा गया। पुजारी लोग अवाम को दिखलाते थे कि चन्द्रमा इस मन्दिर में पूजा के लिये आता है और पूर्णमासी के दिन समुद्र का जल चढ़ाता है हालाँकि असल बात यह थी कि यह मूर्ति समुद्र के किनारे ऐसे मुक़ाम पर स्थापित की गई थी कि जहाँ तक पूर्ण-मासी के दिन ज्वार (Tide) का पानी चढ़ आता था और चूँकि अवाम को यह मालूम न था कि समुद्र का पानी ज्वार की वजह से चढ़ता है और ज्वार का ज़ोर पूर्णमासी के दिन सबसे ज़्यादा होता है इसलिये स्वभावतः वे धोखे में आकर यक़ीन कर लेते थे कि खुद चन्द्रमा मूर्ति पर जल चढ़ाता है। इन सीधे सादे लोगों के लिये इसी क़दर चमत्कार काफ़ी था और इसी एक चाल के ज़रिये पुजारियों ने करोड़ों रुपये की मालियत के

जवाहिरात हासिल किये जो अन्त में महमूद ग़ज़नवी के हाथ आये।

ज़ाहिर है कि इस क़िस्म की मूर्तिपूजा या मक्कारियों का जाल बिछाने के लिये सगुण ब्रह्म की उपासना का रिवाज क़ायम नहीं किया गया था। खुदमतलबों ने अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिये सगुण ब्रह्म और उसकी उपासना दोनों को बदनाम किया और धोखे के जाल में आने वाले भोले भक्तों का स्वार्थी व परमार्थी दोनों तरह का नुक़सान किया। इसके बाद एक ऐसा ज़माना आया जबकि सतगुरुभक्ति का रिवाज क़ायम हुआ यानी लोगों की तवज्जुह अवतारों, पैग़म्बरों व औलियाओं की सेवा व भक्ति की जानिब मुख़ातिब हुई। हर कोई जानता है कि जिस महापुरुष को अपने मन व इन्द्रियों पर पूरा क़ाबू हासिल है और जिसकी सुरत यानी आत्मशक्ति जगी है और जिसको सच्चे मालिक से वस्ल हासिल है उसकी ख़िदमत में हाज़िर रहने वाले जीवों को किसक़दर फ़ैज़ व फ़ायदा पहुँच सकता है। जिन खुशक़िस्मत प्रेमीजनों को ऐसे महापुरुषों के सङ्ग व सोहबत का मौक़ा मिला वे उनकी उच्च गति की निःसन्देह परख पहचान हासिल होने पर उनके दिल व जान से मोतक़िद हो गये और प्रेमी भक्तों की तरह उनके चरणों में रहने लगे लेकिन स्वार्थी यानी खुदमतलबों ने यहाँ भी अपना दाव खेला और तरह तरह के स्वाँग बनाकर भोले भक्तों को धोखा देना शुरू किया। कोई जटाएँ बढ़ाकर, कोई जिस्म पर विभूति रमाकर और कोई चरस वग़ैरह की मदद से शरीर को शिथिल करके बैठ गया और कोई झाड़ फूँक व गण्डे तावीज़ की मदद से भोले भाले लोगों की मुरादें पूरी करने लगा। इन तरीक़ों से भोले भक्तों की दौलत खींचकर ये लोभ व लालच के ग़ुलाम बेरोक मन

व इन्द्रियों की लहरों में बहने लगे और उनके जानशीनों ने जाल व मकर के इन्तिज़ाम को ज़्यादा तरक़्क़ी देकर बड़ी बड़ी जायदादें पैदा करलीं और शाहाना ठाठ के साथ ज़िन्दगी बसर करने लगे। अँग्रेज़ी तालीम के फैलने से अपने नफ़े नुक़्सान की तमीज़ और नेक व बद का फ़र्क़ देखने की क़ाबिलियत पैदा होने पर क़ुदरतन् समझदार लोगों के दिल में गुरुभक्ति की जानिब वैसी ही नफ़रत पैदा हो गई जैसी कि मूर्तिपूजा की जानिब हुई थी। मगर विचारना चाहिये कि इसमें सगुण ब्रह्म की उपासना के तरीक़ या सतगुरुभक्ति के उसूल का क्या क़ुसूर है ? क़ुसूर दरअसल उन ख़ुदमतलब व दग़ाबाज़ पुजारियों व मुजाविरों का है जिन्होंने स्वार्थसिद्धि की ग़रज़ से भक्ति के आला तरीक़ों को मरोड़कर इस तरह ज़लील किया।

दया से हम लोगों के ज़िम्मे यह सेवा सुपुर्द हुई है कि अपनी स्वच्छ रहनी गहनी और निर्मल भक्ति की ज़िन्दगी से साबित करके दिखलावें कि सतगुरुभक्ति की तालीम निहायत आला परमार्थी उसूलों की बुनियाद पर क़ायम है और इसी के प्रचार व रिवाज से दुनिया की मौजूदा तकलीफ़ें दूर हो सकती हैं।

राधास्वामी सहाय ।

सत्सङ्ग के उपदेश

भाग दूसरा ।

शुद्धिपत्र ।

पृष्ठ	पङ्क्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६	१२	किया ? था	किया था ?
१५	४	बरसेर	बरसरे
१६	२१	शामिलहाल	शामिले हाल
३६	४	मुदा	मुदआ
३६	११	अपर्ण	अर्पण
३६	२३	जलावेगा ।	ले जावेगा ।
४७	२	क्षात्रविद्या	क्षत्रविद्या
४७	१७	वग़ैरह	वग़ैरह ।
५३	१५	धरा	धार
५५	१२	'सन्त सतगुरु' वक्त	'सन्त सतगुरु वक्त'
५६	१	तज्रुरबा	तजरुबा
५६	१५	खींच	खैंच
५७	६	जंग का	जंग की
५७	२२	चरणों	चरणों
५८	१४	चरणों की	चरणों के

पृष्ठ	पङ्क्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५८	१५	सर्वाङ्ग	सर्वाङ्ग से
६२	६	हालातों	हालतों
६३	१३	जिसमें	जिनमें
६६	१३	बच	बच्चे
७०	३	इज़फ़ा	इज़ाफ़ा
७०	४	जव	जब
७०	६	कैं	के
७०	८	इस सब मुसीबत	इन सब मुसीबतों
७१	३	तब्दील	तब्दीली
७१	७	वनया	बनाया
७७	१२	दयाल बाग़	दयालबाग़
७८	३	तवज्जुह	तवज्जुह
८०	२	शुबह	शुबह
८३	८	कमज़ागी	कमज़ोरी
८४	१३	ववज्जुह	तवज्जुह
८४	१७	हैं	है
८५	५	बातमीज़सज्जन	बातमीज़ सज्जन
९६	२२	वरबाद	बरबाद
९९	७	रखती है	रखती हैं
१०१	२०	अध्यात्मिक	आध्यात्मिक
१०९	१७	निकला	निकाला
१२१	६	वायलर	ब्वायलर
१२२	७	जा सकता	सकता
१२४	८	अध्यात्मिक	आध्यात्मिक
१२४	८	अमारी	अमीरी

पृष्ठ	पङ्क्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१२४	१४	तवज्जुह	तवज्जुह
१२५	१६	जाती है	जाती हैं
१४६	१०	वाक़ेआत	वाक़आत
१४७	११	जानलता	जान लेता
१४६	३	रोशन है	रौशन हैं
१५०	१६	पाँचवा	पाँचवाँ
१५३	३	सकते है	सकते हैं
१५५	१८	रखती है	रखती हैं
१५७	१५	मुइनुद्दीन	मुईनुद्दीन
१५६	७	क़सूर	कुसूर
१६४	१३	हंवे	हैं वे
१६६	४	गोता	ग़ोता
१६६	६	तक़रारी	तक़रीरी
१६८	१	वआशानी	वआसानी
१७२	४	मज़बूर	मजबूर
१७३	१६	हस्यो हैसियत	हस्बे हैसियत
१७३	१७	हस्योक़ाबिलियत	हस्बे क़ाबिलियत
१७४	२०	वजह	वजह
१७५	८	मुश्किलें	मुश्किलें
१७६	१८	पाक हस्ती पवित्र व्यक्ति है।	पाक हस्ती है
१७६	१२	चेतन्य	चैतन्य
१८२	११	पहुँचता हैं	पहुँचता है
१८४	१२	या। यह	या यह
१८७	८	भाइयों को	भाई

पृष्ठ	पङ्क्ति	अशुद्धि	शुद्धि
१८६	३	वाज़ह	वाज़ह
१६१	२१	जानिव	जानिव
१६३	८	किया हैं	किया है
१६५	११	। और तअज्जुव	। तअज्जुब
१६६	५	हो जाय	हो जायँ
१६६	५	वाज़ह	वाज़ह
१६७	६	ख़िलाफ़े	ख़िलाफ़
१६६	६	गुरुभक्ति से	गुरुभक्ति के
१६६	१२	वयान	वयान
२०१	१३	ले जात हैं,	ले जाते हैं,
२०३	१०	तसलमि	तसलीम
२०४	२०	अप्राप्त	अमात
२०५	१६	हक़ कहाँ तक	कहाँ तक
२०६	५	फ़ार्मावें	फ़र्मावें
२१०	२०	मौक़ों	मौक़ों
२११	१	पैदा	पैदा
२१२	६	हालातें	हालाते
२१३	४	पिता है	पिता हैं
२१४	२	उसपर	उनपर
२१७	१३	वाले	वाली
२१७	१७	वाज़ह	वाज़ह
२२६	२२	अदालात	अदालत

फ़िहरिस्त पुस्तकों की

जो स्टोरकीपर राधास्वामी सेन्ट्रल सत्संग दयालबाग़, आगरा, से मिल सकती हैं।
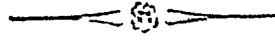
नाम पुस्तक	भाषा	क़ीमत
छन्दबन्द		
१—राधास्वामी बानी-संग्रह भाग १	हिन्दी	१॥)
२—राधास्वामी बानी-संग्रह भाग २	,,	२)
३—प्रेम बिलास भाग १-४	,,	१॥)
४—मुक्तावली	,,	।)
बार्तिक		
५—डिस्कोर्सेज़ ऑन राधास्वामी फ़ेथ	अँग्रेज़ी	२॥)
६—दयालबाग़ [सचित्र]	,,	॥।)
७—प्रेम समाचार	हिन्दी	॥)
८—अमृत-बचन	,,	२॥)
९—अमृत-बचन	उर्दू	२)
१०—राधास्वामी मत दर्शन	हिन्दी, उर्दू, बंगला तिलं[illegible] तमिल फ़ी	॥)
११—जिज्ञासा नंबर १	हिन्दी, उर्दू, बँगला, तिलगू व तमिल फ़ी	॥)
१२—जतन-प्रकाश	हिन्दी	॥)
१३—सत्संग के उपदेश भाग १	,,	१॥)
१४—सत्संग के उपदेश भाग २	,,	१॥)
१५—शरण आश्रम का सपूत [नाटक]	उर्दू	।)
१६—स्वराज्य [सचित्र नाटक]	हिन्दी, उर्दू फ़ी	॥।)